दैनिक जागरण

हठ आंतरिक शांति को भंग करता है

शिक्षकों की योग्यता

शिक्षक दिवस के अवसर पर परंपरा के अनुसार समाज और देश निर्माण में शिक्षकों की महत्ता को रेखांकित करने के साथ जहां राष्ट्रपति ने देश के 82 शिक्षकों को सम्मानित किया, वहीं प्रधानमंत्री ने उनसे भेंट की। इस दौरान उन्होंने शिक्षकों से छात्रों की ड्रग की लत और उनके स्क्रीन टाइम पर नजर रखने का आग्रह किया। ऐसा किया जाना समय की मांग है, क्योंकि छात्र नशे की चपेट में तो आ ही रहे हैं, वे मोबाइल के भी लती होते जा रहे हैं। इस लत के लिए सोशल मीडिया कहलाने वाले डिजिटल प्लेटफार्म भी जिम्मेदार हैं। यह सरकार को भी देखना होगा कि छात्र मोबाइल की लत का शिकार होने से कैसे बचें? इसी के साथ सरकार को इस पर भी ध्यान देना होगा कि योग्य शिक्षक कैसे तैयार हों? इसके लिए शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम की समीक्षा की जानी चाहिए। यह देखा जाना समय की मांग है कि शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान वास्तव में योग्य शिक्षक तैयार कर पा रहे हैं या नहीं? इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि जिला स्तर पर डायट अर्थात डिस्ट्रिक्ट इंस्टीट्यूट आफ एजुकेशन और ट्रेनिंग संस्थान शिक्षकों को प्रशिक्षित कर रहे हैं और इन संस्थानों की निगरानी राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद की ओर से की जा रही है, क्योंकि यह बार-बार सामने आ रहा है कि शिक्षकों के प्रशिक्षण का काम सही तरह नहीं हो पा रहा है। बेहतर शिक्षक तब तैयार होंगे, जब उन्हें प्रशिक्षित करने वाले ट्रेनर योग्य होने के साथ अपने दायित्व के प्रति समर्पित होंगे।

एक समय था, जब शिक्षण के प्रति रुचि रखने वाले ही शिक्षक बनने के लिए आगे आते थे, लेकिन आज ऐसा नहीं है। आज जब बड़ी संख्या में शिक्षकों की भर्ती हो रही है और किसी तरह सरकारी नौकरी पाने की चाह रखने वाले भी शिक्षक बन रहे हैं, तब उनकी योग्यता का ध्यान रखा ही जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति तभी हो पाएगी, जब शिक्षकों को प्रशिक्षित करने वाले संस्थान उत्तम कोटि के होंगे। यह ठीक नहीं कि ये संस्थान संसाधनों के साथ योग्य प्रशिक्षकों के अभाव का सामना कर रहे हैं। आखिर जब शिक्षक ही योग्य और सक्षम नहीं होंगे, तब वे भावी पीढ़ी को निखारने का काम कैसे करेंगे? ध्यान रहे कि भावी पीढ़ी तैयार करने में सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व का निर्वाह अध्यापकों को ही करना है। समाज में नैतिकता और मानवीय मूल्यों की स्वीकार्यता अध्यापकों के अनुकरणीय आचरण से ही आएगी। यह सही है कि नई शिक्षा नीति के तहत शिक्षकों की गुणवत्ता सुधारने पर विशेष बल दिया गया है, लेकिन अभी यह काम कागजों पर ही अधिक दिखता है। चूंकि शिक्षा समवर्ती सूची का विषय है, इसलिए राज्यों को भी योग्य शिक्षकों को तैयार करने के लिए सक्रिय होना होगा।

साइबर ठगी पर प्रहार

ऐसा पहली बार हुआ है कि उत्तराखंड में पुलिस ने साइबर ठगों की सप्लाई चेन पर एक साथ बड़ी कार्रवाई की और चौंकाने वाले खुलासे हुए। संदिग्ध खातों की जिस तरह परतें खुली हैं, वह हतप्रभ करने वाला है। यह कार्रवाई न सिर्फ ठगों पर कड़ा प्रहार है, अपितु उन लोगों के लिए भी सबक है, जो चंद रुपयों के खातिर ठगी के लिए अपना खाता, सिम, चेकबुक और एटीएम कार्ड उपलब्ध करा रहे हैं। साइबर ठगों के जाल में फंसा व्यक्ति जीवनभर की कमाई पलभर में गंवा देता है। ठग ऐसा सिस्टम विकसित कर देते हैं कि पीड़ित सब-कुछ सच मान बैठता है। पुलिस की इस कार्रवाई से आमजन का भरोसा बढ़ेगा। जाने-अनजाने जो ठगों के जाल में फंस गए थे, उनका विश्वास भी कायम होगा। इस अभियान में 60 से अधिक बैंक अधिकारियों और कर्मचारियों की भूमिका का संदिग्ध मिलना कई सवाल खड़े करता है। बैंक को जमापूंजी को सुरक्षित रखने का बड़ा माध्यम माना जाता है, लेकिन यदि बैंक ही ठगी के केंद्र बन जाएं तो भरोसा टूट जाता है। यह सच है कि साइबर अपराध का जाल चुनौती बना हुआ है। इससे जुड़ी शिकायतों का आंकड़ा भी हजारों में पहुंच रहा है। ऐसे में सबसे पहले तो आमजन को सतर्कता बरतनी है, क्योंकि निर्भीक रहकर और जागरूक बनकर ही साइबर ठगी से मुकाबला किया जा सकता है। पुलिस को भी उन कड़ियों को जोड़ने की जरूरत है, जिनके माध्यम से साइबर ठगी की रकम बैंकिंग सिस्टम तक पहुंचती और बाद में निकाल ली जाती है।

> निर्भीक रहकर और जागरूक बनकर साइबर ठगी से बचा जा सकता है

आर्थिक प्रगति पर अनावश्यक सवाल

संजय गुप्त

यह मानने के अच्छे-भले कारण हैं कि जीडीपी के आंकड़ों पर सवाल उठा रहे रिटायर्ड नौकरशाह अपनी कुंठा निकाल रहे हैं

पिछले दिनों इस वित्त वर्ष की पहली तिमाही के जीडीपी के आंकड़े सामने आने पर सरकार के साथ अनेक अर्थशास्त्रियों ने प्रसन्नता व्यक्त की। जीडीपी में 7.8 की वृद्धि के साथ ही भारत एक बार फिर विश्व की सबसे तेज बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था के रूप में सामने आया, लेकिन इन आंकड़ों के जारी होते ही कुछ रिटायर्ड नौकरशाहों और खासकर पूर्व वित्त सचिव सुभाष चंद्र गर्ग ने इन आंकड़ों को गलत बताकर एक बखेड़ा खड़ा कर दिया। जीडीपी के ताजा आंकड़ों के अनुसार सेवा, मैन्यूफैक्चरिंग, कंस्ट्रक्शन आदि क्षेत्रों में तेज वृद्धि हो रही है। उपभोग में वृद्धि भी जीडीपी बढ़त में सहायक बनी। यह एक सामान्य समझ है कि आर्थिकी को बढ़ाने में आज जो क्षेत्र सहायक हों, जरूरी नहीं कि एक दशक बाद भी आर्थिकी उनके ही जरिये बढ़े। इसी कारण दस वर्ष के अंतराल पर उन क्षेत्रों की एक नई सूची जारी होती है, जिनके आधार पर जीडीपी का आकलन होता है। ऐसा पहली बार नहीं किया गया। आम तौर पर यह हर दस वर्ष में होता है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष भी इसे मान्यता देता है। यह हैरानी की बात है कि इस सामान्य सी बात को सेवानिवृत्त नौकरशाह न समझ पाएं और जीडीपी के आंकड़ों पर संशय जताएं। यह मानने के अच्छे-भले कारण हैं कि जीडीपी के आंकड़ों पर सवाल उठा रहे रिटायर्ड नौकरशाह अपनी कुंठा निकाल रहे हैं।

जीडीपी के आंकड़ों पर विदेश यात्रा पर गए प्रधानमंत्री मोदी ने एक पोस्ट के जरिये यह कहा था कि ये आंकड़े निराशावादियों के लिए झटका हैं। यह विपक्षी नेताओं और खासतौर पर राहुल गांधी पर कटाक्ष था, जो कुछ समय पहले अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप के भारतीय अर्थव्यवस्था के मृत होने के दावे का समर्थन कर रहे थे। पूर्व नौकरशाहों की ओर से जीडीपी के आंकड़ों पर सवाल उठाए जाने के बाद कांग्रेस मोदी सरकार पर टूट पड़ी और यह दावा करने लगी कि वास्तविक जीडीपी ग्रोथ तो 2.6 प्रतिशत ही है। यह आकलन बहुत ही हास्यास्पद है, क्योंकि देश में कोविड के बाद से जो प्रगति हुई है, वह जगजाहिर है। इस प्रगति को देखते हुए जीडीपी में सिर्फ 2.6 प्रतिशत की वृद्धि का दावा गले नहीं उतरता। जीडीपी के आंकड़े सही हैं, इसे रेखांकित करने के लिए विश्व बैंक के एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर नीलकंठ मिश्र सहित और भी अर्थशास्त्री सामने आए। उन्होंने तथ्यों के साथ सरकार के आंकड़ों को सही बताया। नीलकंठ मिश्र के अनुसार दो अलग-अलग सीरीज के जीडीपी के आंकड़ों की आपस में तुलना करना बुनियादी तौर पर गलत है। उनके अनुसार नई जीडीपी सीरीज में डाटा और कार्यप्रणाली, दोनों में सुधार किया गया है और संशोधित बेस-ईयर के आंकड़े नए अनुमानों से बहुत पहले ही सामने आ चुके थे। आखिर कोई इन आंकड़ों को कैसे झुठला सकता है कि अगस्त में कारों और एसयूवी की बिक्री में 35, दोपहिया वाहनों में 20 से अधिक और कमर्शियल वाहनों में 40 प्रतिशत से ज्यादा का उछाल आया। ध्यान रहे वाहन बिक्री के आंकड़े सरकार नहीं जुटाती। टैक्स कलेक्शन में मजबूती, लोन ग्रोथ में तेजी और निर्माण कार्य में निरंतर तेजी जैसे ठोस संकेतकों की भी अनदेखी नहीं की जा सकती। तथ्य यह भी है कि जीडीपी के आंकड़े सामने आने के बाद जापानी रेटिंग एजेंसी (जेआरसी) ने भारत की सावरेन रेटिंग को ए- घोषित किया, जो इसके पहले बीबीबी+ थी। जेआरसी सहित अन्य रेटिंग एजेंसियां भारत सहित तमाम देशों की रेटिंग जारी करती है। अन्य अनेक कारणों के साथ इस रेटिंग से कोई देश विदेशी निवेश आकर्षित करने में सफल रहता है।

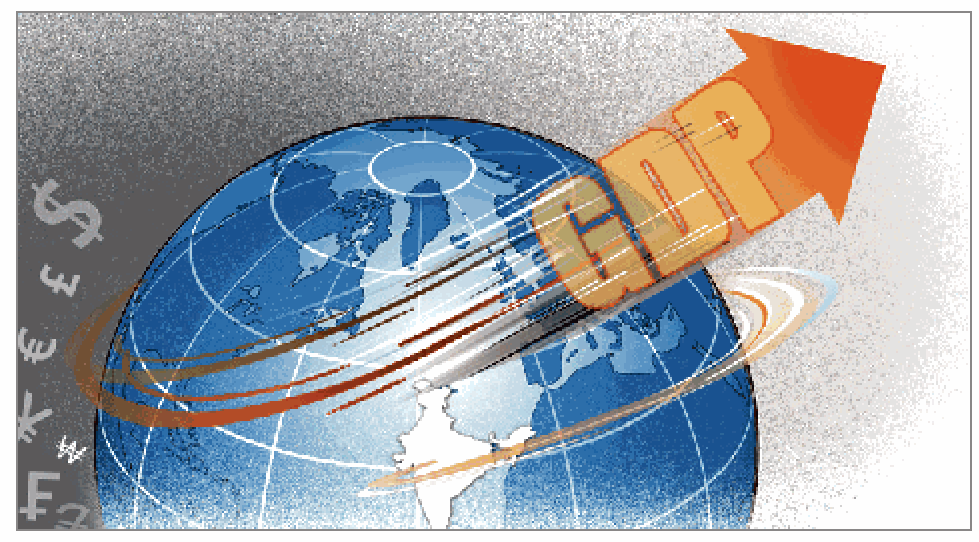

अवधेश राजपूत

जेआरसी वैश्विक स्तर पर एक विश्वसनीय एजेंसी है और किसी देश की ए- रेटिंग इस बात को दर्शाती है कि वित्तीय जिम्मेदारी निभाने को लेकर उस पर भरोसा किया जा सकता है। यह भी ध्यान रहे कि इससे पहले पिछले महीने दो अन्य वैश्विक रेटिंग एजेंसियां एसएंडपी और फिच भी भारतीय अर्थव्यवस्था की मजबूती रेखांकित कर चुकी हैं। दोनों एजेंसियों ने भारत की नीतिगत स्थिरता और इंफ्रास्ट्रक्चर में भारी खर्च को देखते हुए भारत को निवेश के मामले में उपयुक्त स्थान करार दिया था। जापानी क्रेडिट रेटिंग एजेंसी का भारत की रेटिंग को बढ़ाकर ए- करना मामूली बात नहीं। यह एक छलांग है। भारत 1988 के बाद से कभी भी 'ए' श्रेणी में नहीं रहा। 1990-91 में भारत भुगतान संतुलन के संकट में फंस गया था, जिससे देश की आर्थिक साख को नुकसान पहुंचा था। इस साख को वापस पाने में देश को लंबा समय लगा। अब इस साख को और मजबूत किया जाना चाहिए। किसी रेटिंग एजेंसी की ओर से ए- रेटिंग मिलने का मतलब है कि वैश्विक निवेशकों का भारत पर भरोसा काफी बढ़ गया है। इससे देश में अधिक विदेशी निवेश आने की संभावना बढ़ेगी। इसके नतीजे में रोजगार के अवसर बढ़ेंगे। इस मजबूत रेटिंग की वजह से भारत सरकार और भारतीय कंपनियों को विदेश से सस्ते ब्याज दरों पर कर्ज या फंड मिल सकेगा।

रेटिंग में सुधार के साथ तथ्य यह भी है कि भारतीय बैंकों का एनपीए घटा है और अब यह दो प्रतिशत से नीचे है। इसी तरह राजकोषीय घाटा पिछले वर्ष के 4.7 से घटकर 4.4 प्रतिशत पर आ गया है। जीडीपी के मुकाबले केंद्र सरकार का कर्ज भी लगभग 56.1 प्रतिशत है, जिसके आगे और कम होने की उम्मीद है। सरकार ने जिस तरह गैर-जरूरी सब्सिडी में कटौती करके बुनियादी ढांचे पर निवेश बढ़ाया है, वह इसका संकेत है कि वित्तीय संसाधनों का प्रबंधन सही तरह किया जा रहा है। अगर सरकार कर्ज और खर्चों को नियंत्रित रखे तो वैश्विक एजेंसियां भारत की रेटिंग में और सुधार कर सकती हैं। अब जब भारत की रेटिंग सुधर रही है, तब किसी की ओर से आर्थिकी में गिरावट आने की बातें करना विचित्र ही है। जिन नौकरशाहों और कांग्रेस नेताओं ने जीडीपी के आंकड़ों को लेकर नकारात्मक माहौल बनाया, उन्हें यह समझना चाहिए कि रेटिंग एजेंसियां कई पैमानों के आधार पर अपनी रेटिंग देती हैं। क्या पूर्व नौकरशाह और कांग्रेस नेता आर्थिक मामलों में खुद को रेटिंग एजेंसियों से अधिक जानकार साबित करना चाहते हैं? साफ है कि यह कहना उनकी खीझ ही है कि सरकार ने आंकड़ों को तोड़ा-मरोड़ा और कम आर्थिक वृद्धि को बढ़ा-चढ़ा कर दिखाया।

response@jagran.com

माफी मांगने और माफ करने के फायदे

हास्य-व्यंग्य

केदार शर्मा

बड़े आदमी को दूसरों को क्षमा करते रहना चाहिए। आखिर बड़ा होने का फायदा भी तो कुछ होना चाहिए

जब जंतर-मंतर पर हुए प्रदर्शन के सिलसिले में दर्ज एफआइआर वापस लेने का समाचार वायरल हुआ, नत्थू खुशी से उछल पड़ा। उसे लगा कि न्यायालय की दरियादिली की भी कोई सीमा नहीं, वरना संसद भवन के भीतर घुसने के प्रयास में उसने कौन-सी कसर छोड़ी थी। विरोध की आड़ में उसकी ज्ञानेंद्रियों और कर्मेंद्रियों ने अपनी भड़ास निकालने में भी कोई कमी नहीं रखी थी। अपराध करो और मामला बिगड़े तो माफी मांगने में पीछे मत रहो। नत्थू किसी शायर की इन पंक्तियों का मुरीद है, 'जिंदगी को मैंने यूं आसान कर लिया, किसी से माफी मांग ली और किसी को माफ कर दिया।'

नत्थू ने इस माफी-दर्शन से बहुत कुछ सीखा है। सबको माफ करके और सबसे माफी मांग कर साल में एक बार हिसाब बराबर करो, फिर साल भर फ्री। अगले साल फिर हिसाब बराबर कर लेंगे। इसलिए नत्थू अब सबको माफ करने लगा है। उसके पास कोई दूसरा उपाय भी नहीं है। किस-किस से पंगा ले? वह अगले के माफी मांगने का भी इंतजार नहीं करता। उसका मानना है कि नुकसान पहुंचाने वाले को या तो सबक सिखाओ या माफ कर दो। दूसरा विकल्प ज्यादा सुरक्षित है। पत्नी के मामले में तो यह विकल्प अति सुरक्षित है। माफी मिलेगी या नहीं, यह पूरी तरह अगले की मर्जी पर निर्भर है। यानी माफी मांगना आपके हाथ में है, पर माफी पाना नहीं।

नत्थू का मानना है कि माफ करने के लिए बड़ा दिल चाहिए। तभी तो संस्कृत में कहा गया है, 'क्षमा वीरस्य भूषणम्,' लेकिन आज के जमाने में इतना वीर होना भी आसान नहीं। किसी को माफ करना भी बड़ा जोखिम का काम है। पता नहीं सामने वाला आपकी क्षमा को आपकी कमजोरी समझकर अगली बार कितना बड़ा अपराध कर बैठे। हां, माफी मांग लेना जोखिम रहित है।

रहीमदास जी ने भी कहा है, 'क्षमा बड़न को चाहिए, छोटन को अपराध।' नत्थू को इस दोहे में भी बड़ी सुविधा दिखाई देती है। उसका कहना है कि बड़े आदमी को क्षमा करते रहना चाहिए। आखिर बड़ा होने का फायदा भी तो कुछ होना चाहिए। मान लीजिए किसी को अपराध करना ही है। उसने पूरी योजना बना ली है। अब अपराध होना तय ही है। अब बड़े आदमी के पास दो ही रास्ते हैं-या तो अपराध होने से पहले रोक दे या अपराध होने के बाद माफ कर दे। पहला रास्ता मेहनत और जोखिम से भरा है, दूसरा बड़प्पन दिखाने का सुनहरा अवसर है।

नत्थू दूसरे रास्ते का समर्थक है। वह चाहता है कि क्षमा करने के मामले में कोई भगवान श्रीकृष्ण का रिकार्ड तोड़े। उन्होंने भी शिशुपाल के 99 अपराध क्षमा कर दिए थे। नत्थू को आश्चर्य होता है कि आज का इंसान इतना असहिष्णु क्यों हो गया है कि एक-दो अपराधों के बाद ही माफी मांगने वाले को घूरने लगता है। जबकि अब तो क्षमा करने की लिमिट बढ़नी चाहिए। सौ से हजार पर आ जानी चाहिए। हालांकि कवि ने चेतावनी भी दी है-'क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसके पास गरल हो,' लेकिन नत्थू का कहना है कि जिसके पास गरल नहीं है, उसके लिए क्षमा करना मजबूरी हो सकती है और जिसके पास गरल है, उसके लिए क्षमा करना प्रतिष्ठा का सवाल।

नत्थू ने अब इसका भी सरल समाधान खोज लिया है। वह कहता है कि दूसरों के अपराध माफ करते रहो और अपने अपराधों के लिए माफी मांगते रहो। इससे समाज में आपकी छवि भी अच्छी बनी रहेगी और काम भी चलता रहेगा।

response@jagran.com

ऊर्जा

तादात्म्य

तादात्म्य एक मानसिक क्रिया है, जिसमें किसी व्यक्ति, वस्तु या क्रियमाण कर्म के प्रति आत्मिक संबंध स्थापित किया जाता है। एकात्मता इसका प्राण तत्व है। इसके बिना अंतर्मन में न किसी के लिए संवेदना उत्पन्न होती है, न कार्य के प्रति पूर्ण समर्पण। दया, करुणा आदि मानवोचित भावों की उत्पत्ति इसी से होती है। यह सबके साथ मधुर संवाद एवं सद्व्यवहार का साधन बनकर सामाजिक समरसता में वृद्धि करता है। तादात्म्य सभी आध्यात्मिक क्रियाओं का आधार है, किंतु लौकिक व्यवहार में इसकी उपयोगिता कम नहीं। जीवन की हर क्रियाविधि का ताल्लुक तादात्म्य से होता है। जैसे आत्मा एवं परमात्मा के तादात्म्य के बिना आध्यात्मिक क्रिया सफल नहीं होती, वैसे ही कोई लौकिक क्रिया इसके अभाव में पूरे परिणाम नहीं देती। इसीलिए तादात्म्य गीता के ज्ञान, भक्ति एवं कर्म योग का प्राण है और भगवान श्रीराम की सभी मर्यादाओं की आधारभूमि।

श्रद्धा और विश्वास तादात्म्य स्थापित करने के मुख्य साधन हैं। आज बाह्य आकर्षण के प्रभाव से संबंध तो बना लिए जाते हैं, किंतु तादात्म्य के अभाव में उनमें न श्रद्धा होती है, न विश्वास। पारिवारिक-सामाजिक संबंधों में विघटन तथा एकल संस्कृति का विस्तार इसी का परिणाम है। इसीलिए रक्त संबंध भी दरक रहे हैं। जो कार्य बड़े-बड़े संसाधनों से सफल नहीं होते, तादात्म्य से अनायास ही सफल हो जाते हैं। तादात्म्य स्थापित करने में जड़-चेतन का भेद नहीं होना चाहिए। यदि चेतन प्राणियों संग तादात्म्य 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना को साकार करता है तो जड़ पदार्थों के साथ प्राकृतिक संसाधनों के प्रति प्रेम एवं मैत्री को जन्म देता है, जिससे उनके सदुपयोग का भाव जागृत होता है। सामाजिक सशक्तीकरण के लिए सबके साथ तादात्म्य जरूरी है।

डा. सत्यप्रकाश मिश्र

तथ्य-कथ्य

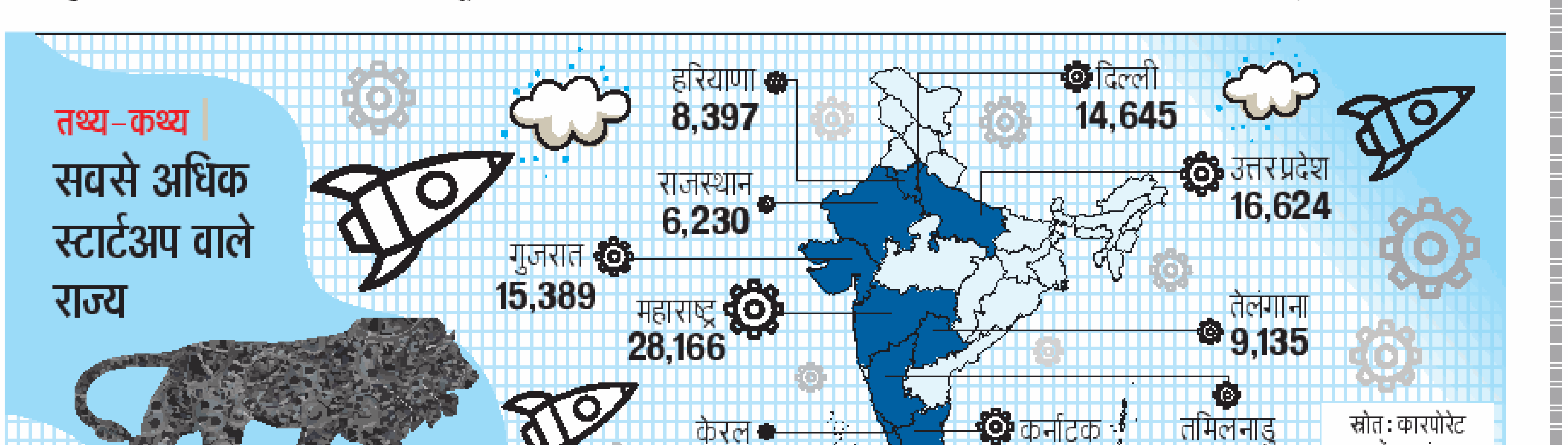

हाथी ने सिखाई मकान ठंडा रखने की युक्ति

मुकुल व्यास

विज्ञानियों ने हाथी की त्वचा से प्रेरित होकर ऐसी टाइलें विकसित की हैं, जो इमारतों को 20 घंटे तक ठंडा रखती हैं

दुनिया के विज्ञानी गर्म होते विश्व में इमारतों को ठंडा रखने वाले प्रभावी समाधान खोज रहे हैं। उनका ध्यान कुदरती तरीकों पर भी गया है। विज्ञानियों के एक दल ने हाथी की त्वचा से प्रेरित होकर ऐसी टाइलें विकसित की हैं, जो पानी को सोखकर और फैलाकर इमारतों को 20 घंटे तक ठंडा रखती हैं। इसके लिए किसी पंखे, कंप्रेसर या बिजली की जरूरत नहीं होती। हाथियों को पसीना नहीं आता, फिर भी वे अपनी झुर्रीदार स्लेटी त्वचा के सहारे अफ्रीका की भीषण गर्मी में जीवित रहते हैं। अब शोधकर्ताओं की एक टीम ने उसी तरीके को अपनाकर एक ऐसी टाइल बनाई है, जो इमारतों को ठंडा रखती है। हाथी गर्मी से निपटने के लिए प्राकृतिक तरीका अपनाते हैं। पसीना प्रकृति के सबसे असरदार कूलिंग सिस्टम में से एक है। जब त्वचा से नमी भाप बनकर उड़ती है तो यह चुपचाप और लगातार गर्मी को बाहर निकालती रहती है। हाथियों में यह क्षमता कभी विकसित नहीं हुई, फिर भी वे गर्मी को अच्छी तरह से झेल लेते हैं। इसका राज उनकी त्वचा में छिपा है। हाथियों की त्वचा में दरारों का एक नेटवर्क होता है, जो पानी को रोककर रखता है। जब वे खुद पर पानी छिड़कते हैं तो वह पानी वहीं रुका रहता है और धीरे-धीरे भाप बनकर उड़ता है, जिससे वे समय के साथ ठंडे होते रहते हैं।

यह रिसर्च गर्म होती दुनिया में इमारतों को ऊष्मा और तापमान नियंत्रण की दृष्टि से ज्यादा कुशल बनाने पर केंद्रित है। इस टाइल को पानी को सोखने, उसे रोके रखने और वाष्पीकरण के जरिये उसे धीरे-धीरे छोड़ने के लिए डिजाइन किया गया है। समय-समय पर पानी डालने पर टाइलों के नीचे का तापमान 32 डिग्री सेल्सियस पर स्थिर रहा, जबकि इन्हीं स्थितियों में टेस्ट किए गए दरार वाले कमर्शियल प्लास्टर (स्टको) का तापमान 42 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया। हम अपना अधिकांश समय घर के अंदर बिताते हैं। इमारतें कुल ऊर्जा का लगभग 40 प्रतिशत हिस्सा इस्तेमाल करती हैं। जिसमें से लगभग आधा हिस्सा हीटिंग, कूलिंग और वेंटिलेशन में खर्च होता है। पारंपरिक स्टको प्लास्टर की तुलना में हाथी की त्वचा से प्रेरित इमारत की बाहरी परत सतह के तापमान को माइनस 12.22 डिग्री सेल्सियस से माइनस 6.67 डिग्री सेल्सियस तक कम कर सकती है।

एक सामान्य एयर कंडीशनर घर के अंदर की गर्मी को बाहर फेंकता है, जबकि यह सिस्टम निष्क्रिय तरीके से कूलिंग करता है। यह इमारत की बाहरी "त्वचा" के खिलाफ काम करने के बजाय उसके साथ मिलकर काम करता है। जबरदस्त गर्मी मौसम से जुड़ी सबसे खतरनाक आपदा है। अगर हम ऐसे मटीरियल बना सकें, जो कुदरती प्रक्रियाओं के खिलाफ काम करने के बजाय उनके साथ मिलकर काम करें तो शहरों को रहने लायक बनाया जा सकता है।

(लेखक विज्ञान के जानकार हैं)

राजरंग

बागियों का वाट्सएप ग्रुप

तृणमूल कांग्रेस से अलग होकर एनसीपीआइ में शामिल हुए 20 बागी सदस्यों का ग्रुप वाट्सएप पर काफी गरम रहता है। बाहर कोई चर्चा छिड़ी, कोई खबर छपी या किसी भी नेता का कोई बयान आया नहीं कि इस वाट्सएप ग्रुप पर सवाल-जवाब शुरू हो जाते हैं। यह ग्रुप तब बनाया गया था, जब कुल 20 लोकसभा सदस्यों ने मिलकर तृणमूल कांग्रेस छोड़ने का फैसला किया था। कुछ दिन पहले सुप्रीम कोर्ट में हुई सुनवाई के बाद लोकसभा अध्यक्ष ने 26 अगस्त को नोटिस भेजकर इनसे पूछा था कि उनके खिलाफ क्यों न कार्रवाई की जाए। बताया जाता है कि तब इस पर ग्रुप में काफी गरमागरम बहस हुई थी। खैर, अब तो उन्हें राहत मिल गई है और 22 सितंबर तक उन्हें जवाब देना है, लेकिन बताते हैं कि इन बागी सदस्यों की नजर हमेशा इस वाट्सएप ग्रुप पर रहती है।

पिघल गया कूटनीतिक दांव

कूटनीति में समझौते होते हैं, घोषणाएं होती हैं और कभी-कभी 'इंडिया गेट' पिघल जाता है। गत दिनों बेल्जियम के पीएम वेवर दिल्ली आए तो एजेंडा गंभीर था-रक्षा सहयोग, व्यापार, प्रौद्योगिकी आदि। वेवर की प्लानिंग थी कि पीएम मोदी को बेल्जियम की सबसे शुद्ध कूटनीति सौंपी जाए। यानी चाकलेट से बना इंडिया गेट। वही चीज, जो बेल्जियम से आने वाला हर व्यक्ति अपने घरवालों के लिए लाता है। बस इस बार आकार स्मारक जितना बड़ा था, लेकिन पैकेजिंग कमजोर थी। समस्या यह हुई कि असली इंडिया गेट सौ साल से खड़ा है, लेकिन चाकलेट वाला हवाई अड्डे तक भी नहीं टिका। गर्मी की वजह से आकार बिगड़ा और आकृति चली गई। पीएम डे वेवर ने मोदी के सामने भी बार-बार अफसोस जताया कि कैसे चाकलेट कूटनीति के लिए बेहतरीन है, कूटनीतिक सफर के लिए नहीं। अब बेल्जियम दूतावास फिर से तैयारी में है। इस बार पैकिंग प्रोटोकाल के हिसाब से होगी, ताकि 'चाकलेटी इंडिया गेट' एक पीस में पहुंचे।

रीलबाज अफसरों की बेचैनी

जब से यह खबर सामने आई है कि अपने काम-काज या जनता से जुड़े मामलों पर ध्यान देने के बजाय सिर्फ व्यक्तिगत पब्लिसिटी के लिए इंटरनेट मीडिया पर ज्यादा सक्रिय दिखने वाले अफसरों के खिलाफ सरकार कार्रवाई की तैयारी कर रही है, तब से ऐसे रीलबाज अफसरों की बेचैनी बढ़ी हुई है। खासकर ऐसे अफसर, जिन्होंने पिछले कुछ वर्षों में इंटरनेट मीडिया में अपनी सक्रियता से लाखों फालोअर्स जुटा लिए हैं। कुछ अधिकारियों ने तो इसके लिए एक इंटरनेट मीडिया टीम भी बना रखी है। केंद्र सरकार में पदस्थ एक वरिष्ठ अधिकारी ने चुटकी लेते हुए बताया कि कुछ अधिकारियों की नौकरी ही इंटरनेट मीडिया से चल रही थी। रूटीन बैठकों तक की फोटो एवं वीडियो इंटरनेट मीडिया पर पोस्ट कराए जा रहे थे। हालांकि अब फोटो एवं वीडियो को इंटरनेट मीडिया पर डालने से मना किया जा रहा है। देखना दिलचस्प होगा कि वर्षों से इंटरनेट मीडिया की लग चुकी लत से ऐसे अफसर कैसे उबर पाते हैं।

कैबिनेट फेरबदल

एक साल से अधिक समय से कैबिनेट में फेरबदल को लेकर कयासों का सिलसिला जारी है। इंटरनेट मीडिया को छोड़ दें तो मुख्यधारा के मीडिया में हर हफ्ते कैबिनेट फेरबदल की नई तारीख बता दी जाती है। इसके साथ ही संभावित नामों की चर्चा शुरू हो जाती है। बदलते राजनीतिक मुद्दे के साथ कयासों का दायरा भी बदलता रहता है। अप्रैल में महिला आरक्षण और परिसीमन विधेयक के लिए विशेष सत्र बुलाने के बाद कैबिनेट में बड़े पैमाने पर महिलाओं को तरजीह मिलने और उसके अनुरूप संभावित नामों पर चर्चा शुरू हो गई तो जेन जी के जंतर-मंतर आंदोलन के बाद युवा चेहरों को ज्यादा जगह मिलने की खबरें आनी शुरू हो गईं। कोई चौंकाने वाले चेहरे की बात कर रहा है तो कोई बड़े और चर्चित मंत्रियों की छुट्टी की। रोचक यह है कि सत्ता में बैठे लोगों को भी इसकी भनक नहीं है।

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी* दूरभाष: नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

100 से लेकर 150 करोड़ रुपये तक अनुमानित लागत बताई जा रही है हालिया रिलीज फिल्म अल्फा की, जिसे यश राज फिल्म्स की ओर से बनाया गया है।

आजकल

अनंत विजय
anant@nda.jagran.com

प्रयोगधर्मिता से 'एक्शन' में नायिकाएं

आम तौर पर फिल्में नायक प्रधान होती हैं। परंतु हाल ही में दो एक्शन फिल्में आई हैं- 'अल्फा' और 'गांधारी' जो मूल रूप से नायिका प्रधान हैं। वस्तुतः इन दोनों के केंद्र में बालिकाओं की जिंदगी को रखा गया है। इन दोनों ही फिल्मों को देखने से यह पता चलता है कि हिंदी की फिल्मी दुनिया नायिका प्रधान फिल्मों में अब अधिक निवेश करने लगी है। हालांकि यह अच्छी बात है, परंतु कहानी और उसके ट्रीटमेंट को लेकर बहुत ही सजग एवं सावधान रहने की जरूरत होती है, क्योंकि फिल्म में जहां भी अनावश्यक रूप से नायिका को श्रेष्ठ दिखाने का प्रयास होता है, दर्शक उसे तुरंत समझ जाता है

फिल्म 'अल्फा' के एक दृश्य में आलिया और शरवरी। इनसेट में : फिल्म 'गांधारी' में मुख्य भूमिका में तापसी पन्नू।

हाल में नायिका प्रधान दो फिल्में आईं। दोनों एक्शन फिल्में हैं। इनमें बच्चियों की जिंदगी केंद्र में है। जुलाई में शिव रवैल के निर्देशन में आई फिल्म 'अल्फा' में आलिया व शरवरी मुख्य भूमिका में हैं। जबकि इसी महीने देवाशीष मखीजा के निर्देशन में बनी फिल्म 'गांधारी' आई। इसमें तापसी पन्नू मुख्य भूमिका में हैं। गांधारी के पहले तापसी और कंगना के बीच विवाद भी उठा था। कई बार देखा गया है कि जब कोई फिल्म रिलीज होनेवाली होती है तो उससे जुड़े नायक-नायिका या कहानी को लेकर विवाद होता है। कुछ लोगों का मानना है कि फिल्म की रिलीज के समय इस तरह के विवाद उठाने के पीछे मंशा फिल्म को चर्चित करने की होती है। कंगना और तापसी के बीच के विवाद को तापसी ने खत्म करने का प्रयास किया, लेकिन विवाद की चर्चा तो हो ही गई। फिल्म को इससे कितना लाभ मिला यह कहना तो कठिन है, लेकिन विवाद की टाइमिंग को तो रेखांकित किया ही जाना चाहिए। हालांकि यहां स्पष्ट कर दें कि इस लेख का विषय दो नायिकाओं के बीच विवाद की चर्चा नहीं है। चर्चा तो नायिका प्रधान एक्शन फिल्मों की करना चाह रहे हैं।

हिंदी फिल्मों में इस बात की बहुत चर्चा होती रही है कि नायिकाओं को सिर्फ उनके ग्लैमर और आकर्षण के कारण फिल्मों में शो पीस की तरह रखा जाता है। यह बात तो कई दशकों से कही सुनी जा रही है कि हिंदी फिल्मों में नायिकाओं को पेड़ के चारों तरफ घूमते हुए डांस करना और रोमांटिक सीन देने के लिए फिल्मों में रखा जाता है। पिछले वर्षों में तो चर्चा यह भी होने लगी थी कि नायक और नायिकाओं को फिल्म में काम करने के लिए एक समान पैसे मिलते हैं या नहीं। अगर नायिकाओं को पैसे कम दिए जाते हैं तो आखिर ऐसा क्यों? एक दौर ऐसा भी आया था कि फिल्मों में माधुरी दीक्षित को कई नायकों से अधिक पैसे मिलते थे। टीवी की दुनिया में स्मृति इरानी को साथी पुरुष कलाकारों से अधिक पैसे मिला करते थे। लेकिन ये केवल एक दो उदाहरण हैं। हिंदी फिल्मों में नायकों को अधिक और नायिकाओं को कम पैसे मिलते रहे हैं। अभी भी मिल रहे हैं। इसके पीछे का कारण तो सिर्फ व्यवसाय ही नजर आता है। इसमें नायक और नायिका में भेद-भाव की मानसिकता जैसी कोई बात न तो समझ आती है और न ही नजर। फिल्म उद्योग पूरी तरह से कारोबारी दुनिया है, जहां सबकुछ लाभ-हानि को ध्यान में रखकर होता है। अगर कोई फिल्म नायक के नाम और छवि पर सफल होती है तो उसका बाजार भाव बढ़ जाता है।

फिल्म 'अल्फा' यशराज फिल्म्स की स्पाई यूनिवर्स की कहानी है। इसमें अनिल कपूर, बाबी देओल, ऋतिक रोशन भी हैं, लेकिन कहानी आलिया भट्ट और शरवरी के इर्द-गिर्द ही घूमती है। कहानी अच्छी है। स्पाई यूनिवर्स की कहानियों में सरप्राइज एलिमेंट बहुत होते हैं। इस फिल्म में भी है। बाबी देओल का जो फिल्मी चरित्र है, वह खुद को देशभक्त कहता है, लेकिन अंत में उसका भेद खुलता है और वह पाकिस्तानी एजेंट होता है। वह सेना और आर एंड डब्ल्यू को चकमा देने में सफल रहता है। कहानी बहुत सधे तरीके से आगे बढ़ती है। फिल्म में मार-धाड़ बहुत है, लेकिन निर्देशक ने फिल्म को जुगुप्साजनक हिंसा से बचा लिया है। हिंसक दृश्यों को देखकर मन खराब नहीं होता है। आलिया अपने एक्शन दृश्यों में स्वाभाविक लगती हैं, लेकिन शरवरी की एंट्री के साथ ही वह आलिया पर भारी पड़ती दिखती हैं। आलिया की तुलना में शरवरी का रोल कम है, लेकिन जितनी भी देर वह पर्दे पर रहती हैं, आलिया को टक्कर देती नजर आती हैं। अपने अपियरेंस से, अपने एटीट्यूड से और अपने अभिनय से।

इस फिल्म में निर्देशक शिव रवैल की भी प्रशंसा की जानी चाहिए कि उन्होंने कथानक को बहुत मजबूती से बुना। दर्शक कहीं ऊबता हुआ महसूस नहीं करता है। कहानी में सरप्राइज एलिमेंट्स भी हैं जो कथानक के बढ़ने के साथ-साथ खुलते हैं। दर्शकों के मन में फिल्म देखते हुए यह चलता रहता है कि आगे क्या। यही आगे क्या किसी फिल्म की सफलता का पैमाना होना चाहिए, खासकर अगर स्पाई यूनिवर्स की फिल्म है तो। शिव रवैल ने इसके पहले भोपाल गैस त्रासदी पर आधारित वेबसीरीज 'द रेलवे मैन' निर्देशित की थी। उस सीरीज को दर्शकों का प्यार मिला था और शिव के काम की सराहना हुई थी। शिव रवैल एक समृद्ध विरासत को भी आगे बढ़ा रहे हैं, उनके पिता राहुल रवैल और दादा एचएस रवैल ने कई सुपर हिट फिल्में बनाई थीं। फिल्म अल्फा में शिव रवैल ने पहली बार निर्देशक की भूमिका का निर्वाह किया है।

फिल्म 'गांधारी' में तापसी पन्नू अपनी छवि के अनुरूप किरदार निभा रही हैं। एक मध्यमवर्गीय परिवार की महिला, जिसकी बेटी का अपहरण हो जाता है। दरअसल यह उसी बेटी की तलाश में पूरी फिल्म है। तापसी ने एक्शन करने का भी प्रयास किया है, लेकिन जब वह फाइट सीन देती हैं तो स्वाभाविक नहीं लगती हैं। अपनी बेटी की तलाश करते-करते उसको छह साल से कम उम्र की बच्चियों को अवैध तरीके से विदेश भेजने के गैंग का पता चलता है। कहानी बहुत उलझी हुई है और कथानक में गैप है जिसको भरने में निर्देशक विफल रहे हैं। दर्शकों को चौंकाने के चक्कर में कथानक की निरंतरता बाधित होती है। फिल्म में धर्म का ज्ञान भी दिया गया है, लेकिन यह आउट आफ प्लेस लगता है। जैसे तापसी की ही एक अन्य फिल्म 'अस्सी' में जबरदस्ती हिंदी के कवियों का नाम पात्रों से कहलवाया गया था। न तो उसकी कोई प्रासंगिकता थी और न ही आवश्यकता। निर्देशक और फिल्म लेखक को लगा होगा कि उन नामों के उल्लेख से उनको हिंदी साहित्य का ज्ञाता मान लिया जाएगा। फिल्म 'गांधारी' के कई दृश्यों में तापसी स्वाभाविक भी लगी हैं। जब वह दृष्टिहीन महिला के रोल में थाने के बाहर बैठकर बेबस दिखती हैं। यह बहुत ही पावरफुल सीन है। ऐसा फिल्म में बहुत कम जगह दिखा है। कई जगह तो अस्वाभाविक से लगने वाले दृश्य भी निर्देशक ने ठूंसे हैं। बहुरूपियों की दुनिया को दिखाने का प्रयत्न भी किया गया है, पर उस दुनिया को लेकर और रिसर्च करने की जरूरत थी।

फिल्म अल्फा और गांधारी को देखने के बाद लगता है कि हिंदी की फिल्मी दुनिया अब नायिका प्रधान फिल्मों में ज्यादा निवेश करने लगी है। कंगना की फिल्म 'भारत भाग्य विधाता' भी नायिका प्रधान थी। नायिका प्रधान फिल्म बनाना अच्छी बात है, लेकिन कहानी और उसके ट्रीटमेंट को लेकर बहुत सजग और सावधान रहने की आवश्यकता होती है। जहां भी अनावश्यक रूप से नायिका को सुपर हीरो बनाने या दिखाने का प्रयास होता है, दर्शक फौरन भांप लेता है। परिणाम फिल्म असफलता के रास्ते पर चल पड़ती है। बावजूद इसके अगर नायिकाओं को लीड रोल और विशेषकर एक्शन रोल में लेकर फिल्में बनने लगी हैं तो यह एक सुखद ट्रेंड है। हिंदी दर्शकों के लिए भी और फिल्मकारों के लिए भी।

खरी खरी

आत्मकथा में ट्विस्ट

निर्मल गुप्ता

आत्मकथा अब आत्मा की कथा नहीं रही। अब यह पब्लिशर की महत्वाकांक्षा और लेखक के आत्मसम्मान के बीच चल रही कुश्ती का अखाड़ा है। और पाठक, बाहर सांस रोके बैठे तमाशबीन हैं कि कब कोई अनहोनी घटे, कब कोई नया राज खुले। वह इनके प्रति बहुत ही उत्सुक रहता है।

पहले आत्मकथाएं ऐसे लिखी जाती थीं- मेरा बचपन अभावों में बीता। अब लिखी जाती हैं- मेरे बचपन में अभाव थे, और उसका कारण मेरे पिता की दूसरी प्रेमिका थी। लेकिन इस बीच प्रकाशक और लेखक के बीच बड़ा द्वंद्व चलता है। चूंकि प्रकाशक चाहता है कि कहानी में कुछ स्वाद हो, ताकि पाठक उसे रुचि लेकर पढ़े, लेकिन लेखक चाहता है कि कहानी के मूल स्वरूप के साथकोई छेड़छाड़ न हो। ऐसे में द्वंद्व का होना भी स्वाभाविक ही है।

प्रकाशक कहता है, अभाव से किताब नहीं बिकती, प्रेमिका से बिक जाती है। लेखक कहता है, प्रेमिका थी ही नहीं। प्रकाशक कहता है, तो ले आओ। कहानी में ट्विस्ट लाओ, तभी तो यह बिकेगी।

प्रकाशक के पास लेखक बेचारा 50 साल की ईमानदारी समेट कर लाया था। प्रकाशक ने पांडुलिपि देखी और कहा- 'सर, सब ठीक है, पर इसमें मिर्च नहीं है।' लेखक ने कहा, 'यह आत्मकथा है, अचार नहीं।' प्रकाशक ने कहा, 'आजकल स्पाइसी पिकल ही बिकता है।'

तो शुरू होती है जंग। लेखक लिखता है- 'मैंने अपने जीवन में बहुत संघर्ष किया।' प्रकाशक काट कर लिखता है- 'मैंने सिस्टम से संघर्ष किया, सिस्टम ने मुझे तोड़ने के लिए गेजेट का इस्तेमाल किया।'

लेखक चिल्लाता है- 'यह मैंने नहीं लिखा।' प्रकाशक कहता है- 'आपने जिया है, हमें बेचना है। आप समझिए कि आत्मकथा अब कंफेशन बाक्स बन गई है। अगर आपने नहीं बताया कि आपने किस-किस को धोखा दिया, किस पार्टी में किस नेता के साथ क्या पिया, किस अभिनेत्री को किस होटल में देखा तो आपकी आत्मकथा अधूरी है। ईमानदारी अब बोरिंग है। सनसनी ही ईमानदारी है। पाठक भी कम नहीं। उसे भी अब गांधी जी के सत्य के प्रयोग नहीं चाहिए। उसे चाहिए गांधी ने सच क्यों छिपाया वाली आत्मकथा। हर पाठक सांस रोके इंतजार में है कि लेखक अपनी पत्नी के अलावा किसी और का नाम लेगा।'

प्रकाशक का नया फार्मूला है- हर आत्मकथा में तीन चीजें होनी चाहिए। एक अफेयर, एक एफआइआर और एक पार्टी से निष्कासन। अगर ये तीनों नहीं हैं तो कम से कम एक विवाद तो होना ही चाहिए।

इन सबके बची लेखक फंसा हुआ है। वह सोचता है- 'मैं अपनी जिंदगी लिखूं या प्रकाशक की मार्केटिंग स्ट्रेटेजी?' वह रात भर सोचता है कि क्या अपने शांत वैवाहिक जीवन में एक काल्पनिक प्रेमिका जोड़ दूं? क्या अपने बास को खलनायक बना दूं जो कभी था ही नहीं?

और अंत में समझौता होता है। किताब छपती है। कवर पर लिखा होता है- 'बेबाक, बोल्ड, अब तक की सबसे सनसनीखेज आत्मकथा।' अंदर पहले पन्ने पर लेखक ने छोटे अक्षरों में लिख दिया होता है- 'इस आत्मकथा में आए कुछ पात्र और घटनाएं प्रकाशक के आग्रह पर जोड़ी गई हैं।' हालांकि उसे कोई अधिक गंभीरता से लेता नहीं है। पाठक किताब खरीदता है, पेज पलटता है, उसे कहीं कुछ सनसनीखेज नहीं मिलता। वह निराश होकर कहता है- 'इसमें तो कुछ भी नया नहीं।'

प्रकाशक अगली आत्मकथा का विज्ञापन तैयार करता है- 'पहली में जो नहीं बताया, अब बताएंगे।'

(लेखक व्यंग्यकार हैं)

पोस्ट

अगर व्यक्ति में बुद्धि, समझ और संवेदनशीलता का अभाव हो तो उसे बोलना भी कम ही चाहिए।
ऋचा अनिरुद्ध@richaanirudh

जीडीपी ग्रोथ का हिसाब एक ही पैमाने से होना चाहिए। अगर पिछले साल की जीडीपी पुरानी सीरीज से और इस साल की जीडीपी नई सीरीज से मापी जाएगी तो तुलना ही गलत हो जाएगी। एक तरफ मीटर, दूसरी तरफ सेंटीमीटर-फिर ग्रोथ कैसे मापेंगे?
प्रो. गौरव वल्लभ@GouravVallabh

एससी/एसटी कानून सामाजिक न्याय और सुरक्षा का मजबूत माध्यम है, किसी को झूठे मुकदमे में फंसाने का हथियार नहीं। इसलिए जो कोई भी जानबूझकर इस कानून का दुरुपयोग कर निर्दोष व्यक्ति को फंसाता है, उसके विरुद्ध कठोर कानूनी कार्रवाई और सख्त सजा का प्रविधान होना चाहिए।
हरि मांझी@HariManjhi

दो समान रूप से दबंग किस्म के लोगों के बीच झगड़ा होता है। फिर ऐसा क्यों है कि उनमें से एक को कानून की बेहद कठोर और दमनकारी धाराओं का सामना करना पड़ता है-ऐसी धाराएं, जिन्हें पुलिस ने नहीं, बल्कि एक्स पर बैठी तथाकथित 'जूरी' और आक्रामक जातीय समर्थकों ने थोप दिया है? स्वतंत्र भारद्वाज का मामला अदालत में शायद टिक नहीं पाएगा, लेकिन सवाल यह है कि क्या यही कानून का शासन और कानून के समक्ष समानता है?
स्वाति चतुर्वेदी@bainjal

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या जीडीपी वृद्धि को लेकर उठाए जा रहे सवाल राजनीतिक पूर्वाग्रह से प्रेरित हैं?

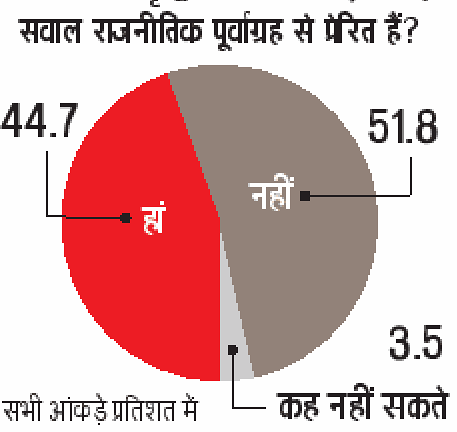

सभी आंकड़े प्रतिशत में

आज का सवाल

क्या ट्रंप के राष्ट्रपति रहते अमेरिका से व्यापार समझौता होने की कोई उम्मीद है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है

जनपथ

चौबिसवाली काठ की हांडी रहे चढ़ाय,
आरक्षण की गीतिका रहे एक सुर गाय।
रहे एक सुर गाय दलित को कार्ड बनाकर,
चाह रहे वे जीत जाति की आग लगाकर।
कुटिल चाल इस बार जायगी लेकिन खाली,
हांडी होगी राख काठ की चौबिसवाली!
-ओम प्रकाश तिवारी

रचनाकर्म

अवध की रहस्यमयी बेगम

ब्रजबिहारी

बेगम हजरत महल के रहस्यमय व्यक्तित्व और कृतित्व पर आधारित इस पुस्तक में 1857 के विद्रोह में उनकी भूमिका के साथ-साथ विभिन्न पक्षों की निष्ठाओं और उनके विरोधाभासों को भी उजागर किया गया है...

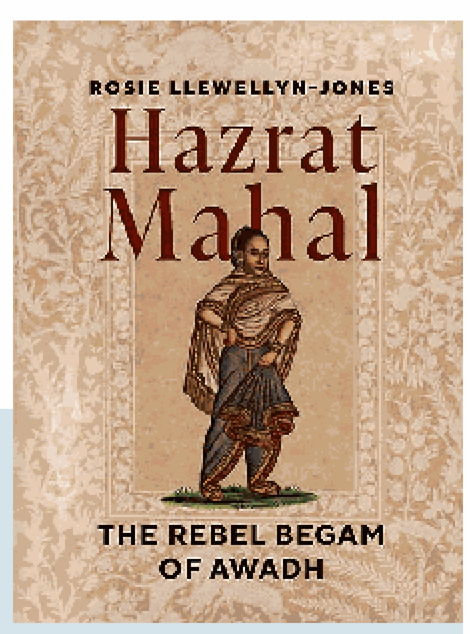

पुस्तक : बेगम हजरत महल, दि रिबेल बेगम आफ अवध
लेखिका : रोजी लुवेलिन जोन्स
प्रकाशक : पैन मैकमिलन पब्लिशिंग इंडिया
मूल्य : 799 रुपये

इतिहास जितना रोचक होता है, उससे कहीं ज्यादा विवादास्पद होता है। इसलिए ऐतिहासिक व्यक्तित्वों के बारे में लिखना आसान नहीं होता, लेकिन जब रोजी लुवेलिन जोन्स जैसी सिद्धहस्त रचनाकार हों तो यह काम मुश्किल नहीं रह जाता है। लखनऊ की संस्कृति की विशेषज्ञ के रूप में ख्यातिलब्ध जोन्स द्वारा लिखित भारतीय इतिहास की सबसे रहस्यमय चरित्रों में शामिल बेगम हजरत महल की जीवनी को पढ़ते हुए पाठक को यह महसूस होगा। अवध के अंतिम नवाब वाजिद अली शाह की बेगम हजरत महल के व्यक्तित्व और कृतित्व को सामने लाकर वास्तव में लेखिका ने एक बड़ी कमी को पूरा किया है, क्योंकि उनके बारे में एक जगह इतनी सारी जानकारी इससे पहले उपलब्ध नहीं थी।

नवाब वाजिद अली शाह के परीखाने में महक परी के रूप में प्रवेश करने वाली एक अफ्रीकी गुलाम की बेटी कैसे हजरत महल बनी और 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में उनकी क्या भूमिका थी, यह जानने के उत्सुक पाठकों को इस पुस्तक में भरपूर सामग्री मिलेगी। इतिहास में रुचि नहीं रखने वाले पाठक भी इसे पढ़कर निश्चित रूप से लाभान्वित होंगे। उनका साक्षात्कार एक ऐसे ऐतिहासिक चरित्र से होगा, जिनमें शांतिकाल में एक योग्य शासक बनने के सभी गुण थे और जिन्होंने युद्ध के मैदान में असाधारण वीरता का परिचय दिया।

लेखिका यह स्वीकार करती हैं कि हजरत महल के बारे में जानकारी जुटाना अत्यंत दुष्कर था। वर्ष 1856 में अवध पर अंग्रेजों के कब्जे और नवाब को कोलकाता में नजरबंद किए जाने के बाद जब उनका नाबालिग बेटा बिर्जिस गद्दीनशीन हुआ तो उस दौरान सही मायने में सत्ता बेगम के हाथ में ही थी। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध 1857 के विद्रोह के साथ बेगम हजरत महल का जुड़ाव इतना गहरा है कि दोनों को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। इस पुस्तक ने विद्रोह में बेगम हजरत महल की भूमिका के साथ-साथ उस संग्राम में शामिल विभिन्न पक्षों की निष्ठाओं और उनके विरोधाभासों को भी उजागर करने का काम किया है। अलग-अलग एजेंडा के साथ लड़ रहे दो या तीन समूहों के बीच में समन्वय बनाने में बेगम के सामने आने वाली कठिनाइयों का उल्लेख करते हुए लेखिका लिखती हैं, 'यह अलग-अलग दिशाओं में जाने को उद्यत तीन घोड़ों को काबू में करने जैसा था, लेकिन कहना न होगा कि बेगम ने इसे काफी चतुराई से सुलझाया। विरोधाभासों की अनदेखी करने के बजाय उन्होंने बातचीत के जरिये हल करने की कोशिश की।' यह एक ऐसा समय था, जब अवध के लोगों और तालुकदारों में भविष्य को लेकर अनिश्चितता थी। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि वे अंग्रेजों का साथ दें या बेगम का। जहां तक जनसाधारण का प्रश्न है तो उसके बाद अपने तालुकदारों के आदेश को मानने के अलावा कोई चारा नहीं था।

लेखिका का मानना है कि लखनऊ की जिस रेजिडेंसी को विद्रोहियों ने साढ़े चार महीने तक घेरे रखा था, उसके अंदर से अंग्रेज सैनिक, अफसर और उनके परिजन बाहर कैसे आए, यह भी अपने आप में एक रहस्य है। इसको लेकर अलग-अलग दावे किए जाते रहे हैं। बहरहाल, लेफ्टिनेंट जनरल जेम्स औट्रम और हेनरी हैवलाक की अगुआई में अंग्रेज आखिरकार रेजिडेंसी पर कब्जा करने में सफल रहे। बेगम को नेपाल निर्वासित कर दिया गया, जहां उनकी मृत्यु हुई। उनकी मौत की सूचना आने पर एक अंग्रेज अफसर ने पूछा था कि वह कौन थी, इससे पता चलता है कि अवध की इस बेगम का जीवन कितना रहस्यमय था।

तनाव-प्रबंधन का मंत्र

मुकेश चौरसिया

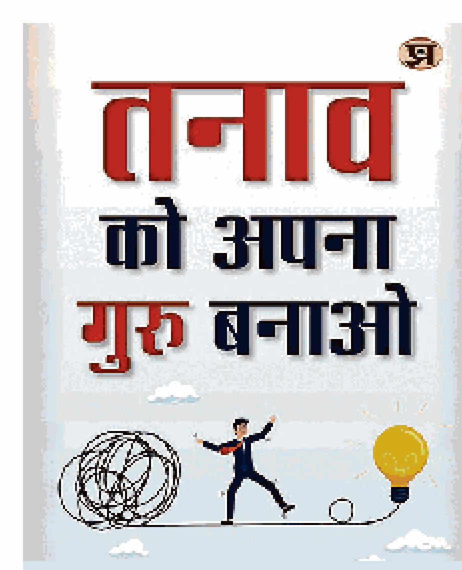

पुस्तक : तनाव को अपना गुरु बनाओ
लेखक : विक्रम सिंह
प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन
मूल्य : 300 रुपये

आजकल भागमभाग और व्यस्त जीवनशैली से एक ऐसी दुनिया बन गई है, जहां तनाव सामान्य बात मानी जाने लगी है। चाहे काम का बोझ हो, पारिवारिक दायित्व हो या फिर सामाजिक दबाव, तनाव जीवन के हर पहलू को प्रभावित कर रहा है। यह एक ऐसी समस्या बन गई है, जिसका लगभग हर कोई सामना कर रहा है। एक तरह से तनाव जीवन का ऐसा अंग बन गया है, जिससे बचा नहीं जा सकता है, लेकिन इसके सही प्रबंधन और संतुलित जीवनशैली अपनाने से तनाव को नियंत्रित किया जा सकता है। "तनाव को अपना गुरु बनाओ" पुस्तक यही राह दिखाती प्रतीत होती है।

तनाव आमतौर पर हमारे सामने आई चुनौतियों, हमारी अपेक्षाओं और हमारी यात्रा के साथ-साथ चलने वाली अनिश्चितताओं से पैदा होता है। पुस्तक में बताया गया है कि यह एक प्राकृतिक शक्ति है, जिसे अगर समझकर प्रभावी तरीके से दिशा दी जाए तो यह विकास और आंतरिक परिवर्तन का शक्तिशाली माध्यम बन सकता है। पुस्तक में तनाव का प्रबंधन करने के व्यावहारिक तरीकों पर गहराई से रोशनी डाली गई है। सिक्स सिग्मा और लीन मैनेजमेंट का उपयोग करने वाली प्रबंधन रणनीतियों से प्रेरित तरीकों को इस तरह ढाला गया है, जिससे व्यक्तिगत तौर पर कार्यकुशलता और उद्देश्यपूर्ण जीवन के लिए इनका उपयोग किया जा सके। यह पुस्तक मस्तिष्क की प्रतिक्रियाओं को समझने और उन सीमाओं की पहचान करने में सहायक है, जिनसे यह पता लगाया जा सकता है कि किस पर नियंत्रण किया जा सकता और क्या नियंत्रण से परे है। एक कहानी के जरिये यह पुस्तक न केवल तनाव से बचने की मार्गदर्शिका प्रदान करती है, बल्कि तनाव को अपनाने, उसका प्रबंधन करने और अंत में उससे बाहर निकलने का मार्ग दिखाने का प्रयास करती दिखती है। इसमें व्यक्तित्व के विकास के बारे में भी चर्चा है।

वैश्विक सिनेमा के इतिहास की पड़ताल

यतीन्द्र मिश्र

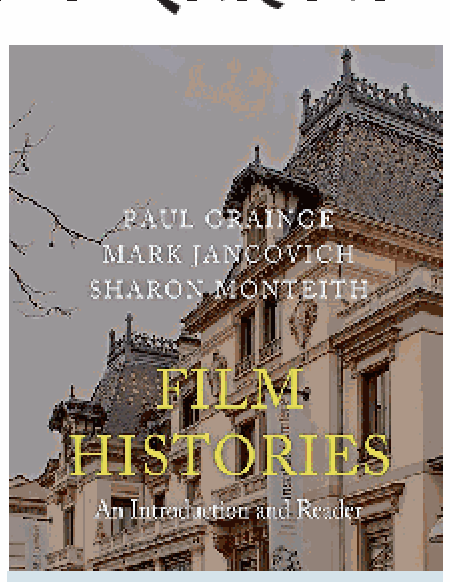

पुस्तक : फिल्म हिस्ट्रीज : एन इंट्रोडक्शन एंड रीडर
संपादन : मार्क जैंकोविच, शैरन मांटीथ, पाल ग्रेंज
प्रकाशक : मनोहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स
मूल्य : 2,295 रुपये

सिनेमा का इतिहास केवल फिल्मों और फिल्मकारों का नहीं है। किसी दौर के सिनेमा को समझने के लिए यह देखना भी जरूरी है कि फिल्में किस सामाजिक-राजनीतिक परिवेश में बनीं, उनका बाजार कैसे विकसित हुआ, दर्शक कौन थे, फिल्मों का प्रदर्शन और प्रचार तथा समय के साथ बदलती तकनीक और जीवनशैली ने सिनेमा को किस तरह प्रभावित किया। मार्क जैंकोविच, शैरन मांटीथ और पाल ग्रेज द्वारा संपादित 'फिल्म हिस्ट्रीज : एन इंट्रोडक्शन एंड रीडर' एक व्यापक दृष्टि के साथ फिल्म इतिहास को देखने का आग्रह करती है। पुस्तक दो भागों में है, पहला भाग वर्ष 1895 से 1945 और दूसरा 1946 से वर्तमान तक के सिनेमा को समेटता है। दोनों भागों में 12-12 खंड हैं और प्रत्येक खंड लगभग पांच वर्ष के कालखंड को केंद्र में रखता है। सिनेमा के उद्भव पर पहला खंड केंद्रित है। शुरुआती सिनेमा के महत्वपूर्ण फिल्मकार ल्यूमिएर के रियलिस्टिक विजुअल्स और मेलिएस के मैजिकल इफेक्ट्स इसके दो प्रमुख रूप थे। इसके बाद पुस्तक प्रारंभिक दर्शक, राष्ट्रवाद, व्यापार और बाजार पर प्रभुत्व, हालीवुड के स्टूडियो सिस्टम, सोवियत सिनेमा, साउंड के आगमन, ब्रिटिश फिल्म कल्चर, आलोचना, आर्थिक मंदी, नियमन, प्रोपेगंडा और युद्धकालीन हालीवुड तक सिनेमा के विकास की व्यापक तस्वीर प्रस्तुत करती है।

दूसरे भाग में यह दायरा और व्यापक है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बदलती दर्शक-रुचि, शीतयुद्ध, न्यू वेव्स तथा इंडिपेंडेंट फिल्म निर्माण से लेकर हालीवुड के पुनरुत्थान, 'स्टार वार्स' जैसी ब्लाकबस्टर फिल्मों, मल्टीप्लेक्स और ग्लोबलाइजेशन तक की यात्रा इसमें समेटी गई है।

पुस्तक फिल्म इतिहास को एक तय और अंतिम कथा के रूप में स्वीकार नहीं करती। संपादकों के अनुसार इतिहास लिखते समय कुछ पहलुओं को केंद्र में रखना और कुछ को पीछे छोड़ना अनिवार्य होता है, इसलिए कोई भी इतिहास पूरी तरह तटस्थ नहीं हो सकता। इसी संदर्भ में पुस्तक कम चर्चित फिल्म इतिहास की ओर भी ध्यान दिलाती है। फिल्म अध्ययन के विद्यार्थियों के लिए यह उपयोगी पाठ्य-सामग्री है, शोधार्थियों के लिए शोध-पद्धति की दृष्टि देती है और सामान्य पाठक को सिनेमा को व्यापक संदर्भ में समझने का नया नजरिया देती है।

जनगणना आंकड़ों में बदलते भारत का प्रश्न

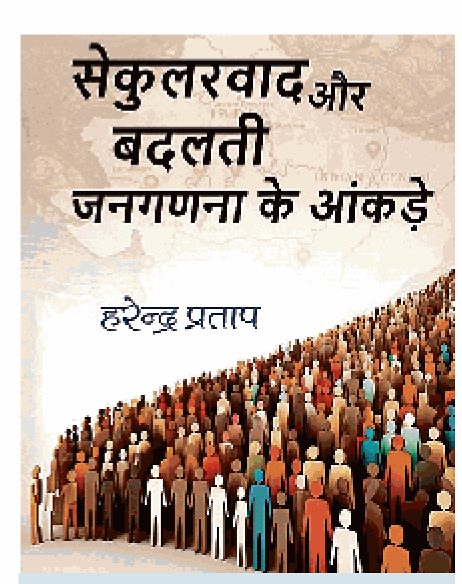

पुस्तक : सेकुलरवाद और बदलती जनगणना के आंकड़े
लेखक : हरेन्द्र प्रताप
प्रकाशक : सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली
मूल्य : 299 रुपये

इतिहास गवाह है कि किसी देश की जनसांख्यिकी केवल जनसंख्या का गणित नहीं होती। जनसंख्या का अनुपात, उसकी वृद्धि की गति और उसके पीछे काम करने वाले सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक कारक समय के साथ सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनीतिक संतुलन और लोकतांत्रिक व्यवस्था को प्रभावित करते हैं। दुनिया के अनेक देशों का अनुभव इसकी गंभीर मिसाल है। भारत के संदर्भ में यह प्रश्न 1947 के विभाजन और कश्मीरी पंडितों के बड़े पैमाने पर विस्थापन की ऐतिहासिक स्मृति के कारण और गंभीर हो जाता है। विभाजन ने दिखाया कि जनसंख्या, भूगोल, धार्मिक पहचान और राजनीति को एक-दूसरे से अलग करके नहीं देखा जा सकता। उस त्रासदी से उपजे व्यापक विस्थापन और हिंसा ने उपमहाद्वीप की जनसांख्यिकीय संरचना को गहराई से प्रभावित किया। ऐसे में स्वतंत्र भारत की बदलती जनसांख्यिकी को समझना इतिहास के अनुभवों और भविष्य की संभावनाओं, दोनों पर विचार करने का विषय है। इस व्यापक संदर्भ में हरेन्द्र प्रताप की 'सेकुलरवाद और बदलती जनगणना के आंकड़े' महत्वपूर्ण हो जाती है। लेखक 1961-2011 तक की जनगणनाओं को आधार बनाकर विभिन्न राज्यों, जिलों और प्रखंडों में उभरे जनसांख्यिकीय बदलावों को सामने रखते हैं। बदलते जनसंख्या अनुपात के प्रभावों पर यह पुस्तक गंभीर प्रश्न उठाती है।

एक पक्ष पूर्वोत्तर और जनजातीय क्षेत्रों में ईसाई आबादी के विस्तार से जुड़ा है। इन क्षेत्रों में बदलती धार्मिक संरचना को केवल संख्यात्मक वृद्धि के रूप में नहीं देखा जा सकता; इसके सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभावों को भी समझना आवश्यक है। इसी क्रम में पुस्तक पलायन के प्रश्न को भी सामने लाती है। पांच खंडों में विभाजित पुस्तक का स्वर लगातार प्रश्नाकुल बना रहता है। लेखक के अनुसार, कुछ समुदायों द्वारा सुनियोजित तरीके से जनसंख्या बढ़ाने और हिंदू आबादी के सिमटते अनुपात के पीछे गंभीर संकेत छिपे हैं, जिस पर समय रहते गंभीर विमर्श आवश्यक है। प्रस्तुत आंकड़े जनगणना को महज सरकारी दस्तावेज न मानकर उसके माध्यम से उभरती सामाजिक तस्वीर और उसके दूरगामी प्रभावों को समझने की दृष्टि देते हैं। ऐसे में हिंदू आबादी के घटते अनुपात और कुछ क्षेत्रों में तेजी से बदलते समीकरणों को केवल संख्या के स्तर पर देखना पर्याप्त नहीं; इनके प्रभाव भारत की सांस्कृतिक पहचान और लोकतांत्रिक मूल्यों तक पहुंच सकते हैं।

आइसीआइसीआइ बैंक में हिस्सेदारी बढ़ा सकेगी एलआइसी

नई दिल्ली: सार्वजनिक क्षेत्र की जीवन बीमा कंपनी एलआइसी निजी क्षेत्र के आइसीआइसीआइ बैंक में 9.99 प्रतिशत तक हिस्सेदारी खरीद सकेगी। आइसीआइसीआइ बैंक ने रेग्युलेटरी फाइलिंग में बताया कि इस संबंध में आरबीआइ से मंजूरी मिल चुकी है। हालांकि, यह हिस्सेदारी खरीद अन्य वैद्यानिक और रेग्युलेटरी मंजूरियों के अधीन होगी। इससे पहले एलआइसी को एचडीएफसी बैंक में भी 9.99 प्रतिशत तक हिस्सेदारी खरीदने की मंजूरी मिल चुकी है। (एएनआइ)

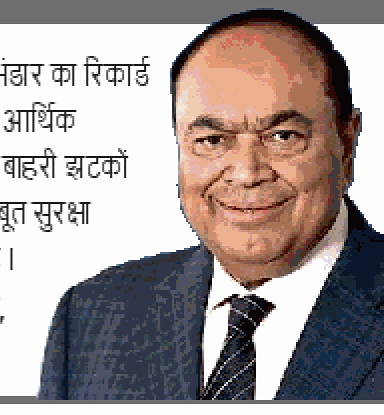

विदेशी मुद्रा भंडार का रिकार्ड स्तर वैश्विक आर्थिक अनिश्चितताओं और बाहरी झटकों के खिलाफ एक मजबूत सुरक्षा कवच प्रदान करता है।
– निर्मल कुमार मिंडा, प्रेसिडेंट, एसोचैम

हेल्थ इंश्योरेंस खरीदने से पहले जानें भारी-भरकम शब्दों का मतलब, जरूरत के समय नहीं होगी परेशानी

आजकल की लाइफ स्टाइल में गंभीर बीमारियों का जोखिम बना रहता है। इन बीमारियों का इलाज भी काफी महंगा होता है। कई लोग कर्ज लेकर या पैतृक संपत्ति बेचकर इलाज कराने को मजबूर होते हैं। ऐसी स्थिति से बचने के लिए हेल्थ इंश्योरेंस यानी स्वास्थ्य बीमा काफी बेहतर विकल्प है। लेकिन पालिसी की शर्तों को ध्यान से नहीं पढ़ने पर जरूरत के समय स्वास्थ्य बीमा का पूरा लाभ नहीं मिल पाता है। स्वास्थ्य बीमा पालिसी के भारी-भरकम शब्दों के बारे में बता रहे हैं **मनोज कुमार**

सम इंश्योर्ड

सम इंश्योर्ड का मतलब बीमा राशि होता है। इसका अर्थ यह है कि एक साल में किसी भी बीमारी के इलाज के कुल खर्च पर बीमा कंपनी अधिकतम कितना भुगतान करेगी। मान लीजिए, आपके इलाज पर 15 लाख रुपये का खर्च आया है और आपके स्वास्थ्य बीमा का सम इंश्योर्ड 10 लाख रुपये है। ऐसे में बीमा कंपनी 10 लाख रुपये तक का ही भुगतान करेगी। शेष पांच लाख रुपये आपको देने होंगे।

नो-क्लेम बोनस

अगर पालिसीधारक पूरे साल कोई क्लेम नहीं लेता है तो बीमा कंपनियां इसके बदले में बोनस देती हैं। इसको नो-क्लेम बोनस कहा जाता है। इससे अगले साल सम इंश्योर्ड बिना प्रीमियम बढ़ाए 10-50 प्रतिशत तक बढ़ जाता है या पालिसी नवीनीकरण के समय प्रीमियम में छूट मिल जाती है। हालांकि, नो-क्लेम बोनस को लेकर हर कंपनी के अलग-अलग नियम होते हैं। ऐसे में स्वास्थ्य बीमा खरीदते समय इसके बारे में अच्छी तरह से जान लें।

कैशलेस

इसका मतलब यह है कि पालिसीधारक को इलाज कराने के लिए अस्पताल को अपनी जेब से एक भी रुपया नहीं देना पड़ेगा। हालांकि, इसका लाभ लेने के लिए पालिसीधारक को बीमा कंपनी के नेटवर्क वाले अस्पताल में ही इलाज कराना होगा। अस्पताल और बीमा कंपनी आपस में इलाज के बिल का निपटारा कर लेते हैं। इसके अलावा, कुछ बीमारियां ऐसी होती हैं जिनका खर्च बीमा कंपनी नहीं उठाती है। इसमें कास्मैटिक सर्जरी, खुद को पहुंचाए गए नुकसान या दांतों का इलाज शामिल है। पालिसी खरीदने से पहले ऐसी बीमारियों या चीजों की सूची को ध्यान से पढ़ लें। इससे भविष्य में दिक्कत नहीं होगी।

डिडक्टिबल राशि

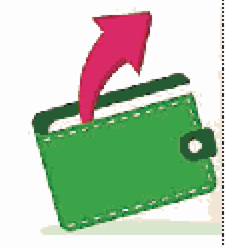

यह बीमा की दुनिया का एक महत्वपूर्ण शब्द है। इसका सीधा मतलब है वह तय राशि जो बीमा कंपनी द्वारा क्लेम का भुगतान करने से पहले पालिसीधारक को अपनी जेब से देनी होती है। सरल शब्दों में इलाज के खर्च का शुरुआती हिस्सा आपको खुद उठाना पड़ता है और उसके बाद का पूरा खर्च बीमा कंपनी देती है। इसे दो उदाहरणों से समझिए। मान लीजिए आपकी पालिसी में डिडक्टिबल राशि 50 हजार रुपये है। अगर इलाज पर 40 हजार रुपये का खर्च आया है तो बीमा कंपनी कोई पैसा नहीं देगी और यह पूरा खर्च आपको ही उठाना पड़ेगा। इसी तरह यदि आपके इलाज पर तीन लाख रुपये का खर्च आया है तो शुरुआती 50 हजार रुपये आपको देने होंगे। बाद के 2.5 लाख रुपये का भुगतान बीमा कंपनी करेगी।

वेटिंग पीरियड

कोई भी कंपनी कुछ खास बीमारियों या पुरानी बीमारियों के इलाज के लिए तुरंत बीमा सुविधा उपलब्ध नहीं कराती है। इसके लिए एक तय समय तक (वेटिंग पीरियड) इंतजार करना पड़ता है। उसके बाद ही बीमा का लाभ मिल पाता है। यदि आपको पहले से कोई बीमारी है और पालिसी के अनुसार वेटिंग पीरियड छह महीने है तो बीमा सुविधा के तहत उस बीमारी का इलाज कराने के लिए तय समय तक इंतजार करना पड़ेगा। स्वास्थ्य बीमा लेते समय अपनी पुरानी बीमारियों की सही जानकारी दें, ताकि जरूरत पर दिक्कत न हो।

को-पे

यह ग्राहक और बीमा कंपनी के बीच ऐसा समझौता है जिसमें अस्पताल के खर्च का एक तय हिस्सा पालिसीधारक को और बाकी हिस्सा कंपनी को उठाना पड़ता है। आमतौर पर यह समझौता वरिष्ठ नागरिकों या पहले से मौजूद बीमारियों के मामलों में लागू होता है। इससे प्रीमियम तो कम हो जाता है लेकिन कुछ खर्च पालिसीधारक को भी उठाना पड़ता है।

जागरण इन्फो

असल में टैक्स कौन देता है

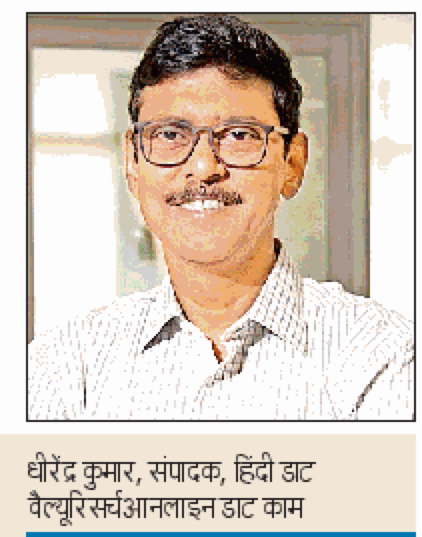

धीरेंद्र कुमार, संपादक, हिंदी डाट वैल्यूरिसर्चआनलाइन डाट काम

कुछ दिन पहले एक्स पर एक पोस्ट दिखी जिसमें वही पुराने मगर लोकप्रिय दावे दोहराए गए थे कि टैक्स-टू-जीडीपी रेश्यो करीब 20 प्रतिशत है और यह पूरा बोझ सिर्फ 2-3 प्रतिशत वेतनभोगियों पर पड़ता है। जबकि कारोबारी, किसान और भ्रष्ट लोग बच निकलते हैं। पोस्ट को खूब लाइक और समर्थन मिला। खासकर उन लोगों से जो खुद को देश का आखिरी ईमानदार करदाता मानते हैं। मैं वर्षों से इस दलील के अलग-अलग रूप सुनता आया हूं और यह बिल्कुल गलत है।

बोनस

व्यक्तिगत आयकर केंद्र सरकार की कुल कमाई का सिर्फ 21 प्रतिशत है। वहीं, कारपोरेशन टैक्स 18 प्रतिशत, जीएसटी का केंद्र वाला हिस्सा 15 प्रतिशत, एक्साइज छह प्रतिशत, कस्टम्स चार प्रतिशत, गैर-कर राजस्व 10 प्रतिशत और उधारी 24 है। एसजीएसटी, शराब पर एक्साइज, प्रापर्टी पर स्टांप ड्यूटी जैसे राज्यों के हिस्से में आने वाले, ये सब इससे अलग हैं। निगम स्तर के टैक्स भी अलग हैं। तो 'देश 100 प्रतिशत व्यक्तिगत आयकर पर चल रहा है' वाला दावा असल में 20 प्रतिशत से भी कहीं कम निकलता है।

पूरा हिसाब देखने पर समझ आता है कि शिकायत असल में उल्टी दिशा में है। जीएसटी तो हर वो शख्स चुकाता है जो कुछ भी खरीदता है, चाहे वह किसान हो, दिहाड़ी मजदूर हो या फुटपाथ पर बैठा वह भिखारी जो चंद सिक्कों से बिस्कुट का पैकेट खरीदता है। यहां तक कि महंगे फोन, बड़ी एसयूवी और शादियों पर काली कमाई से किया खर्च भी टैक्स के दायरे में आ जाता है। यही वह जगह है जहां बेहिसाब पैसा भी अक्सर सतह पर आकर टैक्स के घेरे में आ ही जाता है। इसके लिए इकोनमिक्स की डिग्री की जरूरत नहीं है। बस इतना समझना काफी है कि अप्रत्यक्ष कर का बोझ कम कमाने वालों पर ज्यादा और ज्यादा कमाने वालों पर कम पड़ता है। जिन लोगों को उस पोस्ट में फ्रीलोडर कहा गया, उनमें से कई अपनी कमाई का कहीं ज्यादा हिस्सा टैक्स के तौर पर दे रहे हैं, जितना शिकायत करने वाले वेतनभोगी देते हैं।

इस वायरल दावे में एक और गड़बड़ है कि सिर्फ 2-3 प्रतिशत लोग ही आयकर चुकाते हैं। पिछले साल करीब नौ करोड़ रिटर्न फाइल हुए, जिनमें दो-तिहाई शून्य कर वाले थे। यानी सिर्फ तीन करोड़ लोगों ने असल में टैक्स चुकाया। इसे 140 करोड़ की आबादी से भाग दें तो आंकड़ा दो प्रतिशत बैठता है। लेकिन रिटर्न एक व्यक्ति फाइल करता है, जबकि टैक्स पूरे घर की कमाई से चुकाया जाता है। भारत में करीब 30 करोड़ घर हैं, तो सही डिनामिनेटर 140 करोड़ भारतीय नहीं, बल्कि 30 करोड़ घर होना चाहिए। इस हिसाब से 10 प्रतिशत घर आयकर चुकाते हैं। और चूंकि व्यक्तिगत आयकर केंद्र सरकार की कमाई का 21 प्रतिशत है, राज्य व स्थानीय टैक्स जोड़ने पर यह पूरी सरकारी कमाई का शायद करीब 14 प्रतिशत बैठता है, तो मुझे इसमें कोई बड़ी नाइंसाफी नजर नहीं आती।

मैं यह नहीं कह रहा कि भारतीयों पर टैक्स कम है या समाज के कुछ हिस्सों पर ज्यादा टैक्स नहीं है, यह चर्चा उन मुद्दों की नहीं है। वेतनभोगियों की यह शिकायत भी जायज है कि उनका हिस्सा बाकी सब की तुलना में ज्यादा दिखता है और उससे बचना मुश्किल है। लेकिन इन पर चर्चा तभी हो सकती है जब लोगों के पास यह काल्पनिक धारणा न हो कि कौन कितना टैक्स चुकाता है।

एक नजर में

एथर ने पेश किया नया इलेक्ट्रिक स्कूटर कोणार्क

नई दिल्ली: प्रमुख इलेक्ट्रिक स्कूटर निर्माता एथर एनर्जी ने अपने चौथे एथर कम्युनिटी-डे 2026 पर नया इलेक्ट्रिक स्कूटर कोणार्क पेश किया। कोणार्क को एथर के नए ईएल प्लेटफार्म पर बनाया गया है। कोणार्क एस और जैड प्रोडक्ट लाइंस के साथ छह वैरिएंट्स में उपलब्ध होगा। इसकी फिफ्थ जनरेशन बेडराक बैट्री पर 10 साल या एक लाख किलोमीटर (जो भी पहले हो) की वारंटी मिलेगी। एथर एनर्जी के सीईओ तरुण मेहता ने कहा कि कोणार्क की बुकिंग और डिलीवरी सितंबर मध्य में चरणबद्ध रूप से शुरू की जाएगी। इसका शुरुआती मूल्य 99,999 रुपये (एक्स-शोरूम बेंगलुरु) है। (वि.)

कोयले का उत्पादन घटा तो कम हुआ स्टाक

दो महीने में ताप बिजली संयंत्रों के पास औसत कोयला भंडार 17 से घटकर नौ दिन पर आया

- कोयला मंत्रालय ने कहा, बारिश घटने के साथ उत्पादन व आपूर्ति में तेजी आई
- अगस्त में कोल इंडिया का कोयला उत्पादन घटकर 4.75 करोड़ टन रहा
- पिछले महीने देश में बिजली की खपत 12.85 प्रतिशत बढ़कर 258.27 लाख मेगावाट रही

जागरण ब्यूरो, नई दिल्ली: देश के कई हिस्सों में मानसून के दौरान लंबी बारिश ने कोयला उत्पादन को प्रभावित किया है। दो महीने पहले ताप बिजली संयंत्रों के पास कोयला का 17 दिनों का औसतन स्टाक था, जो अब घट कर नौ दिनों का रह गया है। हालांकि, कोयला मंत्रालय का कहना है कि अब पूर्वी-मध्य भारत के कोयला क्षेत्रों में बारिश घटने के साथ उत्पादन व ढुलाई दोनों तेज होने लगी हैं। इसे और बढ़ाने की तैयारी है। सितंबर के बारिश वाले पहले तीन दिनों में औसत दैनिक उत्पादन करीब 13.6 लाख टन रहा, चार सितंबर को यह लगभग 17 लाख टन हो गया है। खदान के आसपास जमीन सूख रही है। इससे अगले हफ्ते भर में ढुलाई में और तेजी आएगी और बिजली संयंत्रों के पास ज्यादा कोयला पहुंचने लगेगा।

कोयला मंत्रालय व बिजली मंत्रालय के अलग-अलग आंकड़ों का आकलन करें तो यह साफ हो जाता है कि जुलाई-अगस्त 2026 में बिजली की मांग रिकार्ड तौर पर ज्यादा रही है जबकि कोयला उत्पादन पिछले साल से कम रहा है। लिहाजा ताप बिजली संयंत्रों के पास कोयला भंडार कम हुआ है। कोल इंडिया लिमिटेड (सीआइएल) अपने कोयला स्टाक (पहले से निकाले गये कोयला) से बिजली संयंत्रों को आपूर्ति बना कर रखे हुए है। चालू वित्त वर्ष के अप्रैल-अगस्त में कंपनी ने 32.29 करोड़ टन कोयला आपूर्ति की, जो पिछले साल की इसी अवधि के 30.26 करोड़ टन से 6.70 प्रतिशत अधिक है। अगस्त 2026 में छह करोड़ टन कोयला की आपूर्ति की गई है, जो पिछले साल के समान महीने से 5.50 प्रतिशत ज्यादा है। बिजली क्षेत्र को अगस्त में 4.485 करोड़ टन कोयला दिया गया, जो पिछले साल के मुकाबले 4.5 प्रतिशत अधिक है। सीआइएल का उत्पादन अगस्त 2026 में पिछले साल के समान महीने के मुकाबले घटकर 4.75 करोड़ टन रहा है। जुलाई और अगस्त 2025 के दौरान कोयला उत्पादन में क्रमशः आठ प्रतिशत व 11.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी।

दूसरी तरफ, जुलाई, 2026 में देश में बिजली की खपत 270.30 लाख मेगावाट तक गई है जो तकरीबन 11 प्रतिशत ज्यादा है। इसी तरह से अगस्त 2026 में खपत 258.27 लाख मेगावाट तक गई है, जो 12.85 प्रतिशत ज्यादा है। यह मानसून के महीनों मे बिजली की रिकार्ड खपत है।

मंत्रालय का कहना है कि मानसून की वजह से कोयला खदानों में जलभराव है। खदानों को जोड़ने वालें आंतरिक सड़कें क्षतिग्रस्त हो गई हैं और हैंडलिंग प्लांट से कोयला निकालना मुश्किल हो गया है। हालांकि, सीआइएल ने आपूर्ति को पूरी तरह से टूटने नहीं दिया है। इसके बावजूद आंकड़ों से साफ है कि पिछले मानसून के अगस्त में सीआइएल का उत्पादन इस अगस्त से बेहतर था। सरकार का कहना है कि कोल इंडिया की खदानों के बाहर 7.6 करोड़ टन स्टाक है, जबकि 4.6 करोड़ टन का स्टाक अलग से भी तैयार है। खदानों में गीलापन कम होने के बाद कोयला निकालने का काम तेज किया जा रहा है। बिजली संयंत्रों को वार्षिक अनुबंध से ज्यादा कोयला लेने की छूट दी गई है।

राष्ट्रीय फलक

टाटा संस के उत्तराधिकारी की दौड़ में तीन नाम सबसे आगे

- टाटा स्टील के सीईओ टीवी नरेंद्रन, टाटा संस के कार्यकारी निदेशक सौरभ अग्रवाल, एनएसई के एमडी आशीष चौहान के नाम पर हो रही चर्चा

टीवी नरेंद्रन

सौरभ अग्रवाल

आशीष चौहान

नई दिल्ली, प्रेट्र : 275 अरब डालर के टाटा समूह की होल्डिंग कंपनी टाटा संस ने अपने चेयरमैन एन चंद्रशेखरन के उत्तराधिकारी की खोज को तीन प्रमुख कारपोरेट दिग्गजों तक सीमित कर दिया है। सूत्रों के अनुसार, इनमें टाटा स्टील के सीईओ और एमडी टीवी नरेंद्रन, टाटा संस के कार्यकारी निदेशक सौरभ अग्रवाल और नेशनल स्टाक एक्सचेंज (एनएसई) के एमडी और सीईओ आशीष चौहान शामिल हैं।

आंतरिक उम्मीदवारों में नरेंद्रन सबसे आगे हैं, जबकि अग्रवाल अपने निवेश-बैंकिंग और पूंजी आवंटन के अनुभव के कारण चर्चा में हैं। कैपिटल मार्केट के अनुभवी चौहान नए चेहरे के रूप में उभर सकते हैं। चयन प्रक्रिया अभी भी जारी है और कोई अंतिम निर्णय नहीं लिया गया है। टाटा संस का बोर्ड और ट्रस्ट अगले चेयरमैन के चयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। सूत्रों के अनुसार, टाटा ट्रस्ट के चेयरमैन नोएल टाटा ने सरकार को चयनित उम्मीदवारों की जानकारी दी है।

चंद्रशेखरन ने 2017 में टाटा संस के चेयरमैन का कार्यभार संभाला था। उन्होंने पिछले महीने कहा था कि वे 20 फरवरी, 2027 को अपनी अवधि समाप्त होने पर पुनर्नियुक्ति के लिए आवेदन नहीं करेंगे।

हालांकि, उत्तराधिकारी की खोज के लिए औपचारिक प्रक्रिया शुरू की गई है। चयनित नामों की कोई आधिकारिक पुष्टि नहीं की गई है। अन्य संभावित नामों में नोएल टाटा, आरती सुब्रमणियन, शैलेश चंद्र और प्रवीर सिन्हा शामिल हैं।

समूह अभी अपने सबसे बड़े निवेश के दौर से गुजर रहा है। इसमें एअर इंडिया का विस्तार, सेमीकंडक्टर व इलेक्ट्रानिक्स मैन्यूफैक्चरिंग परियोजनाएं, इलेक्ट्रिक मोबिलिटी और डिजिटल कारोबार शामिल हैं।

अगले चेयरमैन को करीब 16.24 लाख करोड़ रुपये का राजस्व वाला समूह मिलेगा और उन्हें कई अहम रणनीतिक चुनौतियों का सामना करना होगा।

एआइ कैंपस पर 70 हजार करोड़ का निवेश करेगी टीसीएस की सब्सिडियरी

हैदराबाद, एएनआइ: टाटा समूह की कंपनी टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज (टीसीएस) की सब्सिडियरी हायपरवाल्ट एआइ हैदराबाद में एक गीगावाट क्षमता तक का आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआइ) डाटा सेंटर विकसित करेगी। इस पर हायपरवाल्ट और उसके भागीदार 70 हजार करोड़ रुपये तक का निवेश करेंगे। टीसीएस ने एक्सचेंज फाइलिंग में बताया कि हायपरवाल्ट ने इस बड़े कैंपस के लिए 264 एकड़ जमीन हासिल कर ली है। इसे ग्राहकों की मांग और टेक्नोलाजी की जरूरतों के आधार पर अलग-अलग चरणों में विकसित किया जाएगा।

ब्रिटेन में चार हजार नौकरियां कम करेगी जेएलआर

नई दिल्ली, आइएएनएस: टाटा मोटर्स की लक्जरी कार बनाने वाली कंपनी जगुआर लैंड रोवर (जेएलआर) अगले दो वर्षों में ब्रिटेन में करीब चार हजार नौकरियां कम करने की तैयारी कर रही है। कंपनी बढ़ती लागत, कम मांग और अमेरिकी टैरिफ के असर से जूझ रही है। जेएलआर सोमवार को आधिकारिक तौर पर छंटनी कार्यक्रम की घोषणा कर सकती है। शुक्रवार को कर्मचारियों को बता दिया गया था कि यह कदम जल्द ही उठाया जाने वाला है।

अमीश त्रिपाठी, संजीव सान्याल समेत चार को मिला एफआइएचसीआर का इतिहास पुरस्कार

जागरण संवाददाता, नई दिल्ली

एफआइएचसीआर की ओर से आयोजित एनुअल इंडिया हिस्ट्री प्राइज पुरस्कार समारोह में संजीव सान्याल को सम्मानित करतीं वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण, साथ में डा. विक्रम संपथ। जागरण

इंडिया हैबिटेट सेंटर में शनिवार को फाउंडेशन फार इंडियन हिस्टोरिकल एंड कल्चरल रिसर्च (एफआइएचसीआर) के पहले वार्षिक इतिहास पुरस्कार समारोह का आयोजन किया गया। इस दौरान केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण बतौर मुख्य अतिथि मौजूद रहीं। उन्होंने विजेताओं को पुरस्कार देकर सम्मानित किया। समारोह में चार श्रेणियों में पुरस्कार दिए गए। भारतीय ऐतिहासिक कथा-साहित्य का एसएल भैरप्पा पुरस्कार प्रसिद्ध लेखक अमीश त्रिपाठी की पुस्तक 'द चोला टाइगर्स' को दिया गया। बच्चों के लिए ऐतिहासिक लेखन की लेखक श्रेणी में पहला पुरस्कार अनंत पई पुरस्कार संजीव सान्याल की पुस्तक 'रिवोल्यूशनरीजः फाइट फार फ्रीडम' को मिला।

भारतीय इतिहास के लिए आरसी मजूमदार पुरस्कार प्रसेनजीत के. बसु की पुस्तक 'इंडिया रीबार्न' को मिला। वहीं, चित्रकार श्रेणी में तपोशी घोषाल की 'राम कुमारः बिटवीन द लाइन्स' को पुरस्कार दिया गया।

एफआइएचसीआर के संस्थापक निदेशक डा. विक्रम संपत ने कहा कि पुरस्कारों के लिए करीब 250 प्रविष्टियां मिली थीं। जूरी ने इनकी समीक्षा के बाद विजेताओं का चयन किया।

मुआवजा का भुगतान न होने पर जारी किया गया है कुर्की का आदेश

प्रथम पृष्ठ से आगे

न्यायालय ने बैजनाथ कंवर के आश्रितों को 26 लाख नौ हजार 200 रुपये और रवि यादव के आश्रितों को 17 लाख पांच हजार रुपये का मुआवजा देने का निर्देश दिया। दोनों मामलों में कुल 43 लाख 14 हजार 200 रुपये की राशि निर्धारित हुई। इस राशि पर नौ प्रतिशत वार्षिक ब्याज भी देय है। इसे एक महीने के भीतर जमा करना अनिवार्य था।

अदालत के स्पष्ट आदेश के बावजूद पांच महीने से अधिक का समय बीत जाने के बाद भी पीड़ित परिवारों को मुआवजा राशि नहीं मिल सकी। राशि का भुगतान नहीं होने पर पीड़ितों के परिवारों के अधिवक्ताओं की ओर से वसूली के लिए कानूनी प्रक्रिया को आगे बढ़ाया, जिसके परिणामस्वरूप अब पुलिस के इन दोनों बड़े कार्यालयों की संपत्ति कुर्की का यह आदेश जारी किया गया है।

पुलिस विभाग की तेज रफ्तार मिनी बस ने बाइक को मारी थी जोरदार टक्कर : दुर्घटना में मृत युवकों की पहचान बैजनाथ कंवर और रवि यादव के रूप में हुई, जो जांजगीर-चांपा जिले के ग्राम हेडसपुर के निवासी थे।

घटना के दिन बैजनाथ बाइक चला रहा था और रवि उसके पीछे बैठा था। इसी दौरान वीवीआइपी प्रबंध के लगाई गई पुलिस विभाग की तेज रफ्तार मिनी बस के चालक बिजेंद्र कुमार कंवर ने उनकी बाइक को जोरदार टक्कर मार दी। उस हादसे में बैजनाथ की मौके पर ही मौत हो गई थी, जबकि गंभीर रूप से घायल रवि यादव ने उपचार के दौरान दम तोड़ दिया था।

बैजनाथ कंवर की ओर से उनकी पत्नी सुजाता कंवर, माता-पिता और दो नाबालिग बच्चों ने, जबकि रवि यादव की ओर से उनकी पत्नी जुगमणी और दो नाबालिग बच्चों ने प्रकरण दायर किया था।

चिकित्सीय लापरवाही से गर्भवती की मौत पर डाक्टर को देना होगा 20 लाख

विधि संवाददाता, जागरण • पटना: बिहार राज्य उपभोक्ता आयोग ने गर्भवती महिला की गंभीर हालत को नजरअंदाज कर केवल पुरानी अल्ट्रासाउंड रिपोर्ट के आधार पर उपचार करने के मामले में चिकित्सक को बतौर मुआवजा 20 लाख रुपये का भुगतान करने का निर्देश दिया है। चिकित्सकीय लापरवाही को गंभीरता से लेते हुए आयोग के अध्यक्ष जस्टिस संजय कुमार की पीठ ने डाक्टर को मृत महिला के पति को 60 दिनों के भीतर इस राशि का भुगतान करने को कहा है। इसके अलावा मुकदमा खर्च के लिए 20 हजार रुपये भी देने होंगे। निर्धारित अवधि में भुगतान नहीं करने पर आठ प्रतिशत वार्षिक ब्याज भी देना होगा।

मामला छपरा के भगवान बाजार स्थित भूमिजा चिकित्सा केंद्र का है। शालू जैन गर्भावस्था के दौरान पेट में तेज दर्द और गर्भस्थ शिशु की हलचल बंद होने की शिकायत लेकर डा. बिमला शाही के पास पहुंची थीं। आरोप है कि डाक्टर ने शारीरिक जांच किए बिना पुरानी अल्ट्रासाउंड रिपोर्ट के आधार पर सब कुछ सामान्य बता दिया।

साप्ताहिक राशिफल

रविवार, 6 सितंबर, 2026 से शनिवार 12 सितंबर, 2026 तक

पं. बी. बी. शास्त्री 'देवेश'

मेष (चू, चे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, आ)
प्रतिस्पर्धा से चिन्ता, धनागम में प्रयास, सामाजिक यश, निजी संबंधों में सुधार, सकारात्मक विचार में रहिये, निजी संबंधों में सुधार, वाहन, आभूषण योग प्रभावी, साधनों की पूर्ति, चयन में सफलता, रक्त व त्वचा विकार योग, प्रणय में सुख, शुभ अंक 7

वृष (इ, ऊ, ए, ओ, पा, वी, वू, वे, वो)
धन के आवागमन में सावधानी, अर्थ साधन में प्रयास, पूंजी निवेश में सावधानी, लक्ष्य प्राप्ति के लिये सजगता, अतिकल्पना से बचे, महिला से सहयोग, शत्रुपक्ष प्रभावी, धर्म में रुचि, यात्रा में सावधानी, राजनैतिक अपयश, व्यय पर नियन्त्रण, शुभ अंक 6

मिथुन (का, की, कू, घ, ङ, छ, के, को, हा)
साझेदारी में सावधानी, धनागम में प्रयास, नकारात्मक विचारों से बचें, दिनचर्या व्यस्ततम, साधनों की पूर्ति, माता-पिता का ध्यान रखे, शिक्षा में व्यवधान, मित्रों से लाभ, यात्रा में सावधानी, एकाएक कार्य में सफलता, धर्म में रुचि, आय में सुधार, व्यय पर नियन्त्रण, शुभ अंक 5

कर्क (ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो)
प्रतिस्पर्धा से तनाव, विचारों की अधिकता रहेगी, अर्थ साधन में प्रयास, नकारात्मक कार्य करने वालों से सावधान, निजी मतभेद, भवन साजसज्जा योग, शिक्षा में अवरोध, वायु, रक्त विकार प्रभावी, रक्षा साधन कार्य में सफलता, भ्रमण, मनोरंजन योग, आय में सुधार, शुभ अंक 7

सिंह (मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू, टे)
सकारात्मक शैली के साथ कार्य करें, अर्थसाधन में सुधार, पारिवारिक कार्य में योगदान दे, चिन्ता का समाधान, निजी सम्बन्धा में सुधार, पारिवारिक कार्य में योगदान दे, चिन्ता का समाधान, निजी संबंधों में सुधार, शिक्षा में रुचि, प्रणय में सुख, राजनैतिक अपयश, व्यय अधिक, शुभ अंक 4

कन्या (टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो)
कार्य क्षेत्र में सफलता, प्रतिस्पर्धा से तनाव, साझेदारी में सावधानी, विदेश से समाचार, पारिवारिक सहयोग, मानसिक चिन्ता, शत्रुपक्ष से सावधान, क्रोध, ईर्ष्या से बचें, ससुराल से सहयोग, अनुबन्ध की प्राप्ति, राजनैतिक अपयश, आय में सुधार, शुभ अंक 9

तुला (रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू, ते)
कार्य क्षेत्र में विस्तार, जीवन में शांति एवं प्रसन्नता, पूंजी निवेश में सावधानी, स्वजन से सहयोग, समाज में यश, भूमि कार्य में अवरोध, अध्ययन में रुचि, चयन में सफलता, वायु विकार, रक्त विकार के योग, दाम्पत्य में सुख, स्थान पद परिवर्तन, राजनैतिक अपयश, शुभ अंक 1

वृश्चिक (तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी, यू)
नकारात्मक विचारों से बचें, निर्णय सलाह से करें, लक्ष्य प्राप्ति के लिये सजगता, निजी मतभेद दूर करें, युक्ति एवं अनुभव का सहारा लें, क्रोध, ईर्ष्या से बचें, वाद में विजय, शिक्षा में रुचि, मित्रों से सावधान, जीवनसाथी का मिलन, राज्यपक्ष से सावधान, व्यय अधिक, शुभ अंक 2

धनु (ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा, भे)
दिनचर्या व्यस्ततम्, धनागम में प्रयास, युक्ति तथा परिस्थिति के अनुरुप ही कार्य करें, विचारों में मौलिकता, पारिवारिक सहयोग, साधनों की पूर्ति, सन्तान से सहयोग, चयन में देरी, खानपान पर ध्यान दें, जीवनसाथी का मिलन, राजनैतिक अपयश, व्यय अधिक, शुभ अंक 8

मकर (भो, जा, ज, खी, खू, खे, खो, गा, गी)
कार्य क्षेत्र में तथा परिवार में सामंजस्य करें, अर्थ साधन में प्रयास, साहस की वृद्वि, निर्णय सलाह से करें, निजी संबंधों में सुधार, समस्या का समाधान, वाहन साजसज्जा का योग, चयन में देरी, स्वास्थ्य के प्रति चिन्ता, मित्रों से सहयोग, पदस्थान परिवर्तन योग, शुभ अंक 6

कुम्भ (गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सा, दा)
कार्य में लक्ष्य के प्रति सजगता, अर्थ साधन में प्रयास, अतिविश्वास और कल्पना से बचें, पारिवारिकजनों का ध्यान रखे, संतान से अनबन, चयन में देरी, शत्रुपक्ष प्रभावी, वाद विवाद से बचे, प्रणय में सुख, अधिकारी से सहयोग, राजनैतिक अपयश, आय में सुधार, शुभ अंक 5

मीन (दी, दू, थ, झ, दे, दो, चा, ची)
सकारात्मक सोच से युक्त हों, कार्य शैली में सुधार करें, विदेश कार्य में प्रयास सार्थक, लक्ष्य के प्रति सजगता, साधनों की पूर्ति, पारिवारिकजनों का सहयोग, अध्ययन में रुचि, मित्रों से सहयोग, क्रोध पर नियंत्रण, दाम्पत्य में सुख, स्थान परिवर्तन का योग, आय में सुधार, शुभ अंक 4

सविस्तर

देशभरातील विद्यार्थी अस्वस्थ का आहेत?

सध्या देशभर सगळीकडे वेगवेगळ्या मुद्द्यांवर विद्यार्थी रस्त्यावर उतरताना दिसत आहेत. वेगवेगळ्या विद्यापीठांमधली आंदोलने अनेकदा निर्णायक टप्प्यावर पोहोचली आहेत. देशभर सर्वत्र एकाच वेळी विद्यार्थ्यांच्या मनात असंतोष का धुमसतो आहे?

रेश्मा शिवडेकर

पेपरफुटी असो, भरतीतील अनिश्चितता असो, वसतिगृहांतील गैरसोयी असोत, सरकारी शाळांची दुरवस्था असो, कॅम्पसमधील मानसिक ताण असो किंवा आंदोलनाच्या अधिकारावरच घातलेली बंधने असोत... या सगळ्याच्या मुळाशी एकच मूलभूत प्रश्न आहे, शिक्षण, करिअर आणि भवितव्याशी संबंधित निर्णय घेताना विद्यार्थ्यांचा आवाज कुठे आहे?

नीटसह विविध परीक्षांमधील गैरप्रकार आणि शिक्षणव्यवस्थेतील गोंधळाविरोधात 'कॉकरोच जनता पार्टी'ने सुरू केलेल्या आंदोलनाचे पडसाद विविध राज्यांत उमटले. सीजेपीने आता 'फिक्स द स्कूल्स' मोहिमेकडे मोर्चा वळवला आहे. सरकारी शाळांमधील पायाभूत सुविधांची पाहणी, शिक्षकांची कमतरता आणि वर्गखोल्यांची दुरवस्था याकडे लक्ष वेधण्याचा प्रयत्न केला जात आहे. त्यामुळे आंदोलनाचा मुद्दा केवळ स्पर्धा परीक्षांपुरता राहिलेला नाही.

आदिवासी विद्यार्थ्यांच्या वसतिगृह प्रवेशाबाबतच्या शासन निर्णयाने महाराष्ट्रात विद्यार्थ्यांचा संताप उफाळून आणला. प्रवेशासाठी वयोमर्यादा निश्चित करण्याबरोबरच वसतिगृहातील विद्यार्थ्यांच्या आंदोलन, उपोषण, मोर्चे आणि माध्यमांशी संपर्कावर निर्बंध आणणाऱ्या तरतुदींवर विद्यार्थ्यांनी आक्षेप घेतला. पुणे, नागपूर आणि यवतमाळसह विविध ठिकाणी विद्यार्थ्यांनी ठिय्या आंदोलन आणि उपोषण केले. दिल्लीतील आयआयटीमध्ये विद्यार्थ्याच्या मृत्यूनंतर विद्यार्थ्यांचा संताप उफाळला. शैक्षणिक ताण, कडक गुणांकन पद्धती, मानसिक आरोग्याच्या सुविधा, वसतिगृहांची स्थिती आणि प्रशासनाची उत्तरदायित्वाची भूमिका यावर त्यांनी प्रश्न उपस्थित केले आणि ठिय्या आंदोलन केले. आयआयटीतील या आंदोलनाने विद्यार्थी असंतोषाचा आणखी एक महत्त्वाचा पैलू पुढे आणला, प्रवेशासाठीची प्रचंड स्पर्धा संपल्यानंतर विद्यार्थ्यांना सुरक्षित आणि मानसिकदृष्ट्या आधार देणारे शैक्षणिक वातावरण मिळते का?

राजस्थान सध्या एकाच वेळी शाळांमधील दुरवस्था आणि रखडलेल्या नोकरीभरती अशा दुहेरी आंदोलनांच्या आगीत होरपळत आहे. बाडमेर, जालोर, सिरोही आणि जयपूर परिसरातील सरकारी शाळांमध्ये शिक्षकांचा आणि पायाभूत सुविधांचा अभाव असल्याने विद्यार्थ्यांनी थेट शाळांनाच टाळे ठोकले. शाळांबरोबरच महाविद्यालयेही पेटली आहेत. राजस्थान विद्यापीठासह विविध कॉलेजांमधील विद्यार्थ्यांनी महाविद्यालयीन

निवडणुका पुन्हा सुरू करण्यासाठी थेट विधानसभेवर धडक देण्याचा प्रयत्न केला, जो पोलिसांनी बॅरिकेड्स लावून हाणून पाडला. त्यातच सीईटीच्या गुणपद्धतीवरून स्पर्धा परीक्षा देणारे विद्यार्थीही रस्त्यावर उतरले असून, भरती प्रक्रियेत निश्चित गुणभार देण्याच्या मागणीसाठी त्यांनी काढलेली 'हुंकार रॅली' सध्या लक्ष वेधून घेत आहे.

बिहारमध्येही बीपीएससीसह इतर सरकारी भरती प्रक्रियांमधील गैरव्यवहार, ऐनवेळी नियमांमध्ये होणारे बदल आणि रोजगाराच्या घटत्या संधींवरून स्पर्धा परीक्षार्थी रस्त्यावर उतरले आहेत. तिथला आक्रोश एका परीक्षेपुरता मर्यादित नाही. सरकारी परीक्षांमधील पारदर्शकतेचा अभाव, निकालांचा बोजवारा, रखडलेली भरती प्रक्रिया आणि वारंवार बदलणारे नियम यांमुळे लाखो परीक्षार्थींचे भवितव्य अनिश्चिततेत आहे.

झारखंडमध्येही जेएसएससी आणि जेपीएससीसह सरकारी भरती परीक्षांमधील कथित गैरव्यवहार आणि प्रक्रियेतील पारदर्शकतेच्या प्रश्नांवरून विद्यार्थ्यांमध्ये असंतोष आहे. परीक्षांमधील गैरप्रकार, भरतीतील विलंब आणि सरकारी नोकरीच्या संधी यामुळे स्पर्धा परीक्षार्थी संघटित होत आहेत.

तेलंगणातील पॉलिटेक्निक (डिप्लोमा) विद्यार्थ्यांनी राज्य सरकारच्या निर्णयाविरोधात दंड थोपटले आहेत. राज्य सरकारच्या या वादग्रस्त प्रस्तावानुसार 'यंग इंडिया स्किल्स युनिव्हर्सिटी'च्या माध्यमातून सरकारी पॉलिटेक्निक शिक्षणाची संपूर्ण पुनर्रचना केली जाणार आहे. यामुळे आपल्या शैक्षणिक भवितव्याला धक्का बसेल अशी भीती विद्यार्थ्यांना आहे. हैदराबादसह करीमनगर, विकाराबाद आणि पाटणचेरू यांसारख्या प्रमुख केंद्रांवर विद्यार्थ्यांनी एकत्र येत जोरदार निदर्शने केली. अखेर सध्याची समांतर प्रवेश पद्धती आणि शिष्यवृत्तीत बदल होणार नसल्याचे सरकारला स्पष्ट करावे लागले.

तामिळनाडूत तर विद्यार्थ्यांनी विशिष्ट आंदोलनांमध्ये किंवा राजकीय निदर्शनांमध्ये सहभागी होऊ नये, अशा आशयाचे एक परिपत्रक तिथल्या सरकारने काढले आणि संपूर्ण राज्यात एका मोठ्या राजकीय वादाला तोंड फुटले. या परिपत्रकाविरोधात विरोधी पक्ष, डावे पक्ष आणि विविध विद्यार्थी संघटनांनी तीव्र संताप व्यक्त करत रणशिंग फुंकले. अखेर सरकारला माघार घेत ते मागे घ्यावे लागले. केरळमध्येही 'नीट'मधील सुधारणा आणि उच्च शिक्षण संस्थांच्या स्वायत्ततेसंबंधी विद्यार्थी संघटनांकडून निषेध होत आहेत. कर्नाटकात उच्च शिक्षण संस्थांमधील मानसिक ताण आणि विद्यार्थ्यांच्या सुरक्षिततेचा प्रश्न पुढे आला आहे.

तरुण लोकसंख्या ही भारताची ताकद मानली जाते. या तरुणाईच्या आकांक्षा प्रामुख्याने शिक्षण, परीक्षा आणि रोजगाराभोवती केंद्रित आहेत. त्यामुळे शिक्षणाशी संबंधित एखादा निर्णय हा केवळ सरकारी आदेश राहत नाही. तो विद्यार्थ्यांच्या भविष्याशी जोडला जातो. पूर्वी विद्यार्थी आंदोलन म्हटले की विद्यापीठातील फीवाढ, परीक्षा किंवा विद्यार्थी निवडणुका हे प्रमुख मुद्दे असत. आता त्यात सरकारी शाळेतील शिक्षकांची पदे, वसतिगृहातील सुविधा, मानसिक आरोग्य, सरकारी भरती, शिक्षणाच्या पुनर्रचनेचे धोरण, आंदोलनाचा अधिकार अशी भर पडली आहे.

देशभर झालेल्या आंदोलनांचे प्रश्न वेगवेगळे आहेत. पण या सगळ्या अस्वस्थतेचा केंद्रबिंदू एकच आहे, आमच्या भवितव्याचे निर्णय घेताना आमचा आवाज का ऐकला जात नाही, असे म्हणत कॅम्पसमधील नाराजी आता रस्त्यावर येत आहे. शाळेपासून ते आयआयटीपर्यंत विद्यार्थी आपापल्या प्रश्नांसाठी उभे राहत आहेत. 'नीट'वरून सीजेपीने आंदोलन छेडले तेव्हा सुरुवातीला फारसा प्रतिसादही नव्हता. आता हा विचार इतका व्यापक होतो आहे की, कोकणातील एका शाळेला जाणाऱ्या खड्ड्यांच्या रस्त्यांचा विषयही 'राष्ट्रीय' बनतो आणि मुलांना दोन दिवसात चांगला रस्ता मिळतो. महाराष्ट्रातच १३ दिवसांचे आंदोलन झाल्यानंतर सरकारला निर्णय मागे घ्यावा लागतो. आयआयटी दिल्लीमध्ये वर्गबहिष्कारानंतर बाह्य चौकशी समिती नेमली जाते. तामिळनाडूत विरोधानंतर परिपत्रक मागे घेतले जाते आणि बिहारमध्ये रस्त्यावर उतरल्यानंतर सरकारला विद्यार्थ्यांशी संवादाची प्रक्रिया सुरू करावी लागते.

त्यामुळे सरकार आणि शिक्षणसंस्थांसमोरील खरी कसोटी आंदोलन कसे थांबवायचे ही नसून आंदोलनाची वेळच का येते, हे समजून घेण्याची आहे. शिक्षणाशी संबंधित निर्णय घेण्यापूर्वी विद्यार्थ्यांशी संवाद, परीक्षा प्रक्रियेत पारदर्शकता, भरतीचे निश्चित वेळापत्रक, शाळा-कॉलेजमधील मूलभूत सुविधा आणि मानसिक आरोग्यासाठी सक्षम यंत्रणा उभी राहिली, तर तरुणाई रस्त्यावर उतरण्याचे प्रमाण निश्चितच कमी होईल.

reshma.shivadekar@expressindia.com

बड्यांचा 'हेअरकट', सामान्यांना भुर्दंड...

विवेक वेलणकर

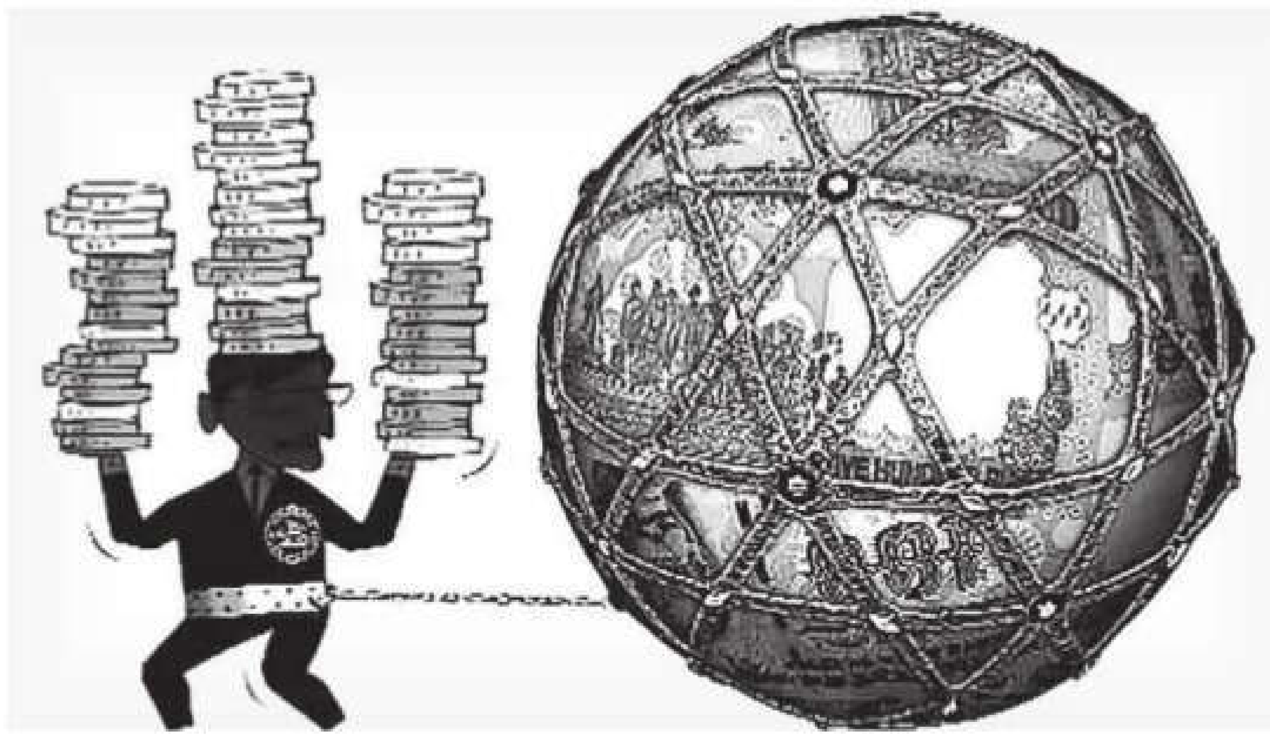

बड्या कर्जदारांची हजारो कोटींची कर्जे निर्लेखित होतात, त्याहून मोठ्या रकमांवर 'हेअरकट' घेऊन कर्जप्रकरणे संपवली जातात; मात्र सामान्य कर्जदाराकडून पै आणि पै वसूल केली जाते. बड्या थकबाकीदारांच्या नावांभोवती गोपनीयतेचे कवच आणि छोट्या कर्जदारांची जाहीर बदनामी, असा हा बँकिंग व्यवस्थेतील दुहेरी न्याय. माहिती अधिकारातून समोर आलेल्या आकडेवारीने या व्यवस्थेतील मोठ्या विसंगतीवरच प्रश्नचिन्ह उभे केले आहे.

झी उद्योगसमूहाचे सर्वेसर्वा सुभाषचंद्र यांचं २२ हजार कोटींचं कर्ज सव्वासहा कोटींमध्ये संपवण्यात आल्याच्या बातमीने सगळ्यांना हेअरकट नावाचा शब्द माहीत झाला. २०१६ साली गाजावाजा करून इनसॉल्व्हन्सी आणि बँकरप्सी कोड या नावाने आणलेल्या कायद्यानुसार बँकांना थकीत कर्जवसुलीसाठीची सोपी व्यवस्था निर्माण केली गेली. बँकांना आपली कर्जवसुली करण्यासाठी एनसीएलटी या विशेष कोर्टात या कायद्यान्वये जाण्याची सुविधा निर्माण झाली. या ठिकाणी गेल्यानंतर बँकांना संपूर्ण वसुली मिळणे शक्य नसेल तर थोडीफार तडजोड करावी लागते आणि या प्रक्रियेत ज्या रकमेवर पाणी सोडून प्रकरण निकाली काढले जाते त्या रकमेला हेअरकट असे म्हटले जाते. यासंदर्भात आधी बँकांमधील थकबाकीबाबतच्या काही संज्ञांची माहिती घेणं आवश्यक आहे.

कर्जदार सलग तीन महिने बँकेच्या कर्जाचे हप्ते देत नाही तेव्हा ते कर्ज एनपीए होते. मग बँक त्या कर्जाच्या वसुलीसाठी विशेष प्रयत्न सुरू करते. २०१५ पर्यंत बहुतेक सार्वजनिक क्षेत्रातील बँकांचे एनपीए १० टक्क्यांच्या वर होते. २०१५ मध्ये रिझर्व्ह बँक ऑफ इंडियाने बँकांना ॲसेट क्वालिटी रिव्ह्यू करण्यास सांगितले. जी कर्जे वसूल होण्याची शक्यता उरलेली नाही ती निर्लेखित (write off) करायला बँकांनी सुरुवात केली. आपल्या नफ्यातून ही प्रक्रिया केल्याने त्यांचा आयकर वाचला आणि भागधारकांना लाभांश देण्याचीही गरज उरली नाही.

निर्लेखित कर्जे बँकांच्या ताळेबंदातून काढून टाकली जात असली तरी त्यांची वसुली प्रक्रिया सुरूच राहते असे बँका सांगतात. माहिती अधिकार कायद्याअंतर्गत यासंदर्भात विचारणा केली असता बड्या कर्जदारांची (१०० कोटींहून अधिक कर्जे) किती कर्जे निर्लेखित केली आणि आजवर किती वसुली झाली याची माहिती अत्यंत धक्कादायक होती. स्टेट बँक ऑफ इंडियाने नुकत्याच दिलेल्या माहितीनुसार बँकेने गेल्या दहा वर्षांत बड्या कर्जदारांचे (१०० कोटींवरील) १,५१,८५७ कोटी रुपये निर्लेखित केले आहेत. आजवर त्यातील जेमतेम १४ टक्के म्हणजे २०,८३८ कोटी रुपयांची वसुली होऊ शकली आहे. सेंट्रल बँक ऑफ इंडियाच्या माहितीनुसार गेल्या दहा वर्षांत बड्या कर्जदारांचे (१०० कोटींवरील) २६,७०१ कोटी रुपये निर्लेखित केले व आजवर त्यातील जेमतेम १५ टक्के म्हणजे ३,८७५ कोटी रुपयांची वसुली होऊ शकली आहे. बँक ऑफ बरोडाने गेल्या सहा वर्षांत बड्या कर्जदारांचे (१०० कोटींवरील) ३५,७१५ कोटी रुपये निर्लेखित केले व आजवर त्यातील जेमतेम २७ टक्के म्हणजे ९,९४६ कोटी रुपयांची वसुली होऊ शकली आहे. बँक ऑफ महाराष्ट्रने गेल्या दहा वर्षांत बड्या कर्जदारांचे (१०० कोटींवरील) ११,३१३ कोटी रुपये निर्लेखित केले असून आजवर त्यातील जेमतेम २४ टक्के म्हणजे २,७२७ कोटी रुपयांची वसुली होऊ शकली आहे. मात्र यापैकी एकाही बँकेने हे बडे थकबाकीदार कोण आहेत, त्यांची प्रत्येकी किती कर्जे, कधी निर्लेखित केली याची माहिती द्यायला नकार दिला.

बँकिंगमध्ये विलफुल डिफॉल्टर अशी संज्ञा आहे. म्हणजे कर्ज फेडण्याची ऐपत असूनही कर्ज फेडत नाहीत किंवा घेतलेले कर्ज भलतीकडेच वळवलेले असते असे थकबाकीदार. अशा विलफुल डिफॉल्टरची कर्जवसुली करण्यासाठी बँका सरफेसी कायदा, डीआरटी तसेच एनसीएलटी यांचा आधार घेतात.

एनसीएलटीमध्ये बँकांना कशा प्रकारचे हेअरकट घ्यावे लागतात हे सुभाषचंद्र केसमध्ये सगळ्यांना कळले. मी यासंदर्भात माहिती अधिकाराअंतर्गत विचारले होते की संबंधित राष्ट्रीयीकृत बँकानी गेल्या नऊ वर्षांत किती थकबाकीदारांची प्रकरणे एनसीएलटीमध्ये नेली आणि त्यात त्यांना किती हेअरकट सोसावा लागला? गेल्या नऊ वर्षांत स्टेट बँक ऑफ इंडियाने ३०९ प्रकरणे एनसीएलटीमध्ये नेली. त्यामध्ये एकूण अडकलेली रक्कम होती १,४९,८९५ कोटी रुपये आणि शेवटी बँकेला तब्बल एक लाख कोटी रुपयांचा हेअरकट (६७ टक्के) घेऊन फक्त ४९,७०० कोटी रुपयांच्या वसुलीवर समाधान मानावे लागले.

बँक ऑफ महाराष्ट्रने सहा वर्षांत २७ प्रकरणे एनसीएलटीमध्ये नेली. त्यामध्ये एकूण अडकलेली रक्कम होती ३,६९० कोटी रुपये आणि शेवटी बँकेला तब्बल २,४६३ कोटी रुपयांचा हेअरकट (६७ टक्के) घेऊन फक्त १,२२७ कोटी रुपयांच्या वसुलीवर समाधान मानावे लागले. बँक ऑफ बडोदाने गेल्या सहा वर्षांत ७,८१७ कोटी रुपयांचा हेअरकट घेतला एवढेच सांगितले. माहिती अधिकारातही अशी महत्त्वाची माहिती नाकारली जाणे ही या कायद्याचा धाक उरला नसल्याची प्रचीती आहे. तिन्ही बँकांनी कोणत्या प्रकरणात किती हेअरकट घेतला आणि कोणत्या थकबाकीदारांमुळे बँकेला हा तोटा सहन करावा लागला ही माहिती देण्यास गोपनीयतेच्या नावाखाली नकार दिला.

वास्तविक जी प्रकरणे एनसीएलटी न्यायालयात गेली आणि बँकेला हेअरकट सोसावा लागून कायमची संपली त्या प्रकरणांमध्ये थकबाकीदारांची नावे गोपनीय ठेवण्याचे कारणच काय? नुकतीच मी स्टेट बँकेची वर्तमानपत्रात प्रसिद्ध झालेली एक जाहिरात पाहिली. त्यात एका मोटारगाडीच्या कर्जदाराचे सहा लाख रुपये कर्ज एनपीए झाले म्हणून त्याच्या गाडीचा बँकेने लिलाव काढला होता. या जाहिरातीत तर गाडीच्या वर्णनाबरोबरच कर्जदाराचे नाव आणि पत्ताही प्रसिद्ध केला होता. म्हणजे बँक त्याच्या गाडीचा लिलाव करून कर्जवसुली करणार, वर थकबाकीदार म्हणून त्याचे नाव प्रसिद्ध करणार आणि दुसरीकडे ज्या बड्या कर्जदारांमुळे हजारो कोटी रुपयांचा हेअरकट सोसावा लागला त्यांची नावे मात्र गोपनीय ठेवणार, हा काय प्रकार आहे?

हेअरकटच नाही तर पूर्ण नुकसान झालेल्या प्रकरणांमध्येही बँका थकबाकीदारांचे नाव गोपनीय ठेवतात, यात एक अंतस्थ हेतू असावा. समजा, काही ठरावीक मंडळींनाच अनेक बँकांनी कर्जे दिली आहेत आणि हेअरकटरूपी नुकसान सोसून या बँकांनी ही प्रकरणे मिटवली आहेत, असे दिसून आले, तर त्यासाठी संचालक मंडळाला जबाबदार धरले जाऊ शकते. या भीतीने ही नावे दडवली जात असावीत.

बँकांच्या या अपारदर्शक कारभाराचा फटका शेवटी सामान्य माणसालाच बसतो, कारण हेअरकटमधून झालेले नुकसान भरून काढण्यासाठी बँका एसएमएस चार्जेस, मिनिमम बॅलन्स पेनल्टी या मार्गांनी ग्राहकांकडून पैसे काढतात. गेल्या फक्त चार वर्षांत भारतातील बँकांनी सर्वसामान्य माणसांकडून २६,१७० कोटी रुपयांची रक्कम मिनिमम बॅलन्स पेनल्टी या नावाने उकळली आहे. गेल्या काही वर्षांत केंद्र सरकारने सामान्य माणसाच्या करांचे जवळपास साडेतीन लाख कोटी रुपये या बँकांमध्ये रीकॅपिटलायझेशनच्या नावाखाली टाकले आणि या बँकांनी त्याचा उपयोग कर्जे निर्लेखित करण्यापासून हेअरकट घेण्यापर्यंत केला आहे.

छोट्या थकबाकीदारांची नावापत्त्यासह वर्तमानपत्रातून जाहिर बदनामी करून त्यांची घरेदारे विकून कर्जवसुली करण्यात तत्परता दाखवणाऱ्या बँका बड्या कर्जदारांबाबत बोटचेपी भूमिका घेतात, मोठाल्या रकमांवर पाणी सोडतात आणि रिझर्व्ह बँक ऑफ इंडिया आणि अर्थमंत्रालय यात बघ्याची भूमिका घेते, हे दुर्दैवी आहे. मुळात बेजबाबदारपणे ही मोठाली कर्जे देणे, मग ती निर्लेखित करणे, मग त्यांची वसुली करण्यात अपयश येणे, हजारो कोटी रुपयांवर पाणी सोडून द्यावे लागणे या सगळ्याला जबाबदार असते ते संचालक मंडळ. त्याच्यावर काहीच कारवाई होत नाही हे जनतेचे दुर्भाग्य.

अध्यक्ष, सजग नागरिक मंच

vkvelankar@gmail.com

चांदनी चौकातून

दिल्लीवाला

मॉर्निंग वॉक ते स्पेशल सेल

दिल्लीत सकाळी 'मॉर्निंग वॉक'ला निघालेल्या माजी सनदी अधिकाऱ्याचा दिवस नेहमीसारखा सुरू झाला, पण संपला मात्र 'स्पेशल सेल'च्या नऊ तासांच्या चौकशीत! आशीष जोशी यांच्यावरील कारवाईने समाजमाध्यमांवरील अभिव्यक्तिस्वातंत्र्य, पोलिसांचा तपास आणि राजकीय टीकेच्या मर्यादा या गोष्टी पुन्हा ऐरणीवर आणल्या आहेत. जोशींनी दाखवलेले धाडस इतरही माजी सनदी अधिकाऱ्यांनी दाखवले, तर सर्वसामान्यांनाही सरकारविरोधात आवाज उठवण्यासाठी नक्कीच बळ मिळेल. जोशी ट्वीट करायला घाबरत नाहीत, त्यांची ट्वीट्स धाडसी असतात. त्यांच्याविरोधात दाखल झालेला गुन्हा त्यांनी केंद्रीय निवडणूक आयुक्त ज्ञानेश कुमार यांच्याबद्दल केलेल्या टिप्पणीसंदर्भात होता. त्यासंदर्भात त्यांनी 'न्युरेम्बर्ग-शैलीतील खटल्या'चा उल्लेख केला होता. न्युरेम्बर्ग खटले हे नाझी जर्मनीच्या प्रमुख नेत्यांवरील युद्धगुन्ह्यांच्या खटल्यांसाठी ओळखले जातात. हा शब्दप्रयोग सरकारला खटकला असावा; त्यामुळे कदाचित जोशींची चौकशी केली गेली असावी. जोशींना सकाळी-सकाळी पोलिसांनी ताब्यात घेतले आणि त्यांची चौकशी केली. पण जोशींच्या म्हणण्यानुसार, नऊ तासांच्या चौकशीत ६० ते ७० टक्के प्रश्न १२ ऑगस्टच्या दुसऱ्या ट्वीटसंदर्भातील होते. म्हणजेच, ज्ञानेश कुमारांवर केलेल्या टिप्पणीवर सरकार फारसे नाराज झालेले नाही! जोशींचे दुसरे ट्वीट केंद्रीय गृहमंत्री आणि गृहसचिव यांच्यात जंतर-मंतरवरील आंदोलनाच्या पार्श्वभूमीवर झालेल्या कथित मतभेदांविषयी होते. (हे ट्वीट 'एक्स'वरून काढून टाकण्यात आले आहे). या ट्वीटमधील माहितीचा स्रोत कोण, असा पोलिसांचा प्रश्न होता. स्रोत उघड करण्यास जोशींनी नकार दिला असावा; त्यामुळे 'गुन्हा एका ट्वीटसाठी आणि चौकशी दुसऱ्याचीच' असे झाले. नऊ तास त्यांना गृहमंत्र्यांशी संबंधित ट्वीटवरच प्रश्न विचारले गेले. ताब्यात घेतल्याची माहिती जोशींच्या कुटुंबीयांना दिली गेली नाही. जोशींचा असा दावा आहे की, मॉर्निंग वॉकनंतर त्यांना थेट चौकशीसाठी नेण्यात आले आणि पत्नीशी संपर्क करण्याची परवानगी दिली गेली नाही; तर कुटुंबीयांना माहिती दिली होती, असे पोलिसांचे म्हणणे आहे. समाजमाध्यमांत सरकार, निवडणूक आयोग किंवा घटनात्मक पदाधिकाऱ्यांवर टीका केली तर जरब बसवली जाईल, असा संदेश या प्रकरणातून दिला गेला आहे. तरीही जोशींनी ट्वीट करणे थांबवलेले नाही. त्यांनी 'दिमागी नक्षल'पासून पुण्यातील बापटांपर्यंत अनेक चर्चेतील मुद्द्यांवर टिप्पणी केली आहे.

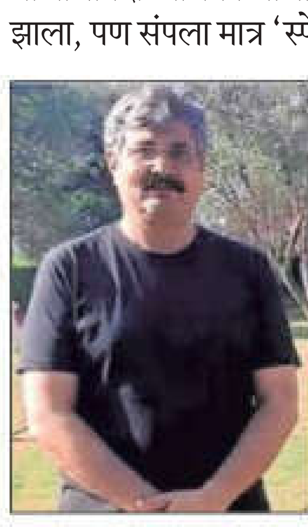

पुन्हा वकिली करणार?

माजी उपराष्ट्रपती जगदीप धनखड यांना दिल्लीत कोणी घर देईल का, असे म्हणण्याची वेळ आली आहे. ते अचानक उपराष्ट्रपतीपदावरून पायउतार झाले. त्यांची प्रकृती काही कारणांमुळे बिघडली; त्यामुळे त्यांनी अत्यंत महत्त्वाचे सांविधानिक पद सोडून देण्याचा निर्णय घेतला. त्यांची प्रकृती नक्की कशामुळे बिघडली, हे त्यांनी अजून जाहीर केलेले नाही. त्यांनी खरे तर आत्मचरित्र लिहिणे अपेक्षित आहे. त्यांच्याकडे खूप मोकळा वेळ आहे, तरीही ते लिहायला तयार नाहीत; किंवा त्यांनी लिहिले असेल तर ते अजून आपल्यापर्यंत आलेले नाही. काही जण पुस्तक लिहितात, पण त्यांना ते प्रकाशित करण्याची मुभा दिली जात नाही. माजी लष्करप्रमुख निवृत्त जनरल मनोज नरवणे यांचे पुस्तक प्रकाशित होता होता राहून गेले. आता त्यांना त्यावर काही बोलताही येत नाही. असे म्हणतात की, केंद्र सरकारने घेतलेल्या काही निर्णयांवर त्यांनी आक्षेप नोंदवला होता; परंतु त्यावर ते जाहीरपणे बोललेले नाहीत. असो. तसेच काहीसे धनखड यांच्याबाबतीत झालेले असू शकते. धनखड पायउतार होऊन 'तात्पुरत्या निवासा'त राहायला गेले; पण हा शब्द फारच लवचीक झाला. ते तात्पुरत्या निवासात जाऊन वर्षभराचा काळ लोटला, तरीही ते अजून तिथेच आहेत. ते 'इंडियन नॅशनल लोकदल'चे नेते अभयसिंह चौताला यांच्या छतरपूरमधील फार्म हाऊसमध्ये राहात आहेत. खरे तर त्यांना केंद्र सरकारने ल्युटन्स दिल्लीमध्ये खुल्या कोट्यातून 'टाइप-८' श्रेणीतील निवासस्थान द्यायला हवे होते. माजी उपराष्ट्रपतींना तहहयात सरकारी निवासस्थान दिले जाते. नियमांनुसार त्यांना भाडेमुक्त, सुसज्ज सरकारी निवास, तसेच पाणी आणि वीज शुल्कातूनही सूट मिळते. या श्रेणीचा बंगला दिल्लीत उपलब्धच नाही, हे आश्चर्यकारक म्हटले पाहिजे. धनखड पायउतार झाले तेव्हा त्यांच्यासाठी बंगला दिला जाईल, असे सांगितले जात होते. तत्कालीन मराठी खासदाराला दिलेला बंगला धनखडांसाठी असेल, अशी चर्चा होती. हे खासदार कार्यकाळ संपून दिल्लीतून गेले, तरीही धनखड अजून फार्म हाऊसवरच आहेत. सांविधानिक पदावरून निवृत्त झालेल्या किंवा पायउतार झालेल्या व्यक्तीला दिल्लीमध्ये सरकारने घर दिले नाही, असे कधी झालेले नाही. धनखडांचे पूर्वसुरी व्यंकय्या नायडू यांची उपराष्ट्रपतीपदाची मुदत संपल्यानंतर दोन महिन्यांच्या आत त्यांना दिल्लीत त्यागराज मार्गावर सरकारी बंगला दिला गेला. मग धनखडांनाच 'तात्पुरत्या' खासगी निवासात का राहायला लागत आहे, हे कोडेच आहे. धनखड मध्यंतरी संघाशी निगडित एका कार्यक्रमाला गेले होते; त्यानंतर त्यांचे सार्वजनिक दर्शन फारसे झालेले नाही. ते अत्यंत खासगी आयुष्य जगत आहेत, असे दिसते. काही दिवसांपूर्वी धनखडांनी सर्वोच्च न्यायालयाच्या बार असोसिएशनच्या निवडणुकीत मतदानासाठी हजेरी लावली होती. वरिष्ठ अधिवक्ता म्हणून ते सर्वोच्च न्यायालयात वकिली करत होते. पुढे ते पश्चिम बंगालचे राज्यपाल आणि नंतर उपराष्ट्रपती झाले. पण आता त्यांनी पुन्हा बार असोसिएशनचे सदस्यत्व स्वीकारल्याचे समजते; धनखड पुन्हा वकिलीच्या जगात परत येत आहेत असे दिसते.

संवाद की नियंत्रण...

जलशक्ती मंत्रालयाच्या शिखर परिषदेनिमित्त दिल्लीत आलेल्या भाजपशासित राज्यांतील २३ मंत्र्यांना पंतप्रधान नरेंद्र मोदींनी चहापानासाठी बोलावले होते. या बैठकीत पंतप्रधानांनी विविध राज्यांच्या मंत्र्यांशी थेट संवाद साधला. २०११ मध्ये तत्कालीन पंतप्रधान डॉ. मनमोहन सिंग यांनी अशा प्रकारची बैठक घेतली होती, त्यानंतर ही परंपरा बंद पडली होती. ही संवाद परंपरा मोदींनी पुन्हा सुरू केली आहे. भाजपच्या 'सुशासन आणि धोरण संशोधन' विभागाचे प्रमुख व माजी खासदार विनय सहस्रबुद्धे यांनी या बैठकीचे नियोजन केले होते. या उपक्रमाचा भाग म्हणून भाजपचे राष्ट्रीय अध्यक्ष नितीन नवीन यांनीही या राज्य मंत्र्यांसाठी स्नेहभोजन आयोजित केले होते. २०२९ च्या लोकसभा निवडणुकीच्या पार्श्वभूमीवर राज्यस्तरीय नेत्यांना केंद्रीय नेतृत्वाशी जोडणे आणि संघटित रणनीती आखणे हा यामागचा मुख्य उद्देश मानला जात आहे. पंतप्रधान मोदींनी गेल्या १८ ते २० महिन्यांत पक्षाचे खासदार, नवनिर्वाचित पदाधिकारी आणि केंद्रीय मंत्र्यांसोबत अनौपचारिक बैठकांचे सत्र सुरू ठेवले आहे. ३१ जानेवारीला मोदींनी ३७ नवनिर्वाचित राज्यसभा खासदारांशी नाश्त्यानिमित्त चर्चा केली. त्यात त्यांनी संसदीय अभ्यासावर भर दिला होता. २१ मे रोजी केंद्रीय मंत्रिमंडळाच्या ४-५ तास चाललेल्या बैठकीत विशेष चिंतन केले गेले. १० जून रोजी तिसऱ्या मोदी सरकारमधील मंत्रिमंडळाची पहिली बैठक झाली होती. ५ ऑगस्टला त्यांनी लोकसभा खासदारांशी संवाद साधला, तर २२ ऑगस्ट रोजी राष्ट्रीय अध्यक्ष नितीन नवीन व नवनियुक्त पदाधिकाऱ्यांशी 'गट चर्चा' केली होती. ''अशा अनौपचारिक व संघटनात्मक बैठकांमुळे नवीन कल्पना आणि आधुनिक दृष्टिकोन मिळतो,'' असे मोदी म्हणाले होते. २०११ नंतर खंडित झालेली ही संवाद परंपरा आता पुन्हा सुरू झाली आहे. केंद्र व राज्य यांच्यातील संवाद वाढवण्याचा हा प्रामाणिक प्रयत्न आहे, की थेट राज्यातील मंत्र्यांशी बोलून राज्य सरकारांवर अधिक नियंत्रण ठेवले जात आहे, याचे उत्तर ज्याचे त्यानेच शोधलेले बरे!

सत्रसमाप्ती प्रलंबित; विशेष अधिवेशन?

संसदेचे पावसाळी अधिवेशन संपले असले, तरी त्यावर राष्ट्रपतींनी अधिकृतपणे शिक्कामोर्तब केलेले नाही. अधिवेशन संपून तीन आठवडे झाले तरीही सत्रसमाप्तीची घोषणा झालेली नाही. सर्वसाधारणपणे अधिवेशन संपल्यानंतर काही दिवसांतच राष्ट्रपतींकडून सत्रसमाप्तीची घोषणा होते, मात्र यावेळी तसे झालेले नाही. त्यामुळे केंद्र सरकार विशेष अधिवेशन बोलावणार असल्याची दाट शक्यता दिसू लागली आहे. सरकारने याची अधिकृत घोषणा केलेली नाही; पण आठवडाभराच्या मुदतीतही सरकार असे अधिवेशन घेऊ शकते. केंद्र सरकारला कोणत्याही परिस्थितीत लोकसभेच्या मतदारसंघांच्या फेररचनेचे घटनादुरुस्ती विधेयक संमत करायचे आहे, त्यासाठी खटपट सुरू आहे. मध्यंतरी केंद्रीय गृहमंत्री अमित शहा यांनी दक्षिण भारताचा दौराही केला होता. तमिळनाडूतील 'टीव्हीके'च्या सरकारने हिरवा कंदील दिला, तर हे विधेयक संमत होण्यातील अडथळा दूर होऊ शकतो; पण तसे अजून तरी झालेले नाही. त्यातून मार्ग निघाला तर याच महिन्यात विशेष अधिवेशन घेतले जाऊ शकते. त्यामुळेच कदाचित राष्ट्रपतींनी सत्रसमाप्तीची घोषणा केलेली नसावी. जोपर्यंत हे अधिवेशन होत नाही, तोपर्यंत केंद्रीय मंत्रिमंडळात फेरबदलही होणार नाही. जितके अधिवेशन लांबेल, तितका मंत्रिमंडळ फेरबदल लांबणीवर पडेल. त्यामुळे सर्वांचे लक्ष या विशेष अधिवेशनाकडे लागले आहे.

दणदणाट विरुद्ध खणखणाट

गणेशोत्सव मिरवणुकांतील दणदणाटी आवाजाविरोधात पुण्यातील नागरिकांचा एक प्रतिनिधी आवाज उठवतो. आणि म्हणता म्हणता त्याच्या सुरात राज्यभरातल्या नागरिकांचे दबके सूर सामील होतात. उत्सवांतील ध्वनिप्रदूषण हा गेल्या काही वर्षांत संघर्षाचा मुद्दा बनला आहे. मुंबई, पुण्यापासून नाशिक, मराठवाडा, विदर्भापर्यंत या ध्वनिप्रदूषणाचे समर्थक आणि विरोधक यांच्यात दरवर्षी चकमकी झडताना दिसतात. दरवर्षी न्यायालये आपल्याच आधीच्या निकालांची आठवण करून सरकार, पोलीस, मंडळे यांना आवाज नियंत्रणात ठेवण्याची तंबी देतात. त्यामुळे उत्सवाच्या तोंडावर उमटणारे हे डीजेविरोधी सूर नवखे नाहीत. मग यंदा वेगळे ते काय? पुण्यातील बापट यांच्या मागणीनंतर पसरलेले डीजेविरोधाचे हे लोण नेमके कितपत प्रभावी ठरेल आणि आधीपासूनच डीजेबंदीची ग्वाही देणारे पोलीस खरंच या दणदणाटाला आवर घालू शकतील काय, या प्रश्नांचा मुंबई, पुणे, ठाणे आणि नागपूर असा शहरागणिक केलेला ऊहापोह.

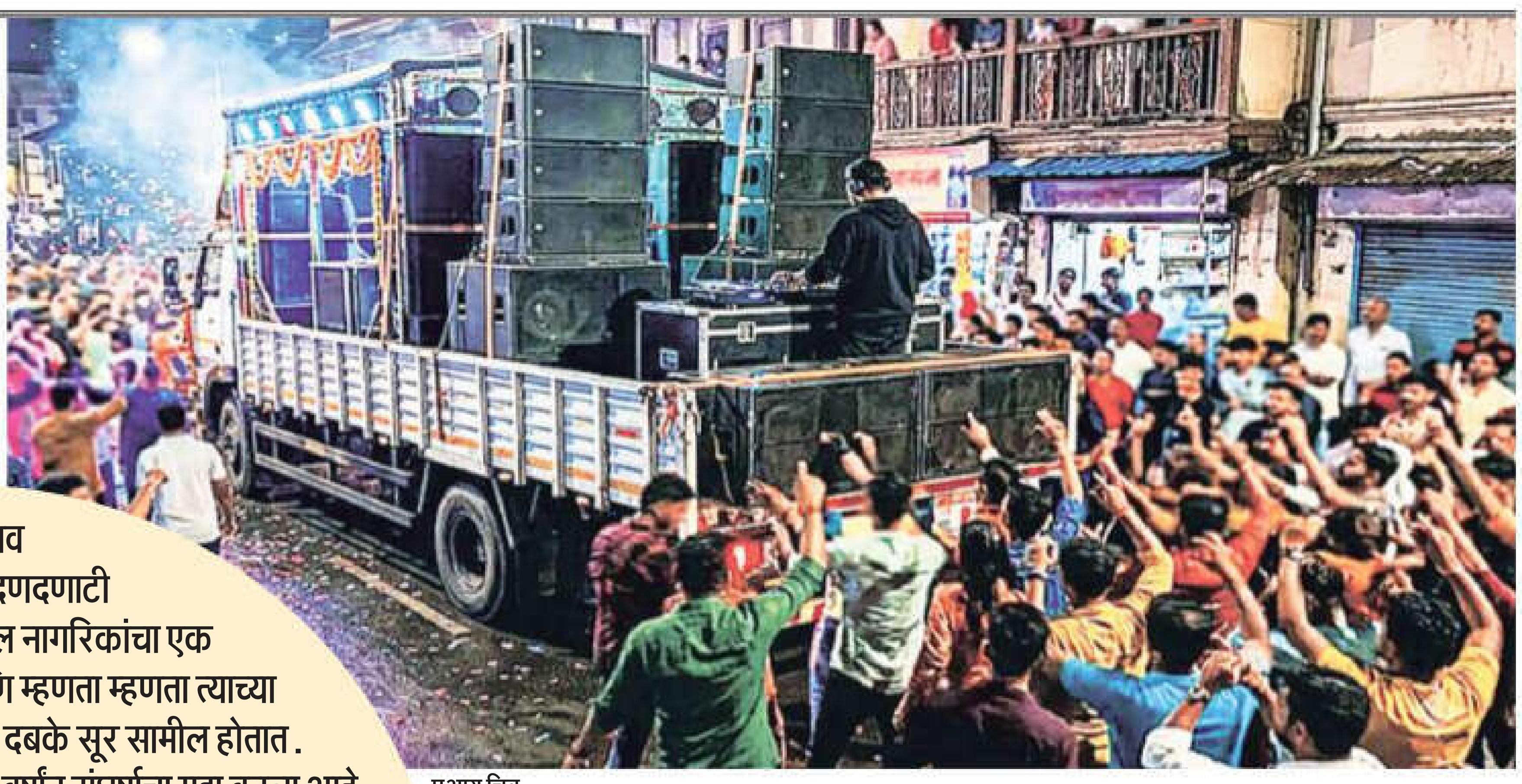

एआय चित्र

ज्या ठाण्यात नियमांची निर्मिती, तिथेच विसर्जनही!

जयेश सामंत; निलेश पानमंद

दहीहंडी, गणेशोत्सवाचा हंगाम सुरू झाला की शहरात नाकानाक्यांवर उत्सवी धुडगूस ठाणेकरांना नवा नाही. त्याला काही प्रमाणात वेसण घालण्याचा प्रयत्न केला तो ठाण्यातील प्रसिद्ध स्त्रीरोगतज्ज्ञ डॉ. महेश बेडेकर यांनी. उत्सवातील दणदणाट, ध्वनिप्रदूषण, वाहतुकीचे अडविले जाणारे रस्ते, याविरोधात त्यांनी दीड दशकांपूर्वी दिलेला न्यायालयीन लढा हा नागरी हक्कांच्या चळवळीचा एक वस्तुपाठच.

डॉ. महेश बेडेकर हे ठाण्याच्या गावदेवी परिसरातील डॉ. बेडेकर हॉस्पिटल फॉर विमेन अँड चिल्ड्रन या संस्थेच्या माध्यमातून वैद्यकीय सेवा देतात. त्यांच्या रुग्णालयाच्या परिसरात एक सभागृह आहे. तेथील लग्नसोहळ्यांमध्ये तसेच खासगी कार्यक्रमांमध्ये ध्वनिप्रदूषण नियमांचे उल्लंघन केले जात होते. रुग्णालयातील रुग्णांना या आवाजाचा त्रास होत होता. डॉ. बेडेकर यांनी राज्यात ध्वनिप्रदूषण नियंत्रणाच्या नियमांची प्रभावी अंमलबजावणी व्हावी, अशी याचिका २०१० मध्ये न्यायालयात दाखल केली. या प्रकरणात २०१२ आणि २०१६ मध्ये महत्त्वपूर्ण न्यायालयीन आदेश झाले. शहरातील शांतता क्षेत्र निश्चित करण्यात आले. उत्सवस्थळी ध्वनी मापन करण्यास आणि प्रदूषण करणाऱ्यांविरोधात गुन्हे दाखल होण्यास सुरुवात झाली. ठाणे शहरात गेल्या १५ ते १६ वर्षांपासून दहीहंड्यांमध्ये मोठमोठ्या रकमेची बक्षिसे दिली जात आहेत. साहसी खेळ म्हणून राजकीय नेते त्याला प्रोत्साहन देतात. मात्र, हा साहसी खेळ मैदानाऐवजी रस्ते अडवून खेळला जात होता. तसेच गणेशोत्सवासाठीही रस्ते अडवून मंडप उभारण्याची प्रथा शहरात सुरू झाली. सण-उत्सवांमध्ये मोठ्या आवाजातील ध्वनिक्षेपक, डीजे, मिरवणुका आणि सार्वजनिक रस्त्यांवरील अडथळे यामुळे सामान्य नागरिकांना होणाऱ्या त्रासाचा मुद्दा लक्षात घेऊन डॉ. बेडेकर यांनी २०१२ मध्ये दुसरी याचिका दाखल केली. यात उत्सवांसाठी नियमावली लागू करण्याची मागणी केली. या याचिकांमुळे प्रशासनाच्या जबाबदारीचा मुद्दाही न्यायालयीन चर्चेत आला आणि संपूर्ण राज्यासाठी उच्च न्यायालयाच्या निर्देशानुसार सण-उत्सव नियमावली लागू झाली. सण-उत्सव, सार्वजनिक रस्ते, ध्वनिप्रदूषण, वाहतूक व्यवस्था, मंडपांना परवानगी अशा विविध मुद्द्यांवर सखोल ऊहापोह या याचिकेच्या सुनावणी दरम्यान झाला. माजी न्यायमूर्ती अभय ओक यांच्या खंडपीठाने या प्रकरणात महत्त्वपूर्ण निर्णय दिला. रस्ते किती प्रमाणात अडवता येतील, मंडपांना परवानगी देताना कोणते निकष असावेत, वाहतुकीचे नियोजन कसे केले जावे, ध्वनिप्रदूषणाच्या नियमांचे पालन कसे व्हावे यांसह अनेक महत्त्वाचे मुद्दे या निर्णयात स्पष्ट करण्यात आले. डॉ. बेडेकर यांच्या लढ्यामुळे ध्वनिप्रदूषण नियंत्रण आणि उत्सवांतील नियमांच्या अंमलबजावणीचा मुद्दा सातत्याने चर्चेत राहिला. धार्मिक स्थळांवरील लाऊडस्पीकर, फेरीवाला धोरण, गावदेवी मैदान आणि मतदानासाठी 'नोटा'चा अधिकार अशा याचिकाही त्यांनी आतापर्यंत दाखल केल्या आहेत. त्यामध्येही न्यायालयाने महत्त्वाचे निर्देशही दिले आहेत.

अंमलबजावणीसाठी आग्रह का?

गणेशोत्सव, दहीहंडी, नवरात्रोत्सव किंवा दिवाळीच्या काळात ध्वनीची पातळी, रस्त्यांवरील मंडप आणि वाहतूक यासंदर्भातील नियमांची अंमलबजावणी हा मुद्दा इतक्या वर्षांनंतरही कायम राहिला आहे. उच्च न्यायालयाने ध्वनिप्रदूषणाच्या नियमांच्या अंमलबजावणीसंदर्भात निर्देश दिल्यानंतरही प्रत्यक्ष उत्सवांमध्ये नियमांचे उल्लंघन होत असल्याचा मुद्दा सातत्याने उपस्थित केला जात आहे. उत्सवांच्या काळात डॉ. बेडेकर विविध ठिकाणी ध्वनीची पातळी मोजून त्याची आकडेवारीही समोर आणतात. २०२३ मध्ये गणेशोत्सवातील विसर्जन मिरवणुकांदरम्यान ठाण्यात आवाजाची पातळी १०० डेसिबलपर्यंत पोहोचली होती. मुळात ध्वनिप्रदूषण रोखायचे कुणी यावरूनही सरकारी यंत्रणांमध्ये समन्वय नाही. प्रदूषण नियंत्रण मंडळ, महापालिका, जिल्हाधिकारी कार्यालयांमध्ये तक्रारींसाठी दूरध्वनी क्रमांक देण्यात आले आहेत. मात्र तिथल्या तक्रारी पुढील कारवाईसाठी पोलिसांकडे पाठवून या यंत्रणा हात वर करतात. राज्यातील पोलिसांकडे आवाजाची पातळी मोजणाऱ्या यंत्रांचा तुटवडा असल्याचा मुद्दा मध्यंतरी पुढे आला होता. आवाजाची पातळी १० मिनिटे मोजल्यानंतर प्रदूषण आढळले तर तो आवाज तातडीने बंद करावा. त्यानंतरही हे प्रदूषण सुरू राहिले तर त्याचे मोजमाप करून तारीख, वेळ आणि ठिकाणासह त्याचा पंचनामा करून गुन्हा दाखल करावा असे नियम सांगतो. हे पुरावे पुढील कारवाईसाठी न्यायालयात दाखल करावेत तसेच घटनास्थळी प्रदूषण साहित्य जप्त करून प्रदूषण रोखावे असे कायदा सांगतो. मात्र तक्रार आल्याखेरीज कारवाई नाही असा पवित्रा आता राज्यातील सर्वच पोलिसांनी घेतल्याचे पाहायला मिळते. सत्ताधीशांची या सगळ्यावर भूमिका स्पष्ट नाही. त्यामुळे सण, उत्सवांच्या काळात 'सबुरी'ने घेण्याचे आदेश वरून येतात. एकनाथ शिंदे यांची मुख्यमंत्रीपदी निवड झाल्यानंतर तर त्यांनी दहीहंडी, गणेशोत्सवाच्या ठिकाणी दौरे सुरू केले. रस्ते अडवून साजऱ्या होणाऱ्या, रात्री उशिरापर्यंत दणदणाट करणाऱ्या उत्सवांना मुख्यमंत्रीच भेटी देत असल्याचे पाहून पोलिसांनी मंडळांना 'अभय' देण्याचा मार्ग पत्करला. ज्या ठाण्यात ध्वनिप्रदूषणाबाबत नियम असावेत, यासाठी चळवळ उभारली गेली, तेथेच नियमांचे झालेले हे विसर्जन धक्कादायक आहे.

jayesh.samant@expressindia.com
nilesh.panmand@expressindia.com

डीजे, बापट आणि पुणेकर

सिद्धार्थ केळकर

गणेशोत्सवाला सर्वांत पहिल्यांदा सार्वजनिक रूप ज्या शहरात मिळाले, त्या पुणे शहराचा प्रवास आज सार्वजनिक उत्सवातील लोकसहभागाच्या आदर्शापासून उत्सवातील सार्वजनिक उपद्रवापर्यंत झालेला दिसतो. हे स्खलन काही आत्ताच अचानक झाले असे नाही. गेली काही वर्षे उत्सवात लागणाऱ्या वेगवेगळ्या उन्मादी कणसूरांनी पुणेकर त्रस्त आहेतच. पराकोटीला पोचलेले ध्वनिप्रदूषण हा त्यातील सर्वांत कर्कश मुद्दा. ध्वनिवर्धकांवरील या अमर्याद उच्च रवाला पुणेकर वैतागलेच होते. यंदा त्या वैतागाला प्रातिनिधिक स्वर मिळाला तो विद्यानंद बापट यांचा.

गणेशोत्सवासंदर्भातील पुणे महापालिकेच्या बैठकीत बापट यांनी डीजे, ढोल-ताशांमुळे होणाऱ्या ध्वनिप्रदूषणाविरोधात आवाज उठवला. तसे करताच त्यांना बैठकीतून हुसकावून लावण्यात आले. त्यावर तीव्र प्रतिक्रिया उमटल्या. त्यात समाज माध्यमी पडसाद होते, तसे प्रत्यक्ष पाठिंब्याचे प्रतिसादही होते. ध्वनिकल्लोळाला एकमुखी विरोध हे त्यातील समान सूत्र. बापट यांचे मुद्दे या पलीकडेही आहेत. पण, त्यावर चर्चा करण्यापूर्वी आधी ध्वनिमर्यादेच्या उल्लंघनाने त्रस्त झालेल्या शहरी जगण्याबद्दल.

गेली २५ वर्षे पुण्यातील शासकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालयाने गणेश विसर्जन मिरवणुकीच्या वेळी केलेला आवाजाचा अभ्यास हेच सांगतो, की करोनाकाळाचा अपवाद वगळता कधीही ध्वनिपातळी मर्यादेत राहिलेली नाही. त्यात इतर दिवशी आणखी वेगवेगळ्या आवाजांची भर पडतेच आहे. पुण्यात सध्या गल्लोगल्लीत इमारती, बंगल्यांचा पुनर्विकास सुरू आहे. पुढच्या चार वर्षांत साडेसहा कोटी चौरस फुटांचे इमले बांधले जातील, असा अंदाज आहे. या बांधकामांसाठी माल वाहून नेणारी अवजड वाहने, त्यांचे हॉर्न आणि प्रत्यक्ष बांधकामस्थळी पाया खोदण्यापासून सुरू होणारी यंत्रांची धडधड आजूबाजूच्या रहिवाशांना शांततेचा विसर पाडणारी आहे. हे अहोरात्र सुरू आहे. रोजच्या वाहतूक कोंडीत वाजणारे हॉर्न, गाड्यांच्या इंजिनांची कलकल यामुळे डोके उठतेच. त्यात प्रत्येक छोटा-मोठा सण, गल्ली-बोळांतील, गावठाणांतील कुठकुठले उत्सव, नववर्ष, जयंती, पुण्यतिथी अशी निमित्ते काढून मोठमोठे ध्वनिवर्धक वर्षभर दणाणत असतात. यार, दोस्ताच्या वाढदिवसाचे निमित्त काढून अचानक रात्री बारा वाजता शहराच्या कोणत्याही भागात वाजू शकणारे फटाके हे भरीला. अपरात्री दुचाक्यांवरून किंचाळल्यासारखे आवाज काढत जाणाऱ्यांची संख्याही कमी नाही. या स्थितीने शांतता दुष्प्राप्य झाली आहे, हे सांगणे नलगे.

म्हणूनच, बापट यांनी डीजेमुक्त, ध्वनिप्रदूषणमुक्त उत्सवाच्या केलेल्या मागणीला चटकन पाठिंबा मिळाला. या प्रश्नावर डॉ. कल्याणी मांडके यांच्यासारख्या कान-नाक-घसा तज्ज्ञ गेली काही वर्षे सातत्याने आवाज उठवत आहेत. ध्वनिप्रदूषण नियंत्रित करण्यात विविध यंत्रणांना सातत्याने येत असलेल्या अपयशाबद्दल प्रश्न उपस्थित करून त्यांनी राष्ट्रीय हरित लवादात याचिकाही दाखल केली होती. दीर्घ काळ कर्कशता पदरी पडल्यास सर्व वयोगटांतील व्यक्तींच्या आरोग्यावर परिणाम होतो - एक प्रकारे ध्वनिप्रदूषण हे 'बिनआवाजी मारेकरी' आहे - हेही त्या आणि इतर कान-नाक-घसातज्ज्ञ 'ओरडून' सांगत आहेत. त्यांना अर्थातच अनुल्लेखाने 'मारले' आहे.

बापटांचे वैशिष्ट्य हे, की ते थेट उत्सवाच्या बैठकीत जाऊन धडकले आणि नंतर अत्यंत तर्कशुद्ध पद्धतीने वेगवेगळी उदाहरणे देत, तात्त्विक चर्चा करत या प्रश्नाला भिडत राहिले. ध्वनिप्रदूषणासारखा प्रश्न व्यक्तिकेंद्री करू नका, असे आता ते कितीही सांगत असले, तरी या प्रश्नावर लढायला - याचा त्रास नकोसा झालेल्या सर्वांना - नायक मिळाला आहे, ही वस्तुस्थिती. बापट यांचा आक्षेप फक्त डीजेपुरता नाही, तर सार्वजनिक ठिकाणी होणाऱ्या शांतताभंगाबद्दल आहे आणि त्यासाठी ते उत्सवावर प्रश्नचिन्ह उपस्थित करतात. पण त्यावर, 'गणपतीला विरोध करतो', 'दिमागी नक्षल आहे', 'भावना दुखावतो', या मतप्रदर्शनापलीकडे बिनतोड तार्किक प्रत्युत्तर अजूनपर्यंत मिळालेले नाही.

त्यामुळेच प्रश्न उरतो, तो या चर्चेच्या केंद्रस्थानी न येणाऱ्या सार्वजनिक भानाचा. त्याचा सुवर्णमध्य हा लोकांना त्रास होणार नाही, अशा प्रकारे सार्वजनिक उत्सव साजरा करता येतो, याचा आदर्श पुण्याने घालून देणे, हा असू शकतो. आणि तशी पुण्याला परंपराही आहे. उत्सवांच्या निमित्ताने कला-क्रीडा प्रकारांच्या सार्वत्रिक अभिव्यक्तीला याच शहराने वाव दिला. देखाव्यांच्या निमित्ताने कारागिरीला पैलू पडले. उत्सवाने रुजलेल्या, रुजविलेल्या सामाजिक जाणिवेने याच शहरात कार्यकर्ते घडले. आणि, ही परंपरा खंडित झालेली नाही, ती फक्त या ध्वनिप्रदूषणाने झाकोळली गेली आहे. बहुसंख्य पुणेकरांना ती हवीही आहे. म्हणूनच, तिला उजागर करून कुप्रथा बंद करण्यासाठीचे पाऊल सुधारणांचा कायमच प्रारंभ करणाऱ्या याच शहराला उचलावे लागेल. त्यासाठी मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस म्हणतात, तसा पारंपरिक पद्धतीने उत्सव साजरा करायचा असेल, तर त्यात पारंपरिक या नावाखाली असंख्य ढोल-ताशे बडविणे येत नाही, याचेही भान मंडळांनी ठेवायला हवे. या ढोल -ताशांची संख्या मर्यादितच हवी. बेभान वागण्याची सूट म्हणजे परंपरा राखणे नसते. समाजमनात सामीलकीची भावना वर्धिष्णू करून विधायकतेची कास धरणे हेच उत्सवांचे उद्दिष्ट असते. ते सुफळ व्हावे.

siddharth.kelkar@expressindia.com

मुंबईत वेगळाच उच्छाद...

प्रसाद रावकर

गेल्या काही वर्षांमध्ये मुंबईत गणेशोत्सवाच्या आडून आपल्या मंडळाचे वर्चस्व कसे वाढेल याची चुरस लागली आहे. त्याला सुरुवात होते ती उंच आणि हव्या त्या रूपात गणेशमूर्ती घडवून घेण्यापासून. गणेशमूर्ती पाहून भाविकाचे मन प्रसन्न व्हावे असे बहुधा मंडळांना वाटत नसावे. कारण काही मंडळांनी रौद्र रूपातील, विविध देवदेवतांच्या रूपातील गणेशमूर्ती साकारून मूळ रूपाला बगल दिल्यासारखेच वाटू लागले आहे. मुख्य म्हणजे अशा गणेशमूर्ती साकारून मंडळाच्या पापात मूर्तिकारही भागीदार होत आहेत. गणेश कार्यशाळेत घडवलेली गणेशमूर्ती मंडपस्थळी आणण्याची पदाधिकारी, कार्यकर्त्यांना फारच घाई असते. काही मंडळांचे पदाधिकारी तर आपल्या सवडीनुसार देखावा साकारण्याच्या नावाखाली दोन महिने आधीच वाजतगाजत गणेश आगमन मिरवणुका काढतात आणि वाहतुकीचा पूर्ण विचका करून टाकतात. बरं, या आगमन मिरवणुकीच्या वाटेवर रुग्णालये आहेत का याचा विचार करीत नाहीत. फक्त फटाक्यांची आतषबाजी, ढोल ताशाच्या तालावर थिरकत, वाद्य वाजविणाऱ्यांवर हजारो रुपयांची उधळण करीत ही मंडळी मंडपस्थळी पोहोचतात. लालबाग, परळ भागात अनेक रुग्णालये आहेत. त्यामुळे या सर्वांचा रुग्णांना प्रचंड त्रास सहन करावा लागतो. त्यामुळे या भागातील गणेश कार्यशाळा अन्यत्र हलविण्याची मागणी जोर धरू लागली आहे. गेले दोन महिने आठवडाअखेरीस शनिवार-रविवारी काढण्यात येणाऱ्या गणेश आगमन मिरवणुकांमुळे होणारी गर्दी, चेंगराचेंगरी, छेडछाडीच्या प्रकारांमुळे लालबाग, परळ भागात महत्त्वाचे काम असले तरी जाण्याचे अनेकजण टाळू लागले आहेत. इतकेच नव्हे तर गेल्या काही वर्षांमध्ये गणेशोत्सवाच्या निमित्ताने पाट पूजन, पाऊल पूजन, मंडप पूजन असेही प्रकार सुरू झाले असून मोठा गाजावाजा करीत कर्णकर्कशश आवाजात ध्वनिक्षेपकांचा वापर करून ढोल-ताशावर थिरकत हे सर्व साजरे होऊ लागले आहे. वृद्ध, रुग्ण यांना होणारा त्रास मंडळाचे पदाधिकारी, कार्यकर्त्यांच्या गावीही नाही.

गणेश चतुर्थीला गणेशाची प्राणप्रतिष्ठा झाल्यानंतर आपल्या गणपतीचे दर्शन घेण्यासाठी मोठमोठे कलावंत, उद्योगपती, बडे राजकारणी आदी कसे येतील याकडे पदाधिकाऱ्यांचा कल असतो. सर्वासामान्य भाविक अनेक तास रांगेत तिष्ठत राहिला तरी चालेल, पण बड्या मंडळींना तात्काळ दर्शन घडविण्यात, गणेशमूर्तीसमोर सत्कार करण्यात पदाधिकारी, कार्यकर्ते धन्यता मानत आहेत. सर्वसामान्य भाविक दर्शनासाठी आलेच नाहीत, रांगा लागल्याच नाहीत तर कदाचित मोठमोठे कलावंत, उद्योगपती, बडे राजकारणी तेथे फिरकणारही नाहीत, हे त्यांच्या लक्षातही येत नाही.

एआय चित्र

तासन्तास चालणाऱ्या विसर्जन मिरवणुका या मार्गातील रहिवाशांना मेटाकुटीस आणत आहेत. कच्छीबाजा, बेन्जो पार्टी, ढोल-ताशाचा दणदणाट करीत एकामोगामाग रांगेतून विसर्जनस्थळी जाणाऱ्या मंडळांच्या गणेश विसर्जन मिरवणुकांमुळे आवाज प्रदूषणामुळे आसपासच्या रहिवाशांना बहिरे झाल्यासारखे वाटू लागले आहे. त्यामुळे विसर्जनस्थळांच्या दिशेने जाणाऱ्या मार्गांवर वास्तव्यास असलेले अनेक रहिवासी मुंबईबाहेर पळ काढू लागले आहेत. मंडळांच्या या उच्छादामुळे अनेकांना आर्थिक भुर्दंड सोसून कुठे तरी एक-दोन दिवसांसाठी आसरा घ्यावा लागत आहे.

गेल्या काही वर्षांपासून केंद्रातून प्लास्टर ऑफ पॅरिसच्या मूर्तींवर बंदी घालण्याचा प्रयत्न करण्यात येत आहे. यंदा तर दस्तुरखुद्द पंतप्रधान नरेंद्र मोदी यांनीही शाडूच्या मातीच्या गणेशमूर्तींची प्राणप्रतिष्ठा करण्याचे आवाहन जनतेला केले. एरवी पंतप्रधानांचा शब्द पडू न देणाऱ्यांचाही प्लास्टर ऑफ पॅरिसच्या मूर्तीकडेच कल असल्याचे प्रकर्षाने निदर्शनास आले. दरवर्षी मुंबईत साधारण १२ हजार ५०० सार्वजनिक गणेशोत्सव मंडळे आणि दोन लाखांहून अधिक घरगुती गणपतींची प्राणप्रतिष्ठा करण्यात येते. त्यापैकी साधारण ७० ते ८० टक्के गणपती प्लास्टर ऑफ पॅरिसने घडविण्यात येतात. सार्वजनिक गणेशोत्सव मंडळांनी तर २५-३० फुटांच्या उंच मूर्ती साकारण्यावरच भर दिला आहे. प्लास्टर ऑफ पॅरिसच्या मूर्तींचे प्रकरण दरवर्षी न्यायालयात जाते. न्यायालय बंदी घालून कडक भूमिका घेईल असे वाटते, परंतु सरकार कच खाते आणि पुन्हा पहिले पाढे पंचावन्न. मूर्तिकार प्लास्टर ऑफ पॅरिसच्या उंच मूर्ती घडवतात आणि मंडळे त्यांची प्राणप्रतिष्ठा करतात. केवळ राजकीय छत्रछायेमुळे हे सुरू आहे.

काही वर्षांपूर्वी मुंबईतही कानठळ्या बसविणारा डीजेचा धडाका सुरू होता. मात्र न्यायालयाने फटकारताच पोलीस दल सक्रिय झाले. आगमन, विसर्जन वा गणेशोत्सव काळात डीजेचा वापर आढळताच संबंधित मंडळावर कारवाईचा बडगा उगारला जाऊ लागला. डीजेचे साहित्य जप्त करण्यात येऊ लागले. त्यामुळे आजघडीला मुंबईत डीजेचा तुरळक वापर होताना दिसतो, पण पोलीस तात्काळ कारवाईचा बडगा उगारतात. त्यामुळे मुंबईत पुण्यासारखी स्थिती नाही.

एकेकाळी गणेशोत्सवातील सांस्कृतिक कार्यक्रमांमध्ये कलावंत येत होते. अनेक मुले किशोरवयातच समाजसेवेचे धडे गिरवत होते. कालौघात ही मंडळी समाजकारण, राजकारणात आली आणि चांगले नेते समाजाला मिळाले. परंतु आता स्वयंघोषित नेते मंडळींनी आपापल्या विभागातील गणेशोत्सव मंडळांवर ताबा मिळविला आहे. उत्सवाआडून ही मंडळी शक्तिप्रदर्शन करीत आहेत. परिणामी, उत्सव समाजाचा न राहता ठरावीक मंडळींचा झाल्याचे चित्र आहे. आता केवळ स्वयंघोषित नेतेच नाही, तर प्रसिद्धीलोलुप बड्या कंपन्याही गणेशोत्सवात संधी शोधू लागल्या आहेत. बडे उद्योगसमूह गर्दी होणाऱ्या गणेशोत्सवासाठी बक्कळ गंगाजळी देऊ लागले आहेत. यामुळे आता या उत्सवांना सर्वसामान्यांच्या देणगीची अथवा छोट्या-छोट्या जाहिरातींची आवश्यकताच राहिलेली नाही. परंतु एकेकाळी या सर्वसामान्य देणगीदार तसेच छोट्या जाहिरातदारांच्या जिवावर हा उत्सव साजरा केला होता याची मंडळींनी जाणीव ठेवायला हवी. परंतु तसे होताना दिसत नाही. असेच सुरू राहिले तर हा उत्सव सर्वसामान्यांचा न राहता कुणा बड्या उद्योगपतींच्या हाती जाईल आणि मंडळाच्या पदाधिकाऱ्यांनाच 'श्री'चे दर्शन घेण्यासाठी रांगेत उभे राहावे लागेल. एका विशिष्ट हेतूने सार्वजनिक गणेशोत्सव सुरू करणाऱ्या लोकमान्यांच्या विचारांची प्रतारणा करणाऱ्यांमुळे हा दिवस दूर नसेल.

prasad.ravkar@expressindia.com

नागपुरात सत्ताधाऱ्यांची बंदी; विरोधही त्यांचाच!

चंद्रशेखर बोबडे

भाजपचे माजी आमदार आणि मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस यांचे निकटवर्तीय मानले जाणारे संदीप जोशी बुधवार, २ सप्टेंबर रोजी डीजेविरोधात लोकचळवळ उभारण्याची घोषणा करतात. दुसऱ्याच दिवशी नागपूरचे पोलीस आयुक्त शहरात डीजेवर नोव्हेंबरपर्यंत बंदी घालण्याची घोषणा करतात. मात्र, त्याच पक्षाचे विद्यमान आमदार प्रवीण दटके आणि शहराध्यक्ष दयाशंकर तिवारी बंदीविरोधाचे सूर उमटतात. शुक्रवारी दोन्ही बाजूंचे भाजप नेते पोलीस आयुक्तांची भेट घेऊन परस्परविरोधी मागण्या करतात. आणि त्याच रात्री भाजपसमर्थित संघटनेच्या दहीहंडी उत्सवात डीजेचा दणदणाट आणि लेझर किरणांचा झगमगाट सुरू होतो.

तीन दिवसांतील हा घटनाक्रम केवळ डीजेबंदीच्या निर्णयाभोवतीचा गोंधळ नाही. शिस्तबद्ध पक्ष अशी ओळख सांगणाऱ्या भाजपच्या अंतर्गत विसंगतीचे ते दर्शन आहे. नागपुरातील आगामी राजकीय-सामाजिक समीकरणांच्या पार्श्वभूमीवर या 'मतभेदां'कडे पाहिले तर हा खरोखरच पक्षांतर्गत संघर्ष आहे की विविध सामाजिक घटकांना एकाच वेळी सांभाळण्याचा राजकीय प्रयोग, असा प्रश्न उपस्थित होतो.

पोलिसांकडून थेट बंदीची घोषणा

पुण्यात डीजेच्या दणदणाटाविरोधात नागरिकांची चळवळ उभी राहिल्यानंतर डीजे हा मुद्दा राज्यव्यापी चर्चेच्या केंद्रस्थानी आला. मात्र, पुण्यात मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस यांनी थेट डीजेबंदीची भूमिका न घेता पुणेकरांनी आपल्या संस्कृतीनुसार गणेशोत्सव साजरा करावा, असे आवाहन केले. नागपुरात मुख्यमंत्र्यांच्या गृहशहरात, त्यांच्या अखत्यारीतील गृह विभागाच्या नियंत्रणाखालील पोलिसांनी थेट नोव्हेंबरपर्यंत डीजेवर बंदी घातली. विशेष म्हणजे, नागपुरात ही मागणी नागरिकांकडून आलेली नव्हती. त्यामुळे या निर्णयामागील राजकीय गणिताची चर्चाही अपरिहार्य ठरते.

डीजेबद्दल बदलते सूर

या पार्श्वभूमीवर २ ते ४ सप्टेंबरदरम्यानच्या घटनांकडे पाहणे महत्त्वाचे ठरते. बुधवारी संदीप जोशी यांनी डीजेविरोधात लोकचळवळ उभारण्याची घोषणा केली. गुरुवारी पोलीस आयुक्तांनी डीजेबंदी जाहीर केली. मात्र, त्याच वेळी भाजपचे विद्यमान आमदार प्रवीण दटके यांनी समाजमाध्यमातून या निर्णयाला विरोध केला. त्यानंतर शहराध्यक्ष दयाशंकर तिवारी यांनीही सरसकट बंदीला विरोध दर्शविला. शुक्रवारी या कथित 'मतभेदांना' प्रत्यक्ष रूप आले. एका बाजूने भाजपच्या विद्यमान आमदारांनी पोलीस आयुक्तांची भेट घेऊन बंदीचा फेरविचार करण्याची मागणी केली. दुसऱ्या बाजूने संदीप जोशी यांनी स्वयंसेवी संस्थांच्या प्रतिनिधींसह पोलीस आयुक्तांची भेट घेत डीजेबंदी कायमस्वरूपी करण्याची मागणी केली. म्हणजे एकाच पक्षातील दोन गट प्रशासनासमोर दोन परस्परविरोधी भूमिका मांडत होते. याच दिवशी रात्री बंदी आदेश अस्तित्वात असताना भाजपसमर्थित संघटनेच्या दहीहंडी उत्सवात डीजे वाजला. प्रशासनाच्या आदेशाला आव्हान देणारा हा प्रकार भाजपमधील भूमिकेच्या विसंगतीला आणखी अधोरेखित करणारा ठरला.

बंदी, विरोध दोन्ही आपलेच!

एका बाजूला प्रशासनाच्या माध्यमातून डीजेबंदी लागू करायची आणि त्याचे श्रेय घ्यायचे; दुसऱ्या बाजूला पक्षातीलच काही नेत्यांनी बंदीविरोधात आवाज उठवायचा. परिणामी बंदीमुळे नाराज होणाऱ्या वर्गाला 'आपला आवाज पक्षात आहे' असा संदेश देता येतो आणि बंदीचे समर्थन करणाऱ्या वर्गालाही 'सरकार कारवाई करीत आहे' असे दाखवता येते. जे घडते आहे त्यावरून तरी सध्या हाच निष्कर्ष निघतो. राजकारणात एखादा प्रश्न सोडवणे जितके महत्त्वाचे असते, तितकेच त्या प्रश्नाचे राजकीय श्रेय कोण घेते आणि त्यातून निर्माण होणारा असंतोष कोणाच्या विरोधात जातो, हे महत्त्वाचे असते. नागपुरातील डीजेबंदीच्या प्रकरणात सध्या दोन्ही बाजू भाजपनेच व्यापून टाकल्याचे चित्र आहे. डीजेबंदीचे स्वागत करणारा आवाज भाजपचाच; बंदीचा फेरविचार करण्याची मागणी करणारा आवाजही भाजपचाच. बंदी कायम ठेवण्याची मागणी करणारे नेते भाजपचे; बंदी झुगारणाऱ्या कार्यक्रमामागील राजकीय पाठबळही भाजपशी संबंधित. यामुळे या प्रश्नावर विरोधकांना स्वतंत्र राजकीय भूमिका घेण्याची संधीच भाजपने ठेवली नाही. डीजेबंदीमुळे ध्वनिप्रदूषणाला विरोध करणाऱ्या वर्गाला समाधान मिळाले, तर बंदीविरोधी भूमिका घेणाऱ्यांमुळे उत्सवप्रिय आणि धार्मिक भावनांशी जोडलेल्या वर्गालाही पक्षापासून पूर्णपणे दुरावण्याची वेळ येत नाही. दोन्ही बाजूंचा असंतोष भाजपच्या चौकटीतच राहतो. यालाच राजकीय सोय लक्षात घेऊन खेळलेली ही खेळी असल्याचे लक्षात येते.

या निमित्ताने आता मूळ प्रश्नापेक्षा मोठा प्रश्न उभा राहिला आहे. सरकारची भूमिका नेमकी काय? सत्ताधारी पक्षाची भूमिका काय? आणि पक्षातील नेत्यांच्या परस्परविरोधी भूमिकांमागे पक्षाचे धोरण आहे की स्थानिक राजकीय गरज? असे अनेक प्रश्न यातून निर्माण होतात. 'बंदी'ही आपली, 'विरोध'ही आपलाच– असे राजकारण करून भाजपने दोन्ही सामाजिक घटकांना सांभाळण्याचा प्रयत्न केला असेल, तर तात्पुरते हे गणित यशस्वी ठरू शकते. मात्र, प्रशासनाच्या आदेशांची विश्वासार्हता आणि पक्षाच्या शिस्तीचा प्रश्न अनुत्तरित राहिला, तर त्याची राजकीय किंमत भविष्यात मोजावी लागू शकते.

chandrashekhar.bobade
@expressindia.com

मंदिरों का मर्म समझना होगा

अयोध्या, मथुरा और काशी सिर्फ मंदिरों से नहीं, बल्कि उनके जरिये किए गए सभ्यता के निर्माण और विस्तार से जुड़े थे। ये तीनों धर्मनगरियां विभिन्न संस्कृतियों के मिलाप और ज्ञान के साझा सदुपयोग के साथ जुड़ी थीं। हमारे मंदिरों की भव्यता नहीं, बल्कि उनकी अलौकिक सार्वजनिनता विदेशी जिज्ञासुओं को लुभाती थी। क्या एयर मार्शल मिश्र और उनके सहयोगी सभ्यता की इस धारा को पुनर्जीवित करने का प्रयास करेंगे?

आजकल स्तंभ के तहत प्रकाशित आलेखों के लिए

शशि शेखर

आजकल

राम मंदिर के नवनियुक्त सीईओ एयर मार्शल (अवकाश प्राप्त) जितेंद्र मिश्र गए गुरुवार को कैमरों की चकाचौंध के बीच अयोध्या पहुंचे। वह संतों से आशीर्वाद लेने के साथ मंदिर की व्यवस्था और व्यवस्थापकों से रूबरू हुए। उम्मीद है, एयर मार्शल मिश्र और उनकी टीम जल्द किसी शुभ मुहूर्त में कामकाज संभाल लेंगे। इस टीम के सामने चुनौतियों का अंबार है, पर हर बड़े बदलाव की शुरुआत चुनौतियों से ही होती है।

आपको याद होगा, इस मंदिर के विशाल प्रांगण और अयोध्या नगरी के सौंदर्यीकरण के लिए योगी सरकार को क्या-क्या पापड़ बेलने पड़े थे? मंदिर परिसर का आकार बढ़ाने के लिए आस-पास के तमाम भवन तोड़े जाने थे। सड़कें चौड़ी करने के लिए कंक्रीट के तमाम निर्माणों को ध्वस्त करना जरूरी था। इनमें से कुछ इमारतें तो शताब्दियां देख चुकी थीं। चिह्नित भवनों में तमाम मंदिर और अन्य धर्मों के पूजा स्थल भी शामिल थे। काशी में भी बाबा विश्वनाथ के मंदिर के विस्तार हेतु प्रशासन यही कदमताल कर रहा था।

इस मैराथन कसरत ने अंततः अपनी मंजिल हासिल की और आज उत्तर प्रदेश की हुकूमत गर्व से कहती है कि हम धार्मिक पर्यटन के मामले में शीर्ष पर हैं। इससे प्रदेश को धन मिलता है, जो विकास कार्यों पर खर्च होता है। यह जयनाद जारी था कि राम मंदिर में चढ़ावा चोरी की खबर ने रंग में भंग घोल दी। उम्मीद है, एयर मार्शल मिश्र और उनकी टीम ऐसी व्यवस्था बनाने में कामयाब होंगे, जो श्रद्धालुओं की आस्था की चौतरफा हिफाजत कर सके। इस यज्ञ की पूर्णाहूति के लिए उन्हें साधु-संतों की आपत्तियों के साथ तमाम प्रशासनिक और कानूनी अड़चनों से पार पाना होगा। यकीनन, आज नहीं तो कल, यह सब हो जाएगा, लेकिन यह महज पहला चरण होगा।

इस टीम का असली इम्तिहान राम मंदिर के प्राचीन गौरव की घर वापसी होगी। कैसा था, राम मंदिर और इस नगरी का गौरव?

साल 2003 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग उच्च न्यायालय के आदेश पर इस प्रांगण की खुदाई के जरिये पता कर रहा था कि यहां कभी मंदिर था भी या नहीं? इसी क्रम में उसे 12वीं शताब्दी का एक फैसलाकुन शिलालेख प्राप्त हुआ था। 'विष्णु-हरि शिलालेख' के नाम से जानी जाने वाली इस ऐतिहासिक धरोहर में वर्णित है कि साकेत (अयोध्या) के पावन राम जन्मस्थान पर विष्णु-हरि का एक भव्य मंदिर निर्मित कराया गया। मंदिर की व्यवस्था द्वारा धर्म-कार्यों के लिए यहां एक 'अन्नसत्र' स्थापित किया गया, जहां दूर-दराज से आने वाले अतिथियों, साधुओं और यात्रियों का नित्य तृप्ति-वर्धन (मुफ्त भोजन और आश्रय) होता है। यहां याद दिलाना जरूरी है कि इरफान हबीब सहित कई इतिहासकार इससे असहमत थे। उनका आरोप था कि यह शिलालेख वहां से नहीं मिला। इसे लखनऊ के राजकीय संग्रहालय से उठाकर यहां मंदिर के सुबूत के तौर पर रोपा गया। अदालत में यह आरोप साबित न हो सका और जो फैसला आया, उसे सभी जानते हैं।

स्कंदपुराण का यह उल्लेख भी शिलालेख के वर्णन को आगे बढ़ाता है- इस क्षेत्र में भोजन का क्रय-विक्रय अनुचित है। यहां का मूल सामाजिक धर्म अन्नसत्र के माध्यम से निःशुल्क भोजन उपलब्ध कराना है। सातवीं शताब्दी में आए चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इस नगरी की पुण्यशालाओं की चर्चा की है। यहां बीमारों को चिकित्सा, भूखों को मुफ्त भोजन और आगंतुकों को आश्रय दिया जाता था। ह्वेनसांग यह भी लिखता है कि उस दौरान तमाम बौद्ध भिक्षु शिक्षा प्राप्त करने के लिए विभिन्न देशों से यहां आते थे।

ये वृत्तांत सिर्फ मंदिर की वैधता पर मुहर नहीं लगाते, बल्कि राम जन्मभूमि के उस गुण को उजागर करते हैं, जिसकी वजह से उसे मर्यादा धाम कहा जाता था।

अयोध्या के अलावा काशी और मथुरा की अपनी अलग विशेषताएं थीं। मथुरा भारत के सबसे महत्वपूर्ण मार्ग 'उत्तरापथ' पर स्थित है। यह पुराने 'सिल्क रूट' का हिस्सा

था। कुषाणकालीन शिलालेख बताते हैं कि कृष्ण जन्मस्थली के मंदिर के कोषागार बैंक का काम भी करते थे। देश-विदेश के व्यापारियों के काफिले यहां अपनी रकम जमा कराते या दुरूह व्यापारिक यात्राओं के लिए ऋण लेते। कृष्ण की परंपरा को निभाते हुए इस क्षेत्र में बड़ी गौशालाएं थीं।

काशी के विश्वनाथ मंदिर की आन-बान-शान इन सबसे अलग थी। *स्कंदपुराण* का काशीखंड इसे भारत का 'सर्वोच्च बौद्धिक केंद्र' करार देता है। ऐसा कहने की वजह यह थी कि किसी भी नए सिद्धांत दर्शन या विचार को तब तक सर्वमान्यता हासिल नहीं होती थी, जब तक विश्वनाथ मंदिर की 'विद्वत परिषद' में शास्त्रार्थ कर उसे प्रमाणित न कर लिया जाए। शंकराचार्य हों या रामानुजाचार्य, सभी दार्शनिकों को अपना भाष्य यहीं प्रस्तुत करना पड़ा था।

विश्वनाथ की यह नगरी शिक्षा के साथ खगोल विज्ञान, ज्योतिष, तर्कशास्त्र और चिकित्सा का बड़ा केंद्र थी। विश्वनाथ मंदिर परिषद को 'मोक्ष लक्ष्मी विलास' भी कहा गया है। इसके समीप स्थित मां अन्नपूर्णा मंदिर के अन्न भंडार यह सुनिश्चित करते थे कि काशी की नगरी में कोई भी व्यक्ति भूखा न सो जाए। उम्मीद है, अब तक आप समझ गए होंगे कि अयोध्या, मथुरा और काशी उस समय भारत और भारतीयता की नई परिभाषा गढ़ रहे थे, जब पश्चिमी दुनिया के तमाम देश जागृति के लिए जम्हाई लेने का प्रयास कर रहे थे।

अयोध्या राजधर्म और अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक समन्वय की प्रतीक थी और इसे सुशासन का केंद्र माना जाता था। मथुरा ईसा के पैदा होने से पहले से व्यावसायिक बैंकिंग, मूर्तिकला और कृषि अर्थशास्त्र की केंद्र थी। काशी शिक्षा, बौद्धिकता और आयुर्वेद के साथ योग शिक्षा का सिद्ध-स्थान थी। ऐसे मंदिरों ने ही हमारी सभ्यता को मांजने और उसके अंतरराष्ट्रीयकरण की आधारशिला रखी। सुदूर दक्षिण के मंदिर भी कमोबेश यही काम कर रहे थे।

यहां आप सोच रहे होंगे कि यह शानदार परंपरा कहां और कैसे विलुप्त हो गई?

मोटे तौर पर इसे विदेशी आक्रांताओं की करतूत बताकर छुट्टी पा ली जाती है। तमाम इतिहासकार इसके साथ यह भी मानते हैं कि विदेशी हुकूमतों की स्थापना के साथ भारत के तमाम धार्मिक स्थल धर्म की रक्षा के नाम पर कुछ खास लोगों के हवाले होते चले गए। इन लोगों ने संकीर्णता को बढ़ावा दिया। यह एक महान परंपरा की सिकुड़न की शुरुआत थी। भारत में जन्मे अन्य धर्मस्थल भी इस विपत्ति के शिकार थे। इनमें से कुछ ने समय रहते सुधार किया। मसलन, गुरुद्वारे आज धर्म के साथ शिक्षा, चिकित्सा और कल्याण के केंद्र के तौर पर माने जाते हैं।

सवाल उठता है कि क्या मामला मंदिरों पर हक-हुकूक और उनकी भव्यता भर का है? ऊपर लिखे वर्णन साबित करते हैं कि ये तीनों नगर सिर्फ मंदिरों से नहीं, बल्कि उनके जरिये किए गए सभ्यता के निर्माण और विस्तार से जुड़े थे। ये तीनों धर्मनगरियां विभिन्न संस्कृतियों के मिलाप और ज्ञान के साझा सदुपयोग के साथ जुड़ी थीं। हमारे मंदिरों की भव्यता नहीं, बल्कि उनकी अलौकिक सार्वजनिनता विदेशी जिज्ञासुओं को लुभाती थी।

क्या एयर मार्शल मिश्र और उनके सहयोगी सभ्यता की इस धारा को पुनर्जीवित करने का प्रयास करेंगे?

@shekharkahin
@shashishekhar.journalist

जीना इसी का नाम है

दादाराव बिल्होरे
सामाजिक कार्यकर्ता

ताकि फिर कोई प्रकाश किसी गड्ढे में न बुझ पाए

प्रकाश की तीसरी पुण्यतिथि पर दादाराव ने बाकायदा इश्तिहार दिया कि वह मुंबई भर में सड़क-गड्ढों को भरने का एक व्यापक काम शुरू करने जा रहे हैं। जो भी इस नेक अभियान से जुड़ना चाहता है, वह उनसे संपर्क कर सकता है। दूसरे दिन तक 120 लोगों ने उनसे संपर्क किया।

यह आम मानवीय कमजोरी है कि हम अपने संघर्षों, अपनी तकलीफों के आगे किसी अन्य की पीड़ा को बहुत अहमियत नहीं देते। उनके बारे में गंभीरता से सोचना तो दूर की बात है। हालांकि, हमारे बीच ही कई ऐसे लोग हैं, जो अपना दर्द अपने भीतर समेटकर दूसरों की जिंदगी में आसानियां पैदा करते हैं, मुस्कराहटें बांटते हैं। ये लोग इंसानियत के सच्चे खिदमतगार हैं और आश्चर्य नहीं कि मिसाल भी वही कायम करते हैं। दादाराव बिल्होरे की दास्तान से गुजरते हुए कई बार आपकी आंखें नम होंगी, कई बार उन पर आपको गर्व होगा और अंत में आपके लबों पर उनके लिए सिर्फ दुआएं होंगी।

दादाराव आज करीब 56 साल के हैं। मुंबई की अंधेरी में फल और सब्जियों की दुकान चलाने वाले दादाराव 2015 तक अपनी जिंदगी से बहुत खुश थे। बेटे प्रकाशराव ने वर्षों से इंजीनियर बनने का सपना संजोया था। दादाराव भी उसे लगातार प्रोत्साहित करते रहे कि जी लगाकर पढ़ते रहो, एक दिन जरूर इंजीनियर बनोगे और साल 2015 में भांडुप के एक पॉलिटेक्निक कॉलेज में दाखिले के लिए प्रकाश का नाम भी आ गया। पूरा परिवार खुश था।

साल 2015 की वह 28 जुलाई थी। उस दिन मुंबई में तेज बारिश हुई थी। प्रकाश अपने भाई राम के साथ दाखिला लेने कॉलेज के लिए निकला था। धार्मिक प्रकृति के दादाराव एकादशी का व्रत खोलने की तैयारी कर रहे थे। तभी उनके मोबाइल की घंटी बजी। दूसरी तरफ से आवाज आई- 'आपके बेटों की बाइक गड्ढे में गिर गई है। घबराने की बात नहीं है, पर आप हॉस्पिटल पहुंचिए।' दादाराव व्रत क्या खोलते, वह अस्पताल की ओर भागे। दरअसल, बारिश का पानी भरा होने के कारण राम को पता ही नहीं चला कि गड्ढा है और वे दुर्घटना के शिकार हो गए। प्रकाश बिना हेलमेट के मोटर साइकिल पर पीछे बैठा था। उसके सिर में गंभीर चोटें आई थीं और कान, नाक और मुंह से काफी सारा खून बह गया था। डॉक्टर उसे बचा न सके।

राम की हालत स्थिर होने में कई घंटे लग गए। तब तक दादाराव ने परिवार में किसी को कुछ नहीं बताया था। राम की स्थिति संभलने के बाद ही उन्होंने परिजनों को प्रकाश की अंतिम विदाई की तैयारी करने को कहा। कहते हैं, दुनिया में सबसे बड़ा बोझ जवान बेटे के जनाजे का होता है। दादाराव का एक बाजू भी कट गया था। वह इस बोझ को कैसे उठाते! बेटे की लाश घर लाने तक सब्र ने साथ दिया, फिर तो वह भी कहीं गुम हो गया था। कई घंटों तक यही कैफियत रही, मगर बाप का फर्ज निभाना ही था। जिस बेटे को कभी कंधे पर बिठाकर झूमे-नाचे थे, उसे कंधे पर चिता तक ले जाना दुसह्य था, पर सहना पड़ा।

प्रकाश की मौत के कुछ ही दिनों बाद अंबरनाथ और बांद्रा

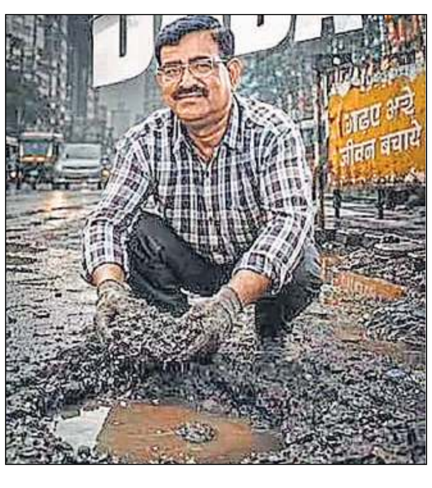

में भी गड्ढे की वजह से एक-एक महिला को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। ये खबरें गमजदा पिता के भरते जख्म को ताजा कर गई थीं। वह बेचैन हो उठे- सड़क पर गड्ढों की वजह से लोगों की जान जा रही है और किसी को कोई फर्क ही नहीं पड़ रहा! बीएमसी जानलेवा हादसे के बाद ही जागती है। आखिर कितने प्रकाश इस उदासीनता की कीमत चुकाएंगे? दादाराव ने फावड़ा उठाया और अपनी दुकान के आगे सड़क पर जो गड्ढा बना था, उसे फौरन भर दिया। एक पल के लिए लगा, जैसे प्रकाश सामने खड़ा मुस्करा रहा है। बेटे की अचानक मौत ने दादाराव की जिंदगी में गहरा शून्य पैदा कर दिया था। उन्होंने तय किया कि वह सड़कों को गड्ढे नहीं रहने देंगे। यही प्रकाश को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

दादाराव एक गाड़ी में कंक्रीट, सीमेंट की बोरियां लादकर फावड़े, तसले और दूसरे उपकरणों के साथ हर उस सड़क पर पहुंचने लगे, जहां गड्ढे होते। उनकी इस मुहिम के बारे में जब प्रकाश और राम के दोस्तों को पता चला, तो वे भी हुलसकर इस काम में जुट गए। ऐसा नहीं था कि दादाराव और उनकी टीम के इस काम में अड़चनें नहीं आईं। कई लोगों ने आपत्ति जताई कि यह काम बीएमसी का है, आप इसे क्यों कर रहे हैं? आप पेशेवर तरीके से इसे अंजाम नहीं दे सकते। यह जल्दी ही फिर से उखड़ जाएगा। ऐसे लोग दादाराव के इस भाव को भला क्या समझते कि अगर दस गाड़ियां भी सुरक्षित उसके ऊपर से गुजरेंगी, तो उन्हें कितना सुकून मिलेगा?

दादाराव उनकी बातें सुनते-समझाते हुए अपने काम में लगे रहे। प्रकाश की तीसरी पुण्यतिथि पर उन्होंने बाकायदा इश्तिहार दिया कि वह मुंबई भर में सड़क-गड्ढों को भरने का एक व्यापक काम शुरू करने जा रहे हैं। जो भी इस नेक अभियान से जुड़ना चाहता है, वह संपर्क कर सकता है। दूसरे दिन तक 120 लोगों ने अपनी रजामंदी भेजी। एक स्थानीय कॉलेज के विद्यार्थियों ने इससे जुड़ने की इच्छा जताई। तब एक दिन में ही दादाराव और उनके साथियों ने मुंबई के विभिन्न इलाकों में 100 गड्ढे भर दिए। बीएमसी को जब यह पता चला, तो अपनी छवि बचाने के लिए उसने प्रेस कॉन्फ्रेंस करके बताया कि महानगर के 1,500 गड्ढे वह भर चुकी है और 700 बचे हैं, जिनको भरने की कवायद जारी है।

चंद घंटों में एक जागरूक मुंबइकर नवीन लाडे ने बीएमसी के दावे की कलई खोल दी। उन्होंने दस्तावेजी सुबूत के साथ मुंबई में 27,000 से अधिक गड्ढों का लेखा-जोखा अपनी

बताने की जरूरत नहीं, दादाराव ने विगत एक दशक में कितने ही प्रकाश को बचा लिया है। अपने दिवंगत बेटे को इस तरह से जिंदा रखने की उनकी कोशिश से प्रभावित हैदराबाद के रिटायर्ड रेलवे अधिकारी बाल गंगाधर ने भी अपने शहर में इस काम को अंजाम देना शुरू कर दिया।

वेबसाइट पर डाल दिया। बहरहाल, दादाराव पिछले एक दशक में आम लोगों की मदद से मुंबई में लगभग 1,500 गड्ढे भर चुके हैं। बताने की जरूरत नहीं, उन्होंने कितने ही प्रकाश को बचा लिया है। अपने दिवंगत बेटे को इस तरह से जिंदा रखने की उनकी कोशिश से प्रभावित हैदराबाद के रिटायर्ड रेलवे अधिकारी बाल गंगाधर ने भी अपने शहर में इस काम को अंजाम देना शुरू कर दिया। उन्हें 'तेलंगाना गौरव' पुकारा जाता है। अब ऐसे नागरिकों पर भारत क्यों न नाज करे?

प्रस्तुति : चंद्रकांत सिंह

वो लम्हा

शिवानंद सरस्वती
चिकित्सक एवं योग गुरु

एक पुस्तक पढ़कर बदल गए डॉक्टर

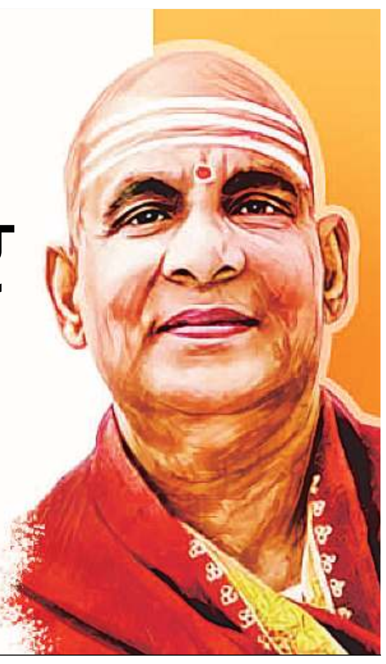

अपनी गठरी और उसमें अनेक पुस्तकें समेटे आए वह साधु बीमार पड़ गए। डॉक्टर साहब ने इलाज शुरू किया। स्वास्थ्य लाभ कर रहे साधु अपनी पुस्तकें किसी को देखने-छूने नहीं देते थे। डॉक्टर साहब भी उन पुस्तकों को दूर से ही देख पाते थे।

अच्छे डॉक्टर का अपना जलवा होता है। मलाया माने मलेशिया में सेवारत भारतीय डॉक्टर कुप्पुस्वामी भी कुछ वर्षों में बड़े रसूखदार हो गए थे। उनके लिए छुट्टी के दिन भी बैंक खुलता था, रेलगाड़ी ठिठकती थी, पानी के जहाज इंतजार करते थे कि डॉक्टर साहब आएं, तो चला जाए। तमिलनाडु से गए डॉक्टर कुप्पुस्वामी शौकीन भी कम न थे। उनके पास कीमती रेशमी वस्त्रों का भंडार था। स्वर्ण अंगूठियों, रत्नों और घड़ियों का संग्रह था। मरीजों की दिलोजान से सेवा करते थे, पर घर में टाइपराइटर, तीन खूबसूरत ग्रामोफोन व कई हारमोनियम भी रखते थे। तब त्याग, अध्यात्म जैसे शब्दों ने व्यस्त डॉक्टर का स्पर्श भी नहीं किया था।

उन्हीं दिनों उनके पास एक बुजुर्ग संन्यासी का आगमन हुआ। अपनी गठरी और उसमें अनेक पुस्तकें समेटे आए वह साधु बीमार पड़ गए। डॉक्टर ने इलाज शुरू किया। स्वास्थ्य लाभ कर रहे साधु अपनी पुस्तकें किसी को देखने-छूने नहीं देते थे। डॉक्टर साहब भी उन पुस्तकों को दूर से ही देख पाते थे। खैर, साधु जब सेहतमंद होकर जाने लगे, तब उन्होंने प्रसन्नता से भरकर डॉक्टर से कहा, 'मैं अपने संग्रह से सबसे अच्छी वेदांतिक पुस्तक आपको भेंट करना चाहता हूं। मुझे आशा है, इससे आपको लाभ होगा।' डॉक्टर ने हंसकर कहा, 'पहले आप पुस्तक देने से इनकार कर रहे थे। अब दीजिए, अवश्य पढ़ूंगा।' डॉक्टर ने सच्चिदानंद स्वामी रचित पुस्तक *जीव-ब्रह्म-ऐक्यम* को दोनों हथेलियों पर बहुत श्रद्धा से स्वीकार किया। उस पुस्तक को पढ़ते हुए डॉक्टर ज्ञान गंगा में डूबते चले गए। पुस्तक पुनः-पुनः महावाक्य अहं ब्रह्मास्मि (मैं ही ब्रह्म हूं) और तत् त्वम् असि (वह तुम ही हो) पर लौट आती थी। समझाने लगती थी कि अज्ञानता के कारण मनुष्य स्वयं को शरीर व मन मानने लगता है, स्वयं को ईश्वर से भिन्न समझने लगता है, किंतु जब असली ज्ञान प्राप्त होता है, तब जीव और ब्रह्म का भेद समाप्त हो जाता है।

पुस्तक ने डॉक्टर के मन को प्रश्नों से भर दिया। यह पुस्तक मेडिकल साइंस से अलग है, लाइफ साइंस सिखा रही है। हम जो सुख खोज रहे हैं, क्या वही सच्चा है? सच्चा सुख मेडिकल साइंस से संभव है? उसके पास भौतिक संसार और अहंकार का समाधान है? यह आत्मज्ञान और सच्चे सुख का मार्ग नहीं बताता है, तो मैं क्या कर रहा हूं? मैं कौन हूं? मेरा लक्ष्य क्या है?

पुस्तक पढ़कर मन में परिवर्तन की ऐसी लहर उठी कि डॉक्टर कुप्पुस्वामी में त्याग-वैराग्य के ज्वार उठने लगे। मरीज सेवा वह पहले भी बहुत मन से करते थे, किंतु जब अध्यात्म की ओर मन मुड़ा, तो त्याग की भावना प्रबल हो गई। पद, प्रभाव, संपन्नता और लोकप्रियता, सब बेकार भूसे की तरह त्याग योग्य लगने लगे। सुख-सुविधा में रहने वाले डॉक्टर को लगने लगा कि यह जीवन तीर्थयात्रा है, परमेश्वर के नगर तक जाना है और वहां पहुंचने के लिए साधारण वस्त्र, एक बर्तन और एक लाठी पर्याप्त है। साधु के पास बस इतनी ही संपत्ति होनी चाहिए।

डॉक्टरी से मन नहीं भरा था, किंतु यह समझ में आने लगा था कि तन का डॉक्टर बनने से ही काम नहीं चलेगा, मन और जीवन का डॉक्टर बनना पड़ेगा। विदेश में जमी-जमाई हस्ती छोड़कर वह भारत लौट चले। जीवन के 36 वर्ष बीत गए थे, उनके पास समय ज्यादा नहीं था। भारत पहुंचकर उन्होंने अपना पूरा सामान मित्र के घर छोड़ा और परमेश्वर के घर की ओर बढ़ चले। तीर्थयात्रा करते हुए ऋषिकेश पहुंचे और संन्यासी हो गए। डॉक्टर कुप्पुस्वामी को गुरु ने नया नाम दिया - शिवानंद सरस्वती।

योग साधना और ईश्वर नाम के जप का सतत क्रम शुरू हुआ, पर डॉक्टरी नहीं छूटी। सभी साधु जानते थे कि उनके बीच एक डॉक्टर भी है। जब भी किसी बीमार साधु ने पुकारा, शिवानंद सरस्वती सेवा के लिए तत्पर हो गए। जब उनके पास सेवा व बीमा के पैसे पूरे हुए, तब उन्होंने उन्हीं पैसों से लक्ष्मण झूला के पास चिकित्सालय शुरू किया। तन, मन और जीवन के डॉक्टर के रूप में वह तेजी से उपयोगी और लोकप्रिय हुए। उन्होंने 1936 में गंगा तट पर डिवाइन लाइफ सोसाइटी की नींव रखी। उनके योग्य शिष्यों की शृंखला आगे बढ़ी। उन्होंने अखिल-विश्व धर्म संघ का गठन किया। अखिल-विश्व साधु संघ और 1948 में योग-वेदांत अकादमी की स्थापना की। दुनिया के अनेक देशों में सेवा कार्यों की उनकी सादगी भरी परंपरा आज भी जारी है।

7 सितंबर को जन्मे स्वामी शिवानंद सरस्वती (1887-1963) का संदेश पूरी मानवता के लिए प्रासंगिक है। कहा जाता है, वह आम लोगों के अपने योग गुरु थे- जीवन में अपना मूल कार्य करते रहिए, पर थोड़े आसन भी कीजिए, थोड़ा प्राणायाम कीजिए, थोड़ा ध्यान व थोड़ी भक्ति भी; और यह सब कुछ थोड़ा-थोड़ा ही मिलकर आपको ऊंचाई पर पहुंचा देगा।

प्रस्तुति : ज्ञानेश उपाध्याय

बनी रहे साहित्य में कट मनी

तिरछी नजर

सुधीश पचौरी हिंदी साहित्यकार

हिंदी साहित्य का भाग्य ही कुछ हेठा है कि जब देखो, तभी उस पर संकट के बादल मंडराते रहते हैं, इसीलिए हिंदी लेखक की सांस-सांस में, उसके लेखन की हर लाइन-वाइन में किसी न किसी संकट की आह, कराह गूंजती सुनाई पड़ती है। इस लेखक के भी पचास-साठ साल संकट-संकट करते निकल गए। हिंदी लेखन में जब देखो तब, एक नया संकट और उसकी अंतरात्मा से उठता वही सवालिया गीत कि *नफस-नफस कदम-कदम बस एक फिक्र दम-ब-दम/ घिरे हैं हम सवाल से, हमें जवाब चाहिए।*

यह सवाल-दर-सवाल का सिलसिला, राजनीति को हिंदी साहित्य का अनूठा अवदान है, जो आज भी संसद से सड़क तक गुंजायमान है। इसे देखकर कुछ संकट एक्सपर्ट और नजूमी कहते हैं कि भैये! आज का संकट सिर्फ संकट ही नहीं, भयानक संकट है। यह सदी का सबसे बड़ा, यानी लंबा-चौड़ा-मोटा संकट है। यह एक नहीं, कई संकटों का 'संयुक्त मोर्चा' है, यानी यह संकटों के बाप का भी बाप है।

आर्थिक संकट है, राजनीतिक संकट है। सभ्यतागत संकट है, धार्मिक-सांस्कृतिक संकट है। वैचारिक संकट है, नैतिक संकट है। शैक्षिक संकट है, पारिवारिक संकट है। संबंध संकट है, नौकरी संकट है, छोकरी संकट है, छोकरा संकट है। रोटी-कपड़ा और मकान संकट है। गैस संकट है, जलपान संकट है, पान संकट है, पीकदान संकट है, नीट संकट है, लीक संकट है, प्रतीक संकट है, सटीक संकट है।

सरकार संकट है, दरबार संकट है। पक्ष संकट है, विपक्ष संकट है। कला संकट है, गला संकट है। भला संकट है, खला संकट है। जला संकट है, टला संकट है। फला संकट है, निर्जला संकट है। दिलजला संकट है, जलजला संकट है। दल संकट है, छल संकट है। जल संकट है, नल संकट है। बल संकट है, फल संकट है। आज संकट है, कल संकट है।

ट्रंप संकट है, गन संकट है। बम संकट है, यम संकट है। नियम संकट है, संयम संकट है। जम संकट है, जमजम संकट है। टमटम संकट है, कमकम संकट है और धमधम संकट है। गली संकट है, कली संकट है। सड़क संकट है, धड़क संकट है। झटक संकट है, फटक संकट है। हटक संकट है, कटुक संकट है, बटुक संकट है।

इतने संकट तो इस अकेले संकटवादी ने गिना दिए। इन संकटों में अगर आप कुछ अपने संकट मिला दें, तो इतने संकट हो जाएंगे कि हम सब संकट राग गाने लगेंगे कि 'मिले संकट मेरा तुम्हारा, तो संकट बने हमारा।' शायद इसी से कोई रास्ता निकले और इन नाना संकटों से निजात मिले। इनसे आज के हमारे जैसे सभी क्षुब्ध, क्रुद्ध बुद्धि-शुद्धिजीवी संकट-ग्रस्त हैं।

अनेक बुद्धि-शुद्धिवादी यह मानकर चलते हैं कि संकट वही, जो काटे न कटे, पाटे नहीं पटे, छांटे नहीं छंटे, हटाए न हटे, घटाए न घटे, यानी जिसका कोई 'कट' न हो! इस दुष्ट बुद्धि-शुद्धिवादी के गले यह बात नहीं उतरती है, क्योंकि जीवन में जब हर चीज की काट है, तो संकट की कैसे न होगी? जिस जीवन में हर जगह, हर समय 'कट मनी' काम करती है, तो संकट में भी कर सकती है! जहां हर बंदा कट मनी को चट मनी बनाता हो, वहां संकट को काटने वाली कट मनी भी होती ही होगी और इस तरह, संकट चाहे किसी से कटे न कटे, कट मनी से जरूर कटता है, नहीं तो संकटापन्न साहित्य जीवित कैसे रह पाता?

हमारा मानना है कि साहित्य में कट मनी का हमेशा से बोलबाला रहा है। साहित्य में इतने कट होते हैं कि बड़े से बडा संकट 'कट' सकता है। साहित्य में अरसे से 'कट टु कट' होता आया है। वह कभी 'लेफ्ट कट' करता है, तो कभी 'राइट कट' करता है और कभी बीच में कट करता हुआ 'लेफ्ट-राइट-लेफ्ट' करता रहता है। वह छपता है तो कट, बिकता है तो कट, पढ़ता है तो कट, लड़ता है तो कट, सड़ता है तो कट। बनी रहे साहित्य में 'कट मनी'। यह सभी संकटों की काट है। ऐसी कट मनी की जय हो!

कटाक्ष

राजेंद्र धोड़पकर

सांसारिक प्रेम और देश प्रेम

उपन्यास सम्राट के रूप में विख्यात प्रेमचंद ने नवाब राय के नाम से लेखन की शुरुआत की। मूल नाम धनपत राय श्रीवास्तव। इनका तीस वर्षों का लेखन अपने समय का सामाजिक-सांस्कृतिक दस्तावेज है। 'गोदान' जैसे कालजयी उपन्यास के लेखक प्रेमचंद (31 जुलाई, 1880-08 अक्तूबर, 1936) की प्रसिद्ध प्रेम कहानी 'सांसारिक प्रेम और देश प्रेम' का एक अंश...

प्रेम-कथा - 12

■ प्रेमचंद

मैग्डलीन का घर स्विट्जरलैंड में था। वह एक समृद्ध व्यापारी की बेटी थी और अनिन्द्य सुंदरी। आंतरिक सौंदर्य में भी उसका जोड़ मिलना मुश्किल था। कितने ही अमीर और रईस लोग उसका पागलपन सर में रखते थे, मगर वह किसी को कुछ खयाल में न लाती थी।

मैजिनी जब इटली से भागा, तो स्विट्जरलैंड में आकर शरण ली। मैग्डलीन उस वक्त भोली-भाली जवानी की गोद में खेल रही थी। मैजिनी की हिम्मत और कुर्बानियों की तारीफें पहले ही सुन चुकी थी। कभी-कभी अपनी मां के साथ यहां आने लगी और आपस का मिलना-जुलना जैसे-जैसे बढ़ा और मैजिनी के भीतरी सौंदर्य का ज्यों-ज्यों उसके दिल पर गहरा असर होता गया, उसकी मुहब्बत उसके दिल में पक्की होती गई। यहां तक कि उसने एक दिन खुद लाज-शर्म को किनारे रखकर मैजिनी के पैरों पर सिर रख दिया और कहा- मुझे अपनी सेवा में स्वीकार कर लीजिए।

मैजिनी पर भी उस वक्त जवानी छाई हुई थी। देश की चिंताओं ने अभी दिल ठंडा नहीं किया था। जवानी की पुरजोश उम्मीदें दिल में लहरें मार रही थीं, मगर उसने संकल्प कर लिया था कि मैं देश और जाति पर अपने को न्योछावर कर दूंगा और इस संकल्प पर कायम रहा। एक ऐसी सुंदर युवती के नाजुक होंठों से ऐसी दरख्वास्त सुनकर रद्द कर देना मैजिनी ही जैसे संकल्प के पक्के, हियाव के पूरे आदमी का काम था।

मैग्डलीन भीगी-भीगी आंखें लिए उठी, मगर निराश नहीं हुई थी। इस असफलता ने उसके दिल में प्रेम की आग और भी तेज कर दी। आज मैजिनी को स्विट्जरलैंड छोड़े कई साल गुजरे, मगर वफादार मैग्डलीन अभी तक मैजिनी को नहीं भूली। दिनों के साथ उसकी मुहब्बत और भी गाढ़ी और सच्ची होती जा रही थी।

मैजिनी खत पढ़ चुका, तो एक लंबी आह भरकर रफेती से बोला- 'देखा मैग्डलीन क्या कहती है?'

रफेती-'उस गरीब की जान लेकर दम लोगे।'

मैजिनी फिर खयाल में डूबा-'मैग्डलीन, तू नौजवान है, सुंदर है, भगवान ने तुझे अकूत दौलत दी है, तू क्यों एक गरीब, दुखियारे, कंगाल, फक्कड़ परदेश में मारे-मारे फिरनेवाले आदमी के पीछे अपनी जिंदगी मिट्टी में मिला रही है। मुझ जैसा मायूस, आफत का मारा हुआ आदमी तुझे क्यों कर खुश रख सकेगा? नहीं-नहीं, मैं ऐसा स्वार्थी नहीं हूं। दुनिया में बहुत-से ऐसे हंसमुख खुशहाल नौजवान हैं, जो तुझे खुश रख सकते हैं, जो तेरी पूजा कर सकते हैं। क्यों तू उनमें से किसी को अपनी गुलामी में नहीं ले लेती।

मैं तेरे सच्चे, नेक और निःस्वार्थ प्रेम का आदर करता हूं। मगर मेरे लिए, जिसका दिल देश और जाति पर समर्पित हो चुका है, तू एक प्यारी हमदर्द बहन के सिवा और कुछ नहीं हो सकती। मुझमें ऐसी क्या खूबी है, ऐसे कौन से गुण हैं कि तुझ जैसी देवी मेरे लिए ऐसी मुसीबतें झेल रही है। आह मैजिनी, तू कहीं का ना हुआ। जिनके लिए तूने अपने को न्योछावर कर दिया, वह तेरी सूरत से नफरत करते हैं। जो तेरे हमदर्द हैं, वह समझते हैं तू सपने देख रहा है।' इन खयालों में बेबस होकर मैजिनी ने कलम-दवात निकाली और मैग्डलीन को खत लिखना शुरु किया।

प्यारी मैग्डलीन,

तुम्हारा खत उस अनमोल तोहफे के साथ आया। मैं तुम्हारा हृदय से कृतज्ञ हूं। मैं उसकी हमेशा कद्र करूंगा। यह मेरे पास हमेशा एक सच्चे, निःस्वार्थ और अमर प्रेम की स्मृति के रूप में रहेगा और जिस वक्त यह मिट्टी का शरीर कब्र की गोद में जाएगा, मेरी आखिरी वसीयत यह होगी कि वह यादगार मेरे जनाजे के साथ दफन कर दी जाए। मैं शायद खुद उस ताकत का अंदाजा नहीं लगा सकता, जो मुझे इस खयाल से मिलती है कि दुनिया में जहां चारों तरफ मेरे बारे में बदगुमानियां फैल रही हैं, वहां कम-से-कम एक ऐसी नेक औरत है, जो मेरी नीयत की सफाई और मेरी बुराइयों से ज्यादा पाक कोशिश पर सच्ची निष्ठा रखती है और शायद तुम्हारी हमदर्दी का यकीन है कि मैं जिंदगी की ऐसी कठिन परीक्षाओं में सफल होता जाता हूं।

इलस्ट्रेशन
यशवंत नामदेव

तुम्हारा खत उस अनमोल तोहफे के साथ आया। मैं तुम्हारा हृदय से कृतज्ञ हूं। मैं उसकी हमेशा कद्र करूंगा। यह मेरे पास हमेशा एक सच्चे, नि :स्वार्थ और अमर प्रेम की स्मृति के रूप में रहेगा।

मगर प्यारी बहन, मुझे कोई तकलीफ नहीं है। तुम मेरी तकलीफों के खयाल से अपना दिल मत दुखाना। मैं बहुत आराम से हूं। तुम्हारे प्रेम जैसी अक्षय निधि पाकर भी अगर मैं कुछ थोड़े से शारीरिक कष्टों का रोना रोऊं, तो मुझ जैसा अभागा आदमी दुनिया में कौन होगा। मैंने सुना है, तुम्हारी सेहत रोज-ब-रोज गिरती जा रही है। मेरा जी बेअख्तियार चाहता है कि तुम्हें देखे। काश, मेरा दिल इस काबिल होता कि तुम्हें भेंट चढ़ा सकता। मगर एक पजमुर्दा उदास दिल तुम्हारे काबिल नहीं।

मैग्डलीन, खुदा के वास्ते अपनी सेहत का खयाल रक्खो। मुझे शायद उससे ज्यादा और किसी बात की तकलीफ न होगी कि प्यारी मैग्डलीन तकलीफ में है। मेरे लिए तुम्हारा पाकीजा चेहरा इस वक्त निगाहों के सामने है। मेगा देखो, मुझसे नाराज न हो। खुदा की कसम मैं तुम्हारे काबिल नहीं हूं। आज क्रिसमस का दिन है, तुम्हें क्या तोहफा भेजें। खुदा तुम पर हमेशा अपनी बेइंतहा बरकतों का साया रक्खे। अपनी मां को मेरी तरफ से सलाम कहना। तुम लोगों को देखने की इच्छा है। देखें कब पूरी होती हैं।

इस वाकये के बाद बहुत दिन गुजर गए। जोजेफ मैजिनी फिर इटली पहुंचा और रोम में पहली बार जनता के राज्य का एलान किया गया। तीन आदमी राज्य की व्यवस्था के लिए निर्वाचित किए गए। मैजिनी भी उनमें एक था। मगर थोड़े ही दिनों में फ्रांस की ज्यादतियों और पोडमांट के बादशाह की दगाबाजियों की बदौलत इस जनता के राज का खात्मा हो गया। उसके कर्मचारी और मंत्री अपनी जानें लेकर भाग निकले। मैजिनी अपने विश्वसनीय मित्रों की दगाबाजी और मौकापरस्ती पर पेचोताब खाता हुआ खस्ताहाल और परेशान रोम की गलियों की खाक छानता फिरता था। उसका यह सपना कि रोम को मैं जरूर एक दिन जनता के राज का केंद्र बनाकर छोड़ूंगा, पूरा होकर फिर तितर-बितर हो गया।

दोपहर का वक्त था। धूप से परेशान होकर वह एक पेड़ की छाया में दम लेने के लिए ठहर गया कि सामने से एक लेडी आती हुई दिखाई दी। उसका चेहरा पीला था, कपड़े बिल्कुल सफेद और सादा, उम्र तीस साल से ज्यादा। मैजिनी आत्म-विस्मृति की दशा में था कि यह स्त्री प्रेम से व्यग्र होकर उससे गले लिपट गई। मैजिनी ने चौंककर देखा, बोला-'प्यारी मैग्डलीन, तुम हो...' यह कहते-कहते उसकी आंखें भीग गईं। मैग्डलीन ने रोकर कहा- 'जोजेफ...' और मुंह से कुछ न निकला।

दोनों खामोश कई मिनट तक रोते रहे। आखिर... आखिर मैजिनी बोला-'तुम यहां कब आईं, मेगा?'

मैग्डलीन- 'मैं यहां कई महीने से हूं, मगर तुमसे मिलने की कोई सूरत नहीं निकलती थी। तुम्हें काम-काज में डूबा हुआ देखकर और यह समझकर कि अब तुम्हें मुझ जैसी औरत की हमदर्दी की जरूरत बाकी नहीं रही, तुमसे मिलने की कोई जरुरत नहीं देखती थी।' (रुककर) 'क्यों जोजेफ, यह क्या कारण है कि अक्सर लोग तुम्हारी बुराई किया करते हैं? क्या वह अंधे हैं, क्या भगवान ने उन्हें आंखें नहीं दीं?' जोजेफ- 'मेगा, शायद वह लोग सच कहते होंगे। फिलहाल मुझमें वह गुण नहीं हैं, जो मैं शान के मारे अक्सर कहा करता हूं कि मुझमें हैं...।'

(साभार : 'हिंदी समय' महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा)

पुस्तक अंश

अमृता इस रिश्ते को कैसे निभा पाएगी?

साहिर लुधियानवी के शेर, नज्में और गजलें हमें रुलाते, हंसाते और व्यवस्था के प्रति आक्रोश से भरते हैं। उनके सीने में दर्द का दरिया बहता था और हम उनके गीतों पर झूमते थे। शब्दों के जादूगर साहिर के बहुमुखी संसार से परिचित करवाती पुस्तक 'जिंदगी का साथ निभाता चला गया' से प्रस्तुत है एक अंश...

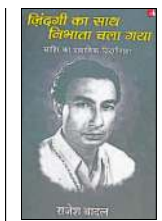
जिंदगी का साथ निभाता चला गया
(साहिर का प्रामाणिक जिंदगीनामा)
लेखक : राजेश बादल
प्रकाशक : मंजुल पब्लिशिंग हाउस, नोएडा
मूल्य : ₹499

साहिर बंबई में और उधर अमृता प्रीतम दिल्ली में। दोनों के लिए एक-दूसरे को भूलना नामुमकिन था। करीब डेढ़ हजार किलोमीटर दूर रहते हुए भी एक-दूसरे के दिलों में धड़क रहे थे। लाहौर में वे एक-दूसरे की जिंदगी में इतनी गहराई तक दाखिल हो गए थे कि आखिरी सांस तक नहीं निकले। एक अपने अकेलेपन का बोझ ढोता हुआ, तो दूसरा रिश्तों की गठरी का बोझ उठाए जी रहा था। अपने-अपने खालीपन की कसक लिए।

मां को बेटे की तन्हाई कचोटती थी। उन्हें साहिर और सुधा का रिश्ता टूटने की भी जानकारी थी। उन्हें अमृता और साहिर के रिश्ते की भी खबर थी। वे जानती थीं कि अमृता साहिर के दिल से कभी नहीं निकलेगी। यह देखकर उन्होंने एक बार बेटे से साफ-साफ कहा, 'अमृता से ब्याह क्यों नहीं कर लेते। हर शाम शराब और किराए के दोस्त कब तक साथ देंगे।'

साहिर नम आंखों से मां को घूरकर देखते। देर तक उनकी आंखों में झांकते रहते, मानो कह रहे हों कि आपकी बात का क्या जवाब दूं? मेरी आंखों से जान लो। इसके बाद वे फीकी मुस्कान के साथ चुप रह जाते। ठंडी सांस लेते हुए सोचते- मां सिर्फ अपने बेटे की चिंता कर रही है, लेकिन क्या मैं अमृता के साथ न्याय कर सकूंगा?

अमृता के साथ पति है, दो बच्चे हैं, देश-परदेस में उसे मान-सम्मान मिलता है। बेहद खूबसूरत है और मैं लंबा, टेढ़े-मेढ़े शरीर वाला। चेहरे पर दाग, लंबी-सी नाक, एक तरह से कुरूप, रोज-रोज फिल्मी माहौल वाली दारू की महफिलें अमृता इस रिश्ते को कैसे ढोएगी? एक रिश्ते के बोझ से मुक्त होगी, दूसरे में उलझ जाएगी।

उधर, अमृता रोज मरती, रोज जीती। सरदार प्रीतम सिंह अमृता को बेहद प्यार करते थे, लेकिन अमृता दिल से उस प्यार का मान नहीं रख पा रहीं थीं। बच्चे बड़े हो रहे थे। आकाशवाणी में तीन-चार सौ रुपये की नौकरी करती थी।

अमृता जानती थी कि वो साहिर की मोहब्बत हैं, लेकिन वो खुलता क्यों नहीं? उसकी उलझन क्या है? एक बार प्यार से कहे तो सही - 'अमृता! मैं तुमसे प्यार करता हूं। आओ मुझसे शादी करो।' फिर ठंडी सांस भरती।

सोचती, सितारा है फिल्म इंडस्ट्री का। उसके नाम पर फिल्में हिट होती हैं। दौलत उसके कदम चूमती है। उसकी कलम पर सरस्वती विराजती है। वो मुस्लिम, मैं सिख। वो लिखता है उर्दू में, मैं पंजाबी में। मेरे साथ मेरे बच्चों का बोझ क्यों उठाएगा। मैं अमृता प्रीतम से अमृता साहिर बन पाऊंगी या नहीं, फिर डबडबाई आंखों से मन को बहलातीं। सोचती साहिर का इतना ही प्यार मिलना था, फिर भी कोई अनजानी आस लिए अमृता जी रही थीं।

वक्त गुजरता रहा। अमृता ने लिखा, 'हमारे बीच नौ सौ मील का फासला था। ये नौ सौ मील लंबा रेगिस्तान था, जो मेरे सामने बिछा हुआ था। दिल्ली रेडियो से मैं रोज जो प्रोग्राम पेश करती थी, कभी-कभी उसमें मेरा गीत भी होता था, मेरे खून से भीगा हुआ, जिसे पेश करते हुए मुझे एहसास होता कि मैंने एक पल के लिए वो नौ सौ मील का फासला तय कर लिया है...।'

इसी बीच, एक घटना और घटी। अमृता ने लिखा- '1957 में मेरी एक पंजाबी नज्म, सुनहड़े पर साहित्य अकादेमी का अवॉर्ड मिला। यह नज्म साहिर पर लिखी गई थी। फोन पर खबर मिलते ही सर से पांव तक मैं तपने लगी। खुदाया ये नज्म मैंने किसी इनाम के लिए तो नहीं लिखी थी, जिसके लिए लिखी थी, उसने तो पढ़ी ही नहीं। अब सारी दुनिया पढ़े भी, तो मुझे क्या?'

अवॉर्ड की खबर जंगल में आग की तरह फैली। प्रेस रिपोर्टर्स और फोटोग्राफरों से घर भर गया। वो अमृता की फोटो यही नज्म लिखते हुए लेना चाहते थे। अमृता ने लिखना शुरू किया... देर तक लिखती रहीं।

पुस्तकें आई हैं

औरत का घर
(कहानी-संग्रह)
लेखिका : जसिंता केरकेट्टा
प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
मूल्य : ₹299

ऐसा कहते हैं कि ईंट-गारे से बना ढांचा मकान होता है। औरत उसे घर बनाती है। यह अलग बात है कि वह इस घर के केंद्र में नहीं, बल्कि किसी कोने में होती है। यह स्थिति हर समाज की है। कहीं ज्यादा, कहीं कम। और-तो-और स्त्री अधिकारों के झंडाबरदार आदिवासी समाज में भी यह बुराई आहिस्ता-आहिस्ता पांव पसारती जा रही है। आदिवासी समाज के इसी बदलाव की साक्षी हैं 'औरत का घर' की कहानियां। इन कहानियों की लेखिका स्वयं आदिवासी समाज से आती हैं, इसलिए ये विश्वसनीय हैं। लैंगिक पूर्वाग्रह, भेदभाव और पितृसत्तात्मक मूल्यों के विविध रंग इन कहानियों में बिना किसी तामझाम के मौजूद हैं।

गजरे की गन्ध
(कहानी-संग्रह)
लेखिका : रिंकल शर्मा
प्रकाशक : अद्विक पब्लिकेशन, दिल्ली
मूल्य : ₹195

'**मैं** चाहती थी तू दुल्हन बने, तेरे बालों में गजरे सजे... पर तू भी मेरी राह पर... आज तेरे हाथों में भी वही गंध बस गई, गजरे की नहीं... मेरी बदकिस्मती की...।' -इन पंक्तियों से गरीबी के दंश को सहज ही महसूस किया जा सकता है। ये पंक्तियां कहानी-संग्रह 'गजरे की गंध' की शीर्षक कहानी से हैं। इस कहानी के केंद्र में चौराहे पर गजरे बेचने वाले बच्चे और महिलाएं हैं। दुनियाभर को खुशबू बांटने वाले इन लोगों के जीवन से खुशबू कोसो दूर है। इनके जीवन में अगर कोई गंध है, तो वह है बदकिस्मती की। संग्रह में ग्यारह कहानियां हैं। पारिवारिक रिश्तों, स्त्री-विमर्श, सामाजिक यथार्थ और मानवीय भावनाओं के ताने-बाने में बुनी ये कहानियां सहज ही दिल को छूती हैं।

इंसान पहले मशीन बाद में
(समसामयिक)
लेखक : विनीत नायर
अनुवाद : अमित कुश
प्रकाशक : पेंगुइन स्वदेश, गुरुग्राम
मूल्य : ₹350

नई खोज मशीन नहीं, इंसानी दिमाग करते हैं। कामयाबी के लिए दूरदृष्टि का होना जरूरी है। दूसरों पर भरोसा करना सीखें और उन्हें सम्मान दें। एक अच्छे लीडर के पास क्या और क्यों का जवाब होना चाहिए। परंपरा और संस्कृति से नियम बनते हैं, नियमों से संस्कृति नहीं। अपना कंट्रोल अपने पास रखें, एआई को न सौंपें। गलतियां ही सफलता की सीढ़ियां हैं। ज्यादा देर तक बैठे रहने के बजाय काम में क्वालिटी दें। तेजी के साथ बुद्धिमानी भी होनी चाहिए। सफलता के साथ विनम्रता बहुत जरूरी है। चौकाएं भी और साथ ही चुनौती भी दें। लक्ष्य तय करें और स्वयं को चढ़ाई के लिए तैयार करें। ऐसे जरूरी तीस विचार पुस्तक 'इंसान पहले मशीन बाद में' में दिए गए हैं। ये उपयोगी विचार इंसान को एआई का सामने करने के लिए और खुद पर भरोसा करने की सीख देते हैं।

रोजनामचा

साप्ताहिक भविष्यफल
(06 सितंबर से 12 सितंबर 2026)

पं. राघवेन्द्र शर्मा
ज्योतिषाचार्य

मेष (21 मार्च-20 अप्रैल)
मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। कारोबारी कार्यों में व्यस्तता रहेगी। परिश्रम अधिक रहेगा। रहन-सहन अव्यवस्थित रहेगा। इस सप्ताह यात्रा भी अधिक रहेगी। पढ़ाई के कार्यों में सफल रहेंगे।

वृष (21 अप्रैल-20 मई)
वाणी में मधुरता रहेगी। पढ़ाई व लेखनादि के कार्यों में व्यस्तता बढ़ेगी। आय में वृद्धि होगी। मित्रों का सहयोग मिलेगा। कारोबार में भागदौड़ अधिक रहेगी। आय में वृद्धि होगी।

मिथुन (21 मई-21 जून)
आत्मविश्वास भरपूर रहेगा। मन में उतार-चढ़ाव भी रहेंगे। किसी पुराने मित्र से भेंट हो सकती है। कारोबार में वृद्धि होगी। भागदौड़ भी बढ़ेगी। सेहत का ध्यान रखें। पिता से धन की प्राप्ति हो सकती है।

कर्क (22 जून-23 जुलाई)
आत्मविश्वास में कमी रहेगी। मन परेशान भी हो सकता है। किसी धार्मिक स्थान पर जा सकते हैं। पिता व संतान की सेहत का ध्यान रखें। नौकरी में कोई अतिरिक्त जिम्मेदारी मिल सकती है।

सिंह (24 जुलाई-22 अगस्त)
आत्मविश्वास भरपूर रहेगा। मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। घर-परिवार में धार्मिक कार्य हो सकते हैं। भवन के रख-रखाव तथा साज-सज्जा के कार्यों पर खर्च बढ़ सकते हैं। भागदौड़ अधिक रहेगी।

कन्या (23 अगस्त-22 सितंबर)
मन परेशान रहेगा। आत्मविश्वास में कमी रहेगी। नौकरी में परिवर्तन की संभावना बन रही है। तरक्की के अवसर मिल सकते हैं। कार्यक्षेत्र में वृद्धि के साथ किसी दूसरे स्थान पर जा सकते हैं।

तुला (23 सितंबर-23 अक्तूबर)
आत्मविश्वास भरपूर रहेगा। मन प्रसन्न रहेगा। कला व संगीत के प्रति रुझान बढ़ सकता है। पारिवारिक जीवन सुखमय रहेगा। परिवार के साथ यात्रा पर जाने का कार्यक्रम बन सकता है।

वृश्चिक (24 अक्तूबर-21 नवंबर)
मन परेशान रहेगा। आत्मविश्वास में कमी रहेगी। नौकरी में अफसरों का सहयोग तो मिलेगा, परंतु कार्यक्षेत्र में परिवर्तन के साथ किसी दूसरे स्थान पर भी जा सकते हैं। भागदौड़ अधिक रहेगी।

धनु (22 नवंबर-21 दिसंबर)
आत्मविश्वास में कमी रहेगी। मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। कारोबार में वृद्धि होगी। भागदौड़ भी अधिक रहेगी। किसी मित्र के सहयोग से लाभ में वृद्धि हो सकती है। संतान सुख में वृद्धि होगी।

मकर (22 दिसंबर-19 जनवरी)
मन परेशान रहेगा। आत्मसंयत रहें। धैर्यशीलता बनाए रखें। परिवार की सेहत का ध्यान रखें। पिता का साथ मिलेगा। कारोबार में परिवर्तन के योग बन रहे हैं। किसी मित्र का सहयोग मिल सकता है।

कुंभ (20 जनवरी-18 फरवरी)
मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। परिवार का साथ मिलेगा। पढ़ाई के कार्यों के प्रति सचेत रहें। व्यवधान आ सकते हैं। कारोबार में वृद्धि होगी। भागदौड़ भी अधिक रहेगी। कारोबार के लिए यात्रा लाभप्रद रहेगी।

मीन (19 फरवरी-20 मार्च)
आत्मविश्वास से लबरेज रहेंगे, परंतु मन परेशान हो सकता है। पढ़ाई के कार्यों में रुचि बढ़ेगी। लेखनादि कार्यों से आय के साधन बन सकते हैं। परिवार की सेहत का ध्यान रखें। भागदौड़ अधिक रहेगी।

स्कैन करें
भविष्यफल और व्रत-त्योहार जानने के लिए

वर्ग पहेली : 8443

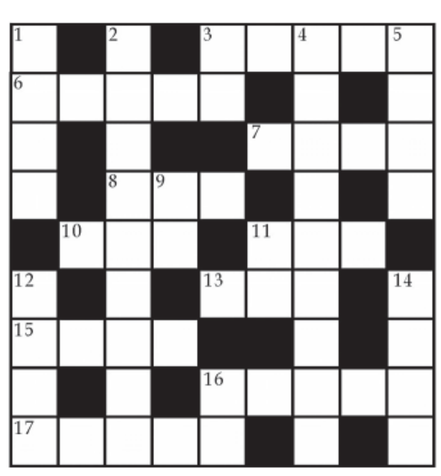

बाएं से दाएं
3. विचार करना; तैयार होना; तय करना (2,3)
6. कोशिश करने वाला; प्रयास में रत (5)
7. वकील का पेशा; किसी दूसरे के लिए की गई पैरवी (4)
8. जीभ; स्वाद; लगाम; रस्सी; टपकना; तन्मय होना (3)
10. मुंह; मुख (3)
11. रुक-रुक कर बोलने वाला; हकलाने वाला (3)
13. उद्देश्यहीन घूमने वाला; जो व्यर्थ घूमता रहे; निकम्मा (3)
15. ज्ञान; पहचान; लक्षण (4)
16. जन नेता; लोकनायक (5)
17. उर्वर; कल्पनाशील; रचनात्मक; सृजनात्मक (5)

ऊपर से नीचे
1. किसी मत के अनुयायियों का समूह; पथ; फिरका; मार्ग; रीति (4)
2. नस का बल खाना; नस हट जाने के कारण पीड़ा और सूजन होना (2,2,2,3)
3. राय; विचार; आशय; भाव; सम्मति; धर्म (2)
4. किसी को बचाने के लिए किसी अन्य को फंसा देना; किसी दोषी को बचाने के लिए किसी निर्दोष पर दोष लगाना (2,1,3,3)
5. पूरा भरा; ठूंस-ठूंस कर भरा; लबालब; मुंह तक (2,2)
9. पौधा जिसके रेशे से टाट व रस्सी बनाते हैं; वेग से चलने का शब्द (2)
11. पवन; वायु; समीर; ख्याति; प्रभाव; साख; चलन; रीति (2)
12. भेंट; नजराना (4)
14. तलाश में फिरना; व्यर्थ घूमना; भ्रम में पड़ना; चूक जाना (4)
16. आब; नीर; पानी; सलिल; अर्घ्य (2)

हरीश चन्द्र सन्सी, विविधा विधा, दिल्ली
(उत्तर अगले अंक में)

वर्ग पहेली 8442 का उत्तर

1 अ	ट	2 क	ना	■	3 स	■	4 श	■
स	■	था	■	5 प	रा	या	प	न
6 म	हा	न	ग	री	य	■	थ	■
य	■	क	■	क्ष	■	7 व्या	प	क
■	8 अ	■	9 ग	ण	क	■	त्र	■
10 रु	धि	र	■	क	■	11 अ	■	12 क
■	क	■	13 म	र	णो	प	रां	त
14 मा	त	क	र	ना	■	ना	■	र
■	म	■	ना	■	15 दे	ना	द	न

सुडोकू : 8397
*कठिन

		7	4		9	1		
4								3
	1			8			6	
6								7
			7	5	2			
2								1
	8			9			3	
1								4
		5	2		6	8		

खेलने का तरीका : दिमागी खेल और नंबरों की पहेली है यह। तर्क से इसे हल कर सकते हैं। ऊपर नौ-नौ खानों के नौ खाने दिए गए हैं। आपको 1 से 9 की संख्याएं इस तरह लिखनी हैं कि खड़ी और पड़ी लाइनों के हरेक खाने में 1 से 9 की सभी संख्याएं आएं। साथ ही 3×3 के हरेक बक्से में भी 1 से 9 तक की संख्याएं हों। पहेली का हल हम कल देंगे।

हल : सुडोकू नं. 8396

1	6	9	2	8	3	7	4	5
3	5	2	1	7	4	9	6	8
8	7	4	6	9	5	2	3	1
5	9	3	4	6	1	8	7	2
2	1	7	5	3	8	4	9	6
4	8	6	9	2	7	1	5	3
9	4	1	3	5	2	6	8	7
7	2	5	8	4	6	3	1	9
6	3	8	7	1	9	5	2	4

व्रत और त्योहार | पंचांग | पं. ऋभुकांत गोस्वामी

06 सितंबर, रविवार, **शक संवत्** : 15 भाद्रपद (सौर) 1948, **पंजाब पंचांग** : 21 भाद्रपद मास प्रविष्टे 2083, **इस्लाम** : 23 रबि-उल्लावल, 1448, **विक्रमी संवत्** : भाद्रपद कृष्ण दशमी तिथि सायं 07.30 मिनट तक। पुनर्वसु नक्षत्र, सिद्धि योग प्रातः 09.45 मिनट तक पश्चात व्यतिपात योग, वणिज करण। चंद्रमा मिथुन राशि में (दिन-रात)। **सूर्य दक्षिणायन**। वर्षा ऋतु। सायं 04.30 मिनट से सायं 06 बजे तक राहुकालम्। भद्रा प्रातः 08.42 मिनट से सायं 07.30 मिनट तक।

वास्तु सलाह | आचार्य मुकुल रस्तोगी

ट्रैवलिंग टूर ऑपरेटर के लिए वास्तु उपाय :

- आपका कार्य मुख्य रूप से मार्केटिंग, यात्रा, नेटवर्किंग, कम्युनिकेशन एवं लगातार लोगों से मिलने पर ही टिका होता है। इसके लिए वायव्य कोण का शयन कक्ष अच्छी सफलता प्रदान कर सकता है। इस दिशा का संबंध वायु तत्व से माना जाता है। यह तत्व परिवर्तन, यात्रा, संपर्क, नेटवर्किंग, कनेक्शंस एवं नए अवसर प्रदान करता है।
- आपका कार्य निरंतर एवं नित्य यात्रा करना है। नए संबंध बनाना है। ग्राहकों से मिलना है। इसके लिए आपका वायु कोण विकसित एवं संतुलित होना आवश्यक एवं लाभदायक होगा। आप इसको साफ रखें। यहां पर हवा का आवागमन सुचारू रूप से रखें।

लोकमत सारांश
जगण्याच्या प्रत्येक पैलूचा सखोल परामर्श

कशाला अर्थव्यवस्था धोक्यात आणता, बापट?

अतुल कुलकर्णी
संपादक, मुंबई

प्रिय विद्यानंद बापट,

नमस्कार.

आपल्याला शुद्ध मराठीत हे पत्र लिहिण्याचा प्रयत्न करत आहे. चुकून काही इंग्रजी शब्द आले तर त्याला पर्यायी मराठी शब्द तुम्हीच सुचवा. कदाचित आम्हाला मराठीचा क्लास... माफ करा शिकवणी लावावी लागेल. शिकवणी हा शब्द मराठी आहे की नाही माहिती नाही. असो. गणेशोत्सवाच्या तोंडावर (तोंडावर की आगमनाआधी?) तुम्ही डीजेवरून महाराष्ट्रभर गदारोळ निर्माण केला आहे. सणावाराच्या काळात डीजे वाजवल्यामुळे किती लोकांना रोजगार (हा हिंदी शब्द आहे का..?) निर्माण झाला याची तुम्हाला कल्पना आहे का..? डीजे वाजवणारे कितीतरी तरुण आता या धंद्यात स्वतःचा जम बसवू लागले असताना तुम्ही त्यांच्या पोटावर पाय देणे बरोबर नाही.

डीजे वाजू लागला की अनेकांच्या अंगात नाद घुमू लागतो. त्यात जर कोणी रंगीत पाणी घेतले असेल तर त्याच्या नृत्याचे अविष्कार, त्यांचे पदलालीत्य अलौकिक होते. नाचताना अनेक जण इतके बेभान होतात की त्यांची पादत्राणे देखील नाचता नाचता ते विसरून जातात. मिरवणुका संपल्या की महापालिकेला कचरा गोळा करताना पादत्राणेही गोळा करावी लागतात. जर डीजे बंद झाले तर रंगीत पाण्याचे शौकीन (शौकीनला पर्यायी मराठी शब्द आठवत नाही) ते पाणी पिणार नाहीत. म्हणजे 'त्या' पाण्याची विक्री कमी होईल. खरे तर हेच लोक आपापल्या परीने सरकारच्या अर्थव्यवस्थेला हातभार लावण्याचे काम करत असतात. एक डीजे बंद झाला तर किती गोष्टींवर त्याचा परिणाम होईल याचा तुम्ही विचार केला आहे की नाही..? हे कोणत्या प्रकारचे स्खलन स्वातंत्र्य म्हणायचे..? म्हणजे चुकीचे वागण्याचे स्वातंत्र्य तुम्ही घेत आहात का? असे जर कोणी विचारले तर..? आपल्याकडे धूर सोडण्याची पांढरी दांडी घेऊ नका, असे सांगितले जाते. (शुद्ध मराठीत सिगारेट ओढू नका) तरीदेखील या दांड्या ज्या छोट्याशा कागदी पुठ्ठ्याच्या वेष्टनात घालून दिल्या जातात, त्या पुठ्ठ्यावर 'हे शरीराला अपायकारक आहे. यामुळे कॅन्सर होऊ शकतो', असे लिहिलेले असते. तरीही बनवणारे बनवतात आणि धूर सोडणारे धूर सोडतात. इथे नेमके स्खलन स्वातंत्र्य कोण कशा पद्धतीने वापरत असते..?

डीजे वाजवल्यामुळे आवाजाचे प्रदूषण होते की नाही हे तपासण्यासाठी महाराष्ट्र प्रदूषण नियंत्रण मंडळाला काम मिळते. हातात यंत्र घेऊन ते अनेक ठिकाणी आवाजाच्या ध्वनी तीव्रतेचे मापन करण्याचे काम म्हणजे डेसिबल बघण्याचे काम करतात. डीजेच वाजणार नसतील तर त्यांना हे काम करता येणार नाही. डीजेच्या कर्णकर्कश्श आवाजामुळे लोकांचे कान खराब होतात. लेझरमुळे अनेकांच्या नेत्रपटलावर इजा निर्माण होते. अनेकांच्या हृदयातील धडधड वाढते. अशावेळी कान, डोळे, हृदय यांचे तज्ज्ञ चिकित्सक वैद्य (म्हणजे इएनटी स्पेशालिस्ट, हार्ट सर्जन) यांना काम मिळते. हे लोक उपचारासाठी रुग्णांना औषधे लिहून देतात. त्यामुळे औषधे विकणाऱ्या दुकानांचे व्यवसाय भरभराटीला येतात. आरक्षी अधिकारी, शिपाई (म्हणजे पोलिस) यांना बंदोबस्त ठेवण्याचे काम मिळते. डीजे वाजवून जे गोंधळ घालतात, त्यांच्यावर गुन्हे दाखल करण्याचे काम त्यांना मिळते. त्यातून काही ठिकाणी काही जणांच्या चिरीमिरीचा खर्च निघतो.

या सगळ्यांचे सर्व प्रकारचे नुकसान तुमच्या एका भूमिकेमुळे होत आहे हे बरोबर नाही. ज्यांचे कान दुखतील त्यांचे ते बघून घेतील. ज्यांचे डोळे खराब होतील ते वैद्यांकडे जातील. या सगळ्यात आमची 'भावना' दुखावली त्याचे काय...? तुम्ही म्हणाल भावना म्हणजे हातपाय आहेत का दुखायला... पण तिकडे पुण्यात आमची दूरची मैत्रीण भावना या सगळ्या प्रकारामुळे प्रचंड व्यथित झाली आहे त्याचे काय..? तुमच्यासारख्यांनी खूप शिकावे, प्रदेशात चांगली नोकरी करावी. इकडे 'ब्रेन ड्रेन' झाले म्हणून लोक बातम्या छापतील. त्या वाचून तिकडे तुम्ही आनंद घ्या... कशाला सगळी अर्थव्यवस्था धोक्यात आणता..? जगातल्या कोणत्या देशात डीजे वाजवला जातो? कोणत्या देशातील लोकांचे कान, डोळे, हृदय लवकर खराब होते? याचा एखादा तौलनिक अभ्यास करून समाजाच्या विव्वछेदक परिस्थितीवर भाष्य करणारा वस्तुनिष्ठ लेख लिहा... तेच आपले काम आहे... कोणाच्या कानाखाली आवाज काढण्यापेक्षा असा आवाज काढल्यानंतर त्यातून किती व कशी कंपने निर्माण होतात यावरही एखादा चांगला लेख होऊ शकेल. आपल्याला त्यासाठी शुभेच्छा..!

तुमचाच, बाबूराव

सार्वजनिक उत्सवातील डीजेचा कानठळ्या बसविणारा आवाज, आकाशात झेपावणारी रंगीबेरंगी लेझर किरणे यांचे दुष्परिणाम दुर्लक्षित करता येणार नाहीत. विशेषतः लहान मुले, तरुण तसेच ज्येष्ठ नागरिकांच्या आरोग्यासाठी धोकादायक ठरू शकतात. काही सेकंदांचा तीव्र लेझर प्रकाशही डोळ्यांच्या संवेदनशील भागावर परिणाम करू शकतो, तर दीर्घकाळ मोठ्या आवाजाच्या संपर्कात राहिल्याने कानातील नाजूक पेशींना इजा होऊन श्रवणशक्ती कमी होण्याचा धोका असतो. त्याचबरोबर डोकेदुखी, चक्कर, कानात आवाज येणे, तणाव, झोपेचा त्रास आणि हृदयविकाराचा धोका असलेल्या ज्येष्ठांमध्ये अस्वस्थता वाढण्याची शक्यता असते. लहान मुलांच्या श्रवणशक्ती आणि एकाग्रतेवरही मोठ्या आवाजाचा विपरीत परिणाम होऊ शकतो.

कव्हर स्टोरी

आवाज घालव डीजे तुला आईची शपथ हाय...

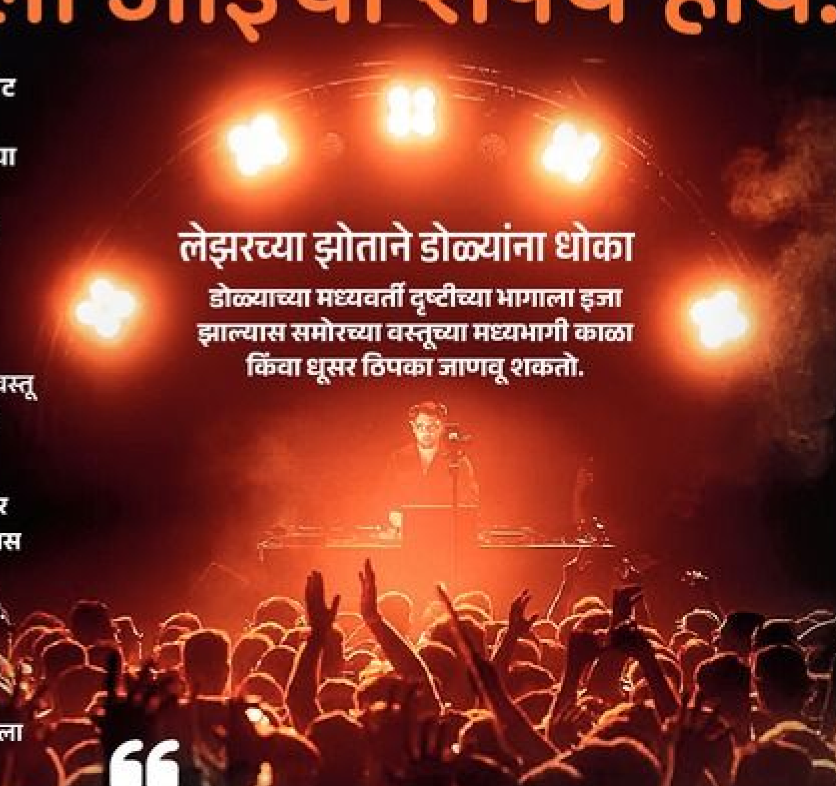

लेझरचा तीव्र प्रकाश थेट डोळ्यांवर पडल्यास प्रकाशकिरण डोळ्याच्या आतील भागातील पडद्यावर केंद्रित होऊन पेशींना इजा करू शकतात.

काही काळ लेझरच्या झोताकडे पाहिल्यानंतर वस्तू स्पष्ट दिसण्यात अडचण येऊ शकते.

अतितीव्र किंवा थेट लेझर किरण डोळ्यावर पडल्यास दृष्टी कायमची कमी होण्याची शक्यता असते.

वाचन, चेहरा ओळखणे किंवा सूक्ष्म वस्तू पाहणे यासाठी महत्त्वाच्या भागाला इजा झाल्यास दैनंदिन कामांवर परिणाम होऊ शकतो.

लेझरच्या झोतामुळे काही वेळ चमक, ठिणग्या, प्रकाशाचे ठिपके दिसतात.

तीव्र प्रकाशामुळे डोळ्यांवर ताण येऊन डोकेदुखी, डोळ्यांत जळजळ किंवा अस्वस्थता जाणवू शकते.

लेझरच्या झोताने डोळ्यांना धोका

डोळ्याच्या मध्यवर्ती दृष्टीच्या भागाला इजा झाल्यास समोरच्या वस्तूच्या मध्यभागी काळा किंवा धूसर ठिपका जाणवू शकतो.

" उत्सवादरम्यान यापूर्वी कोल्हापूर येथे लेझर प्रकाशामुळे तीन जणांच्या दृष्टीवर गंभीर परिणाम झाला होता. हा लेझर प्रकाश इतर दिव्यांच्या तुलनेत अत्यंत प्रखर असतो. विशेषतः हिरव्या आणि निळ्या रंगाच्या लेझर प्रकाशामुळे डोळ्याच्या पडद्यावर गंभीर परिणाम होऊन काळा डाग पडू शकतो. त्यामुळे संबंधित व्यक्तीला समोरच्या व्यक्तीचा चेहरा व्यवस्थित दिसत नाही. तसेच रंगांधळेपणाची समस्याही निर्माण होऊ शकते. त्यामुळे आयोजकांनी नागरिकांच्या डोळ्यांवर थेट लेझर प्रकाश पडणार नाही, याची विशेष काळजी घेतली पाहिजे.

डॉ. तात्याराव लहाने, ज्येष्ठ नेत्रविकार तज्ज्ञ

" लेझर लाइट आकाशाकडे असला पाहिजे. लेझरचा तीव्र प्रकाशझोत थेट डोळ्यांवर पडल्यास डोळ्याच्या पडद्याला गंभीर इजा होऊन दृष्टी कमी होण्याचा धोका असतो. लेझरकडे थेट पाहणे किंवा तो चेहऱ्यावर रोखणे टाळले पाहिजे. मिरवणुकीत लेझरचा वापर होत असल्यास नागरिकांनी त्यापासून सुरक्षित अंतर ठेवावे.

डॉ. चारुता मांडके, नेत्रविकार तज्ज्ञ, कूपर हॉस्पिटल

कानांना धोका!

मोठ्या आवाजाच्या संपर्कानंतर कानात शिट्टी, घंटानाद किंवा गुंजारव ऐकू येऊ शकतो.

मोठ्या आवाजानंतर आवाज बोथट किंवा दूरचा वाटू शकतो. काही वेळ विश्रांती घेतल्यानंतर ही समस्या कमी होते.

मोठ्या आवाजाचा वारंवार किंवा दीर्घकाळ संपर्क आल्यास कानातील संवेदनशील पेशींना कायमस्वरूपी नुकसान आणि श्रवणशक्ती कमी होऊ शकते.

अतितीव्र आवाजामुळे कानात दुखणे, दाब जाणवणे किंवा कान बंद झाल्यासारखे वाटू शकते.

मोठ्या आवाजाचा वारंवार संपर्क त्रासदायक ठरू शकतो आणि झोप व एकाग्रतेवरही परिणाम करू शकतो.

किती आवाज सुरक्षित?

७० डेसिबलपेक्षा कमी आवाज दीर्घकाळासाठी सुरक्षित

७०-८५ डेसिबल : दीर्घकाळ सतत संपर्क टाळणे चांगले.

८५ डेसिबल किंवा अधिक : दीर्घकाळ संपर्कामुळे श्रवणशक्तीला नुकसान होऊ शकते.

१०० डेसिबल : काही मिनिटांतच कानांना धोका निर्माण होऊ शकतो.

१२०-१३० डेसिबल : वेदना आणि तात्काळ श्रवणहानीचा धोका.

" मिरवणुकीत डीजेचा आवाज कानाजवळ किंवा मोठ्या तीव्रतेने ऐकू येत असल्यास कानातील संवेदनशील पेशींवर त्याचा परिणाम होऊ शकतो. त्यामुळे नागरिकांनी विशेषतः लहान मुलांनी ध्वनिक्षेपकांपासून सुरक्षित अंतर ठेवावे.

डॉ. राहुल कुलकर्णी, कान-नाक-घसा तज्ज्ञ

नवजात बालकांच्या आरोग्यावर नक्कीच मोठ्या आवाजाचा परिणाम दिसून येतो. नवजात दक्षता विभागात उपचार घेत असताना काही इलेक्ट्रॉनिक्स उपकरणाचा आवाज पण शक्य तितका कमी ठेवण्याचा प्रयत्न आम्ही करतो. मुलांना ध्वनिवर्धक आणि मोठ्या आवाजाच्या स्रोतापासून शक्य तितके दूर ठेवावे. लहान मुलांना मिरवणुकीत दीर्घकाळ ठेवण्याऐवजी मध्येच शांत ठिकाणी घेऊन जावे.

डॉ. अस्मिता महाजन, नवजात आणि बालरोग तज्ज्ञ विभागप्रमुख, फोर्टिस रहेजा रुग्णालय

हृदयावर गंभीर दुष्परिणाम

दणदणाटाने हृदयावर तत्काळ परिणाम होऊ शकतो. १०० ते ११० डेसिबलपेक्षा जास्त आवाज ऐकतो तेव्हा शरीरात 'फाइट ऑर फ्लाइट' प्रतिक्रिया सुरू होते.

मेंदूमध्ये अँड्रिनालिन स्त्रवू लागते. हृदयाच्या ठोक्यांचा वेग वाढतो. रक्तदाब अचानक वाढतो. रक्तवाहिन्या आकुंचित होतात. तरुण आणि निरोगी व्यक्तींमध्ये हे फक्त थोड्या काळासाठी अतिउत्साह किंवा धडधड म्हणून जाणवू शकते.

उच्च रक्तदाब, हृदयविकार, हृदयविकाराचे सौम्य झटके, अनियमित हृदयाचे ठोके किंवा हृदयविकार यासारख्या व्याधी आहेत, त्यांच्यासाठी हा आवाजाचा त्रास प्राणघातक देखील ठरू शकतो.

छातीत जडपणा, चक्कर येणे, धाप लागणे किंवा हृदयाची अनियमित धडधड वाटल्यास तातडीने डॉक्टरांचा सल्ला घ्या.

" मिरवणुकीदरम्यान, ध्वनिपातळी ११० ते १२० डेसिबल इतकी नोंदवली गेली आहे. ती विमानाच्या इंजिनाच्या आवाजाइतकी असते. अशा तीव्र आवाजात फक्त काही मिनिटे राहिले, तरी हृदय आणि मज्जासंस्थेवर ताण येतो. जागतिक आरोग्य संघटनेनुसार, ८५ डेसिबलपेक्षा जास्त आवाज कानांसाठी आणि शरीरासाठी हानिकारक ठरू शकतो.

डॉ. नागेश वाघमारे, हृदयविकारतज्ज्ञ, बॉम्बे हॉस्पिटल

उदंड झाली सौर ऊर्जा

ताजा विषय

उमाकांत देशपांडे
वरिष्ठ साहाय्यक संपादक

देशात गेल्या काही महिन्यांत विक्रमी सौर ऊर्जा उत्पादन होत असून काही वेळा मागणी नसल्याने किंवा आवश्यक पारेषण यंत्रणा उपलब्ध नसल्याने सौर प्रकल्पांतून वीज घेणे बंद करण्याची वेळ आली आहे. हरित ऊर्जा निर्मिती वाढविण्यासाठी गेली काही वर्षे सौर ऊर्जा निर्मितीवर मोठा भर दिल्याने आता उदंड सौर ऊर्जा निर्मिती होत आहे. मात्र, तांत्रिक कारणांमुळे आणि ऊर्जा साठवण क्षमता खूपच कमी असल्याने थोडा वेळ काही प्रकल्पांमधून वीज घेणे बंद करावे लागत आहे.

महाराष्ट्रासह गुजरात, राजस्थान व अनेक राज्यांनी सौर ऊर्जा क्षेत्रात मोठी कामगिरी केली आहे आणि वेगाने प्रकल्प कार्यान्वित झाले आहेत. मात्र या प्रकल्पातून निर्माण होणारी वीज ग्रीडपर्यंत वाहून नेण्यासाठी पुरेशी पारेषण यंत्रणा उभारली गेलेली नाही. देशात सुमारे साडेपाच लाख मेगावॉट इतकी स्थापित वीजनिर्मिती क्षमता असून त्यातील सुमारे ३० टक्के म्हणजे १ लाख ६२ हजार मेगावॉट सौर ऊर्जा स्थापित क्षमता आहे. सौर प्रकल्पांतून ५०-६० हजार मेगावॉट इतकी वीज दिवसा सकाळी ९-१० पासून ते दुपारी साडेतीन-चार पर्यंत उपलब्ध होते. मे, जून, जुलै या कालावधीत महाराष्ट्रासह देशात कृषीपंपांची वीजमागणी खूपच कमी असते. मे मध्ये पेरणीपूर्व कामे आणि जून-जुलैत पाऊस असल्याने पिकांना पाणी देण्यासाठी विजेची गरज फारशी भासत नाही. त्याचबरोबर पावसामुळे हवेत गारवा असल्याने दिवसा ९-१० वाजता विजेची मागणी तुलनेने कमी असते.

पारेषण वाहिन्यांचे जाळे आवश्यक

राजस्थान, गुजरातमध्ये प्रकल्पापासून ग्रीडपर्यंत जोडणाऱ्या पारेषण वाहिन्यांची क्षमताही कमी आहे. जोधपूर प्रकल्पातील वीज जयपूर लाइनमध्ये ग्रीडला देण्याची सोय करावी लागते. पारेषण वाहिन्यांअभावीही काही वीज घेता येत नाही. वीजमागणी नसल्याने जुलैमध्ये पॉवर एक्सचेंजवर थोडा वेळ प्रति युनिट एक रुपयाहूनही कमी दराने वीज उपलब्ध होती. त्यामुळे ज्या प्रमाणात सौर ऊर्जा प्रकल्प वाढत आहेत, त्या तुलनेत पारेषण जाळेही वाढविणे गरजेचे आहे.

औष्णिक प्रकल्प सुरू ठेवणे गरजेचे :

१ दिवसा औद्योगिक, वाणिज्यिक आणि काही प्रमाणात घरगुती ग्राहकांचा वीजवापर असतो. सौर ऊर्जा दिवसा सात-आठ तास मिळत असल्याने सायंकाळी, रात्री, पहाटेच्या वेळी औष्णिक विजेवरच प्रामुख्याने अवलंबून राहावे लागते.

२ **औष्णिक वीज प्रकल्प बंद केल्यास तो पुन्हा सुरू करण्यासाठी किमान ९ तास लागतात. त्यामुळे दिवसा सौर ऊर्जा काळातही कमीतकमी ५५ टक्के औष्णिक वीजनिर्मिती सुरूच ठेवणे अपरिहार्य असते. ग्रीडची फ्रिक्वेन्सी सांभाळण्यासाठीही ते गरजेचे असते. ती कमी किंवा अधिक होऊन चालत नाही.**

३ सौर वीज खरेदी न केल्यास नुकसान होत असल्याने खासगी कंपन्यांनी ओरड सुरू केली आहे. त्यांनी सौर प्रकल्पांमध्ये मोठी गुंतवणूक केली असून वीज खरेदी केली, तरच त्यांना उत्पन्न मिळू शकते. ती न घेतल्याने त्यांना फटका बसत आहे.

बॅटरी आणि पम्ड स्टोरेज प्रकल्पांची गरज

सौर प्रकल्पांतून निर्माण होणारी अतिरिक्त वीज साठवून ठेवण्यासाठी मोठ्या संख्येने बॅटरी प्रकल्पांची आणि पम्ड स्टोरेज प्रकल्पांची गरज आहे. मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस यांच्या सरकारने दूरदृष्टी दाखवत अनेक कंपन्यांशी सामंजस्य करार केले असून ते एक-दोन वर्षांत कार्यान्वित होतील. बॅटरी प्रकल्पात दिवसा तयार होणारी सौर प्रकल्पातील वीज रात्री वापरता येते. तर पम्ड स्टोरेज प्रकल्पात सौर विजेद्वारे जलविद्युत प्रकल्पातील पाणी वरच्या जलाशयात चढविले जाते आणि सायंकाळी कमाल वीजमागणीच्या काळात ते जलविद्युत निर्मितीसाठी वापरले जाते.

आपले आरोग्य आपल्या घरात

ब्रेड, फळे, भाज्यांवरील बुरशीकडे नको दुर्लक्ष!

प्रा. डॉ. गजानन माळी
सदस्य, मायक्रोबायोलॉजिस्ट सोसायटी, इंडिया

अनेक वेळा आपण फळे किंवा फळभाज्यांवरील तसेच ब्रेडवरील बुरशीचा भाग कापून उर्वरित भाग खातो. पण, असे अन्न खावे का? असा प्रश्न पडतो. अन्नात बुरशी धाग्यांसारख्या जाळीच्या रूपात वाढते. त्याला 'मायसेलियम' म्हणतात. हे जाळे अन्नाच्या आत वृक्षांच्या मुळासारखे पसरते. अशा बुरशीचे सूक्ष्म बीजे अन्नाच्या पृष्ठभागातून बाहेर येतात, तेव्हा अन्नाचा रंग बदलतो आणि त्यावर धुळीसारखा थर दिसू लागतो. काही पदार्थ हितकारक बुरशी वापरूनच करतात. परंतु याचा अर्थ असा नाही की आपण बुरशी लागलेले कोणतेही अन्न खाऊ शकतो.

फूड स्टँडर्ड्स एजन्सीने (एफएसए) बुरशी लागलेले कोणतेही अन्न खाण्यास मनाई केली आहे. लहान मुले, वृद्ध, गर्भवती अशांनी बुरशीयुक्त अन्न खाऊ नये. बुरशीमुळे लगेच विषबाधा होत नाही. परंतु काही बुरशी विषारी घटक तयार करतात. अधिक प्रमाणात बुरशीचे सेवन केले तर पोटाचे विकार होऊन यकृत किंवा मूत्रपिंडालाही धोका निर्माण होतो. अॅस्परजिलस सारख्या बुरशी ओलसर धान्य, सुक्या मेव्यावर वाढतात आणि विष तयार करतात. असे विष कमी प्रमाणात का होईना, पण वारंवार खाल्ल्यास दीर्घकालीन परिणाम होतो.

काय खावे, काय टाळावे?

घट्ट किंवा कडक फळे व भाज्यांवर बुरशीचे थोडे डाग असतील, तर ती बहुतेकदा वापरण्यायोग्य असतात. चिकट किंवा ओलसर, बुळबुळीत असतील, तर फेकून द्यावीत.

मुळा, गाजर किंवा कोबीसारख्या घट्ट किंवा कडक फळभाज्यावरील बुरशीभोवती आणि खाली किमान १ सेमीपर्यंतचा भाग कापून टाकावा.

बुरशी लागलेला सफरचंदाचा रस कधीही पिऊ नये.

काकडी, टोमॅटो आणि पीचसारखी मऊ फळे आणि भाज्यांमध्ये बुरशी आतपर्यंत वेगाने पसरू शकते. त्यामुळे ती लगेच फेकून द्यावीत.

जॅमच्या वर हिरवी बुरशी दिसली, तर वरचा थर आणि त्याखालील काही सेंटीमीटरचा भाग काढून टाकून उरलेला भाग लवकर खावा.

...आणि त्यानंतर चमत्कार घडू लागले!

संजय भाटिया
माजी उपलोकायुक्त, महाराष्ट्र राज्य

अध्यात्म

ध्यानाच्या विविध पद्धतींचा अनुभव घेतल्यानंतर मी 'भक्ती'मार्गाकडे वळलो; ईश्वरप्राप्तीसाठी अखेर एका मार्गावर लक्ष केंद्रित करण्याचा निर्णय माझ्या आध्यात्मिक प्रवासाबाबत मी यापूर्वीच्या लेखांमध्ये विविध ध्यानपद्धतींशी झालेल्या माझ्या परिचयाचे आणि अनुभवांचे वर्णन केले आहे. यामध्ये ट्रान्सेंडेंटल मेडिटेशन, विपश्यना, राजयोग, क्रिया योग, ज्ञानयोग, पतंजली योग तसेच न्या. दुधाड यांच्या ब्रह्मविद्या योग यांचा समावेश आहे.

माझ्या मनातील अनेक प्रश्नांची उत्तरे अद्याप मिळाली नव्हती. त्यामुळे माझा आध्यात्मिक शोध सुरूच ठेवला. विपश्यनेचा सराव मी नियमितपणे करत होतो; मात्र इतर काही पद्धतींमधून जे काही मला आवडले, ते स्वीकारत माझ्या ध्यानाच्या सरावात त्याची भर घालत होतो. यानंतर मुंबईत एका आध्यात्मिक संस्थेच्या माध्यमातून 'वननेस युनिव्हर्सिटी'च्या अम्मा भगवान यांच्या शिकवणीवर आधारित काही आध्यात्मिक वर्ग सुरू असल्याचे माझ्या निदर्शनास आले. चित्रपट अभिनेत्री स्मिता जयकर यांच्या माध्यमातून हे वर्ग घेतले जात होते. या शिकवणीचा मुख्य आधार 'चक्र शुद्धी' आणि भावनिक शुद्धीकरण हा होता.

भावनिक ओझे कमी करण्यासाठी आणि मनातील साचलेल्या भावना स्वच्छ करण्यासाठी या वर्गामध्ये विविध प्रक्रिया केल्या जात होत्या. मी दोन सत्रांना उपस्थित राहिलो. त्यानंतर अम्मा आणि भगवान यांची भेट घेण्याची इच्छा झाली.

अम्मा-भगवान यांना भेटण्यासाठी शेकडो भक्त उत्सुक होते आणि मोठ्या प्रमाणावर देणग्याही दिल्या जात असल्याचे माझ्या लक्षात आले. ओव्हरसीज युनिव्हर्सिटीच्या मुख्यालयाला भेट देण्यासाठीही मोठी रक्कम खर्च करावी लागत होती. माझ्याकडे तेवढे पैसे नव्हते. त्यामुळे माझे आयएएस बॅचमेट मित्राची मदत घेण्याचे ठरलवे. योगायोगाने हा प्रयत्न यशस्वी झाला. माझी पत्नी अनुराधा हिच्यासोबत मी तेथे जाण्याचे ठरवले. अनुराधाला या भेटीत विशेष रस नव्हता. आम्ही कॅम्पसमध्ये पोहोचलो. तेथे मोठी गर्दी होती आणि अनेक जण प्रतीक्षा करत होते. मला मात्र काही मिनिटांतच त्यांची भेट मिळाली. त्यांनी मला त्यांच्या इतर काही आश्रमांना भेट देण्याचा सल्ला दिला. तसेच त्यांच्यासोबत दहा दिवसांची आध्यात्मिक साधना करण्यास सांगितले. या काळात मला तेथील 'मूल मंत्र' नावाची एक पद्धतही परिचित करून देण्यात आली आणि ती मला आवडली. त्यानंतर त्यांच्या इतर काही आश्रमांनाही मी भेट दिली. मात्र मी नेहमी विविध पर्यायांचा शोध घेत असल्याने मूल मंत्रचा समावेश माझ्या नियमित ध्यानपद्धतीत केला नाही.

'भगवद्गीता'कडे वळण्याचा टप्पा

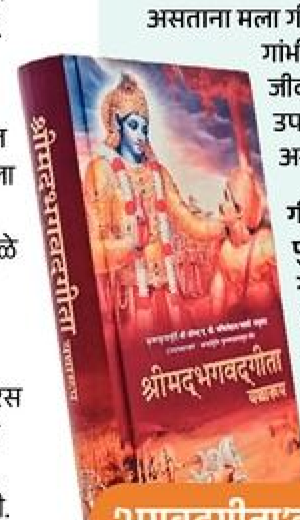

माझ्या आध्यात्मिक शोधातील पुढचा टप्पा म्हणजे भगवद्गीतेचे वाचन. 'एखार्ट टोल अँड पॉवर ऑफ नाऊ' या पुस्तकाचा संदर्भ घेत असताना मला गीतेची ओळख अधिक गांभीर्याने झाली. दैनंदिन जीवनासाठी अत्यंत सुंदर आणि उपयुक्त असे हे पुस्तक असल्याचे मला जाणवले.

गीतेच्या मालिकेतील प्रत्येक पुस्तकाने माझ्या मनात गीतेबद्दलची उत्सुकता वाढवली. लेखक एखार्ट एश्वारन यांच्या लेखनातून मला मोठा आनंद आणि मानसिक आधार मिळाला. यातून माझा कल 'भक्ती'मार्गाकडे वाढू लागला.

गीतेमध्ये भगवान श्रीकृष्णापर्यंत पोहोचण्याचा सर्वोत्तम मार्ग कोणता, याबाबत मार्गदर्शन केले आहे. यापूर्वी उल्लेख केलेल्या ज्ञानमार्गाच्या तुलनेत कृष्णापर्यंत पोहोचण्यासाठी अनेक मार्ग असल्याचे गीता सांगते. मात्र, मला शेवटी सर्वात सोपा मार्ग 'भक्ती' हाच असल्याचे जाणवले.

शिव, कृष्ण आणि हनुमानाची भक्ती

विविध मार्गांचा शोध घेतल्यानंतर मी आता शिवमंदिर, कृष्णमंदिर व हनुमानमंदिरांना भेट देण्याचे ठरवले. भक्तीच्या या मार्गाने मला नैसर्गिक आनंद मिळू लागला. मंदिरातील विधी मात्र भावले नाहीत.

त्यामुळे मी शिव आणि भगवान श्रीकृष्ण यांच्या छोट्या मूर्ती घरी आणल्या आणि त्यांची पूजा सुरू केली. मात्र काही काळानंतर मला जाणवले की, विपश्यनेसह आधीच्या ध्यानपद्धती आणि त्यात वेळोवेळी केलेल्या भर यापेक्षा आता माझा आध्यात्मिक शोध एका वेगळ्याच दिशेने जात आहे.

अनेक साधनांचा अतिरेक आणि अखेरचा निर्णय

अनेक आध्यात्मिक साधना एकाच वेळी करण्याचा प्रयत्न करत असताना एक मोठा टप्पा आला. इतक्या पद्धतींचा पाठलाग करण्यापेक्षा एखाद्या एका मार्गावर पूर्णपणे लक्ष केंद्रित करणे आवश्यक आहे, अशी जाणीव झाली. त्यासाठी मी गुरूचा शोध आणि ईश्वराकडे प्रार्थना सुरू केली - 'मला योग्य मार्ग दाखवा.' ...आणि त्यानंतर चमत्कार घडू लागले!

एआय अपडेट

समुद्राच्या पाण्याखाली जमा होतोय तुमचा डेटा

चीन, जपान आणि सिंगापूरमध्ये प्रयोगांना वेग; मात्र समुद्री पर्यावरणावर परिणाम, देखभालीचे मोठे आव्हान

कृत्रिम बुद्धिमत्तेच्या वाढत्या वापरामुळे डेटा केंद्रांची मागणी वाढत आहे. त्यामुळे वीज वापर, पाण्याची गरज व कार्बन उत्सर्जनाबाबत चिंता वाढली आहे. या पार्श्वभूमीवर कंपन्या पर्याय म्हणून समुद्रातील डेटा केंद्रांचा विचार करत आहेत. २०१५ मध्ये मायक्रोसॉफ्टने पाण्याखालील डेटा केंद्रांच्या शक्यतांचा अभ्यास सुरू केला. २०१८ मध्ये स्कॉटलंडजवळ समुद्रतळावर ८६४ संगणक असलेले जलरोधक डेटा केंद्र उभारण्यात आले. दोन वर्षांच्या चाचणीत तेथील संगणक बिघाडाचे प्रमाण जमिनीवरील केंद्रांच्या तुलनेत सुमारे आठपटीने कमी आढळले.

एआय इमेज

चीनचा प्रयोग यशस्वी?

चीनने शांघायमध्ये वाऱ्याच्या ऊर्जेवर चालणारे पाण्याखालील डेटा केंद्र उभारले आहे. जून २०२५ मध्ये सुरू झालेल्या या केंद्राने मे २०२६ मध्ये व्यावसायिक कामकाज सुरू केले. समुद्राचे पाणी शीतकरणासाठी वापरल्याने वीज वापर किमान ३० टक्क्यांनी कमी झाल्याचा दावा आहे.

जपानमध्ये योकोहामाजवळ तरंगत्या व्यासपीठावर सौरऊर्जेवर चालणाऱ्या कंटेनरमधील डेटा केंद्राची चाचणी सुरू असून मार्च २०२७ पर्यंत सुरू राहील. सिंगापूरमध्येही चार मजली तरंगते डेटा केंद्र उभारले जात असून, ते २०२८ मध्ये सुरू होऊ शकेल.

दक्षिण कोरियातील उल्सानमध्ये १ लाखांहून अधिक संगणक असलेले पाण्याखालील केंद्र उभारण्याची योजना आहे.

पर्यावरणाचे नवे आव्हान

१. समुद्रातील डेटा केंद्रांमुळे जमिनीची आणि गोड्या पाण्याची बचत होऊ शकते. मात्र, उपकरणे दुरुस्त करणे किंवा बदलणे कठीण आहे. संपूर्ण केंद्र पाण्याबाहेर काढावे लागू शकते.

२. **शीतकरणानंतर गरम झालेले पाणी समुद्रात सोडल्यास ऑक्सिजन, सामू आणि सागरी जीवसृष्टीवर परिणाम होऊ शकतो. सध्या काही केंद्रांजवळ समुद्राच्या पाण्याचे तापमान सुमारे एक अंश सेल्सिअसने वाढल्याचे आढळले आहे.**

३. त्यामुळे समुद्रातील डेटा केंद्रे कृत्रिम बुद्धिमत्तेच्या वाढत्या गरजा भागवताना वीज, पाणी आणि जमीन वाचवू शकतील का, यासोबतच समुद्री पर्यावरणाचे नुकसान टाळता येईल का, हेही महत्त्वाचे ठरणार आहे.

हॉट-टॉपिक

महाराष्ट्राचा ‘ताप’ वाढणार, तयार आहात?

मुंबईच्या समुद्रापासून मराठवाड्याच्या पाण्यापर्यंत, विदर्भाच्या उष्णतेपासून कोकणच्या मच्छीमारांपर्यंत हवामान बदलाचा फटका आता भविष्यातला विषय राहिलेला नाही. जगाच्या तापमानाने सरासरी १.५ अंशांची मर्यादा ओलांडली तर महाराष्ट्राचे काय होणार? तयार आहोत?

मुंबईत पाऊस पडतो. पाणी साचते. मराठवाड्यात पावसाने ओढ दिली की दुष्काळाचे ढग दाटतात. विदर्भात तापमान वाढले की उष्माघाताचा धोका वाढतो. कोकणात समुद्र खवळला की मच्छीमारांवर संकट. या सगळ्या घटना वेगवेगळ्या वाटतात; पण त्यामागे एकच मोठे चित्र आहे, बदलते हवामान.

संयुक्त राष्ट्रांच्या पर्यावरण प्रोग्राम २ सप्टेंबर २०२६ रोजी प्रसिद्ध केलेल्या ‘लिमिटिंग ओव्हरशूट’ या अहवालाकडे गंभीरपणे पाहावे लागणार आहे. जगाचे सरासरी तापमान औद्योगिक क्रांतीपूर्व पातळीपेक्षा १.५ अंश सेल्सिअसने वाढू न देण्याचे पॅरिस कराराचे उद्दिष्ट होते. मात्र, सध्याच्या धोरणांनुसार हे तापमान पुढील काही वर्षांत १.५ अंशांची मर्यादा ओलांडण्याची शक्यता आता मोठी आहे. इतकेच नव्हे, सर्व विद्यमान हवामानविषयक ठोकताळे खरे ठरले तर तापमानवाढीचा सर्वोत्तम अंदाज सुमारे १.८ अंशांपर्यंत पोहोचू शकतो.

ही केवळ जागतिक तापमानाची आकडेवारी नाही. या आकड्याचा अर्थ महाराष्ट्रासाठी काय, हा खरा प्रश्न आहे. कारण तापमानवाढीचा परिणाम थर्मामीटरपुरता मर्यादित नसतो. तो समुद्राच्या पाण्यात दिसतो, पावसाच्या पद्धतीत दिसतो, धरणांच्या पाणीसाठ्यात दिसतो, शेताच्या उत्पादनात दिसतो, शहरांच्या ड्रेनेजवर दिसतो आणि शेवटी घराच्या खर्चातही दिसतो.

जगाचे सरासरी तापमानाची १.५ अंशांची मर्यादा ही आता केवळ जागतिक राजकारणातील संख्या राहिलेली नाही. ती महाराष्ट्राच्या शहरांपासून शेतापर्यंत पोहोचलेली जोखमीची रेषा आहे. ती रेषा ओलांडली तरी सगळे संपत नाही. पण ती किती लवकर ओलांडतो, किती पुढे जातो आणि पुन्हा किती लवकर खाली येतो, यावर पुढच्या पिढीच्या महाराष्ट्राचे हवामान ठरणार आहे.

बदलणाऱ्या हवामानासाठी महाराष्ट्र किती तयार आहे? विचार करावा लागेल...

‘मुंबई बुडेल का?’ प्रश्न केवळ एवढाच नाही

मुंबईची ओळखच समुद्राशी जोडलेली. शहराचा मोठा भाग सखल आहे. भरती, मुसळधार पाऊस आणि निचरा यांचे गणित बिघडले की शहराला त्याची किंमत मोजावी लागते.

तापमान वाढत गेल्यास हिमनद्या मोठ्या प्रमाणावर वितळतील. सुमारे ३ अंश तापमानवाढीच्या परिस्थितीत शतकाअखेरीस (म्हणजे अजून बराच काळ आहे.) हिमनद्यांच्या वस्तुमानात चतुर्थांशाहून अधिक घट होऊ शकते आणि त्यातून समुद्रसपाटीत सुमारे ९ ते १२.५ सेंटीमीटरपर्यंत वाढ होऊ शकते. त्याचवेळी ग्रीनलँड आणि पश्चिम अंटार्क्टिकासारख्या मोठ्या बर्फाच्या चादरी अस्थिर होतील.

याचा अर्थ लवकरच मुंबई समुद्रात जाणार, असे नाही. पण किनारपट्टी, सखल भाग आणि महत्त्वाच्या पायाभूत सुविधा अधिक असुरक्षित होण्याचा धोका आहे. केवळ किनाऱ्यावर भिंत बांधून चालणार नाही. खाड्या, मॅन्ग्रोव्ह, नाले, पावसाचे पाणी, सांडपाणी व्यवस्था, रस्ते, रेल्वे, वीज आणि गृहनिर्माण - या सर्वांचे नियोजन एकाच हवामानाच्या चौकटीत करावे लागणार आहे.

मराठवाडा : पावसाचा स्वभाव बदलला

मराठवाड्यात दुष्काळ नवीन नाही. पण हवामान बदलामुळे प्रश्न 'पाऊस किती पडतो?' यापेक्षा 'तो कधी, किती वेळ आणि कोणत्या तीव्रतेने पडतो?' असा होत आहे. जायकवाडीपासून गावातील विहिरीपर्यंत संपूर्ण जलव्यवस्थेचे गणित बदलेल. लातूर, बीड, धाराशिव, परभणी यांसारख्या जिल्ह्यांमध्ये त्यामुळे जलनियोजन हे फक्त धरणांवर अवलंबून राहू शकत नाही. पाणलोट क्षेत्र, भूजल पुनर्भरण, शेततळी, जलसंधारण, पिकांची निवड आणि पाण्याचा वापर या सगळ्यांना एकत्र पाहावे लागेल.

विदर्भ : वाढती उष्णता म्हणजे आरोग्याचे संकट

अहवालात इशारा स्पष्ट आहे... १.५ अंशांच्या पुढे तापमान वाढत गेले की हवामानाशी संबंधित जोखीम अधिक तीव्र होत जातात. उष्णतेच्या लाटा, दुष्काळ, अतिवृष्टी आणि इतर टोकाच्या हवामान घटनांचे परिणाम एकमेकांवर होत जातात. नागपूर, अकोला, चंद्रपूर यासारख्या उष्ण भागांमध्ये याचा परिणाम सर्वाधिक जाणवू शकतो. उपाययोजना फक्त महानगरांपुरत्या राहून चालणार नाही. गावात प्राथमिक आरोग्य केंद्रापासून शहरातील रुग्णालयापर्यंत उष्णतेसाठी स्वतंत्र तयारी आवश्यक आहे.

कोकण : समुद्रासोबत बदलेल अर्थकारण

समुद्र हजारो-लाखो कुटुंबांचा रोजगार आहे. रत्नागिरी, सिंधुदुर्ग, रायगड या जिल्ह्यांमध्ये मच्छिमारीवर अवलंबून असलेल्या कुटुंबांसाठी समुद्राच्या तापमानात होणारा बदल थेट आर्थिक प्रश्न बनू शकतो. समुद्रातील तापमान आणि रासायनिक परिस्थिती बदलली की सागरी जैवविविधता, माशांचे अधिवास आणि त्यावर अवलंबून असलेल्या समुदायांवर परिणाम होऊ शकतो.

याचा अर्थ उद्यापासून मासे मिळणार नाहीत असा नाही, पण कोणत्या भागात कोणते मासे मिळतील, त्यांचा हंगाम काय असेल, प्रजननाचे चक्र कसे बदलेल आणि मच्छीमारांना किती लांब समुद्रात जावे लागेल, याचे गणित बदलू शकते.

शेतीसमोर सर्वात मोठे आव्हान

हवामान बदलाचा सर्वाधिक थेट परिणाम शेतीवर होतो. कारण शेतकरी पाऊस, तापमान आणि माती या तीन गोष्टींच्या आधारावर उत्पादन घेतो; आणि या तिन्हींवर हवामान बदलाचा परिणाम होतो. प्रभावी अनुकूलन उपाययोजना न झाल्यास २०५० पर्यंत जागतिक अन्न उत्पादनात १४ टक्क्यांपर्यंत घट होऊ शकते. महाराष्ट्राच्या दृष्टीने हा इशारा महत्त्वाचा आहे.

या प्रश्नांचे उत्तरे शोधावी लागतील

महाराष्ट्रासाठी जिल्हानिहाय हवामान जोखीम नकाशे तयार आहेत का? कोणता जिल्हा उष्णतेसाठी सर्वाधिक असुरक्षित आहे? कुठे दुष्काळाचा धोका वाढतोय? कोणती शहरे पुरासाठी अधिक संवेदनशील आहेत? कोणत्या किनारी गावांना समुद्राच्या बदलत्या पातळीचा धोका आहे? कोणत्या पिकांचे हवामानाशी जुळवून घेणे कठीण होणार आहे?

एआय इमेज

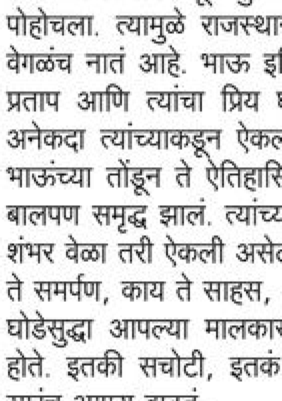

झेलम पाटील चौबळ
डायरेक्टर, केसरी टूर्स

“हुकूम, आपण चाळीस वर्षांपासून राजस्थानमध्ये पर्यटक आणता आहात. आमच्या राजस्थान डोमेस्टिक ट्रॅव्हल मार्टसाठी किमान पाच – सहा जण तरी या. आपली उपस्थिती आमच्यासाठी महत्त्वाची आहे.” त्यांच्या आमंत्रणपत्रात आणि बोलण्यात प्रचंड आदर होता. हीसुद्धा राजस्थानची एक ओळख आहे. राजस्थान मधले लोक अतिशय आतिथ्यशील आहेत.

1984 मध्ये 13 पर्यटकांसह केसरीभाऊंनी पहिली ग्रुप टूर राजस्थानमध्ये नेली आणि केसरी टूर्सची मुहूर्तमेढ रोवली गेली. केसरीच्या ग्रुप टूर्स पर्यटकांच्या पसंतीस पडू लागल्या आणि राजस्थानपासून सुरू झालेला हा प्रवास पुढे जगभरात पोहोचला. त्यामुळे राजस्थान आणि केसरी टूर्स यांचं एक वेगळंच नातं आहे. भाऊ इतिहासाचे शिक्षक होते. महाराणा प्रताप आणि त्यांचा प्रिय घोडा चेतक यांचं वर्णन आम्ही अनेकदा त्यांच्याकडून ऐकलं आहे. मला आजही आठवतं, भाऊंच्या तोंडून ते ऐतिहासिक वर्णन ऐकताना जणू आमचं बालपण समृद्ध झालं. त्यांच्या तोंडून आम्ही ही गोष्ट किमान शंभर वेळा तरी ऐकली असेल. काय ते ध्येयवेडे लोक, काय ते समर्पण, काय ते साहस, सगळंच अचंबित करणारं! त्यांचे घोडेसुद्धा आपल्या मालकासाठी प्राणत्याग करायला तयार होते. इतकी सचोटी, इतकं प्रेम आणि एवढा मोठा त्याग, सारंच अगम्य वाटतं.

आज भारताला भेट देणाऱ्या आंतरराष्ट्रीय पर्यटकांसाठी राजस्थान हे आपल्या देशाची ओळख बनलं आहे. अनेक पर्यटनस्थळी विविध स्मारकं पाहायला मिळतात; पण राजस्थानमध्ये इतिहास आजही जिवंत असल्याचा अनुभव येतो. जयपूरचा आमेर फोर्ट, जोधपूरचा मेहरानगड आणि उदयपूरचा लेक पॅलेस डोळ्यांसमोर आणलं, तरी राजपूती राहणीमान, स्थापत्यशास्त्र, भौगोलिक स्थान, आदींचा विचार करून बांधलेले हे अभेद्य गड देशाच्या संपन्न वारशाची कहाणी सांगताना दिसतात. एकेकाळी अशा रत्नखचित भिंती बहुधा भारतातच होत्या. इथला इतिहास, राजवाड्यांचं सौंदर्य आणि जौहर करणाऱ्या महिलांचा त्याग, या सगळ्यांतून राजस्थानच्या लोकांच्या त्यागाची आणि सामर्थ्याची गाथा आजही जिवंत असल्याचं जाणवतं.

केसरीच्या राजस्थान टूर्समधून या इतिहासाची विविध रूपं जवळून पाहता येतात. जयपूरमधील जंतरमंतर हे विज्ञान, कला आणि स्थापत्यशास्त्राचा अनोखा संगम घडवणारं जागतिक वारसास्थळ आहे. आमेर फोर्टमधील साऊंड अँड लाईट शो भूतकाळातील अनेक घटना डोळ्यांसमोर उभ्या करतो. उदयपूरचा भव्य सिटी पॅलेस, लेक पिचोलामधील बोटिंग आणि गौरवशाली चित्तोडगड मेवाडचा शौर्यपूर्ण वारसा उलगडतात. माउंट अबूला भेट दिल्यानंतर राजस्थानची आणखी एक बाजू समोर येते. नक्की लेकचा निसर्गरम्य परिसर मनाला प्रसन्न करतो, तर दिलवाडा मंदिरांमधील संगमरवरी कोरीवकाम मानवी कल्पकतेची साक्ष देतं.

परदेशी पर्यटकांना इथल्या राजेशाही हवेल्यांचं विशेष आकर्षण वाटतं. कारण या हवेल्यांमध्ये जुन्या काळातलं सौंदर्य आणि आधुनिक सुखसोयींची सुरेख सांगड अनुभवायला मिळते. पारंपरिक लोकनृत्यं, रंगीबेरंगी पेहराव आणि स्थानिक कलाही त्यांना भुरळ घालतात.

केसरीच्या मारवाड टूरमध्ये राजस्थानचा प्रसिद्ध डेझर्ट ट्रँगल अनुभवता येतो. जैसलमेरच्या सॅम सँड ड्यून्सवर दिसणारा सूर्यास्त, वाळवंटातील उंट सफारी आणि लोकनृत्यांनी सजलेली संध्याकाळ कायम स्मरणात राहते. राजस्थानची प्राचीन कला जपणारा पपेट शो इथल्या लोकजीवनाची सुंदर ओळख करून देतो.

वाळवंटाच्या मध्यभागी उभा असलेला जैसलमेर फोर्ट सुवर्ण इतिहासाची भव्यता दाखवतो. गडिसर लेकमधील बोटिंग निवांतपणाचा आनंद देतं, तर जैसलमेर वॉर म्युझियम भारताच्या पराक्रमाची गाथा सांगतं.

पिंक सिटी जयपूर, ब्ल्यू सिटी जोधपूर, गोल्डन सिटी जैसलमेर आणि व्हाईट सिटी उदयपूर, अशा कलर–कोडेड शहरांनी जगभरात स्वतंत्र ओळख निर्माण केली आहे. या शहरांना भेट देताना पर्यटकांना लय भारी वाटतं. शाळेत असताना कुठल्या रंगाचं कुठलं शहर, हे लिहिताना मात्र तारांबळ उडायची.

जोधपूरचा मेहरानगड आणि उम्मेद भवन पॅलेस म्युझियम राजेशाही थाटाची अनुभूती देतात. बिकानेरजवळील देशनोकचं करणीमाता मंदिर आणि आशियातील सर्वांत मोठ्या कॅमल रिसर्च फार्मला दिलेली भेट या प्रवासात काही वैशिष्ट्यपूर्ण अनुभवांची भर घालतं.

कॉटनचे ब्लॉक–प्रिंटेड ड्रेसेस, बेडशीट्स, रजया आणि गोधड्या ही राजस्थानची आणखी एक ठळक ओळख. इथल्या गोधड्यांना तर अख्ख्या जगातून मागणी आहे. परदेशी पाहुण्यांसाठी उंटावरील सफर किंवा हत्तीच्या अंबारीत बसणं हा भारतात मिळणारा खास अनुभव ठरतो. त्यात स्थानिकांचं आदरातिथ्य प्रवासाचा आनंद आणखी वाढवतं.

राजस्थानचा प्रवास म्हणजे केवळ गडकोट, राजवाडे आणि वाळवंट पाहणं नाही; तर इतिहास, शौर्य, लोककला, पारंपरिक पेहराव आणि स्थानिक जीवनशैलीशी जोडून घेणं आहे. केसरीच्या राजस्थान मारवाड, राजस्थान मेवाड माउंट अबू, राजस्थान मेवाड टायगर रिझर्व्ह आणि राजस्थान मेवाड मारवाड अशा विविध टूर्समधून या वैभवशाली भूमीचे अनेक रंग अनुभवता येतात. आपल्यालाही हे अनुभवायचं असेल, तर आजच आपल्या जवळच्या केसरी कार्यालयाला भेट द्या, आपल्या राजस्थान टूरचं बुकिंग करा. राजेशाही राजस्थानची सफर करूया, केसरीसोबत!

टूर कोड	दिवस	टूर	तारखा
RF	07	राजस्थान मेवाड माऊंट अबू	20 सप्टेंबर, 3, 19, 26, 30 ऑक्टोबर
RC	07	राजस्थान मारवाड	20 सप्टेंबर, 2, 12, 23, 30 ऑक्टोबर, 1, 3 नोव्हेंबर
R9	06	उदयपूर कुंभलगड जवाई नारलाई	25 ऑक्टोबर, 15 नोव्हेंबर, 20 डिसेंबर
RB	09	राजस्थान मेवाड टायगर रिझर्व्ह	1,12, 23 ऑक्टोबर, 5,12,16 नोव्हेंबर
WN	06	स्टॅच्यू ऑफ युनिटी नडाबेट अहमदाबाद	14 ऑक्टोबर, 14 नोव्हेंबर, 22 डिसेंबर
HG	08	डलहौसी धरमशाला अमृतसर	24 सप्टेंबर,3,17,24,31 ऑक्टोबर
KF	07	काश्मीर वैष्णोदेवी	12,23 ऑक्टोबर,4,13,18 नोव्हेंबर,14,23 डिसेंबर
SF	08	केरळ कन्याकुमारी	2, 18, 24 ऑक्टोबर, 3, 5, 9, 11, 12, 13 नोव्हेंबर
MO	07	ओडिशा डायमंड ट्रँगल	28 सप्टेंबर, 24 ऑक्टोबर, 12, 16, 21 नोव्हेंबर
NR	07	दार्जिलिंग गँगटोक	28 सप्टेंबर, 30 ऑक्टोबर, 7, 14, 21 नोव्हेंबर
NT	12	अमेझिंग नॉर्थ ईस्ट	30 ऑक्टोबर, 2, 13, 16, 19, 22, 25 नोव्हेंबर
FV	10	व्हिएतनाम कंबोडिया	23 ऑक्टोबर, 6, 13, 20, 27 नोव्हेंबर, 4 डिसेंबर
F2	10	सिंगापूर थायलँड मलेशिया	13, 22 ऑक्टोबर, 5, 12, 16, 23 नोव्हेंबर

टूर कोड	दिवस	टूर	तारखा
FI	08	बाली जकार्ता	17 ऑक्टोबर, 14 नोव्हेंबर, 19 डिसेंबर
NP	08	नेपाळ	24, 27 सप्टेंबर, 9, 16, 23, 30 ऑक्टोबर
NZ	10	भूतान	1, 19, 21, 26 ऑक्टोबर, 4, 9, 12, 18, 23, 25 नोव्हेंबर
M1	06	मॉरिशस	14, 21 नोव्हेंबर, 19, 23 डिसेंबर
PE	09	ताश्कंद समरकंद बुखारा अल्माटी	13 नोव्हेंबर
JB	09	जपान फॉल कलर स्पेशल सागानो सीनिक ट्रेन	13 नोव्हेंबर
JJ	07	बेस्ट ऑफ जपान	27 सप्टेंबर, 12, 15 नोव्हेंबर
EW	10	बेस्ट ऑफ स्कँडिनेव्हिया	28 सप्टेंबर, 6 नोव्हेंबर
P5	08	इसेन्शियल युरोप (एक टूर सहा देश)	23 ऑक्टोबर, 13 नोव्हेंबर, 5 डिसेंबर
EZ	08	युरोप ख्रिसमस मार्केट	१० डिसेंबर
A1	17	ऑस्ट्रेलिया न्यूझीलँड	15 ऑक्टोबर, 12 नोव्हेंबर, 3 डिसेंबर
V1	14	साऊथ आफ्रिका केनिया व्हिक्टोरिया फॉल्स	12 डिसेंबर
D1	07	दुबई अबू धाबी 3 थीम पार्क्स	1, 29 ऑक्टोबर, 4, 8, 12, 14 नोव्हेंबर

T & C Apply

सोमवार ते शनिवार सकाळी 9.30 ते संध्याकाळी 7 | 9930 33 0066 | 1800 266 1100 | KESARI.in

दुनिया के ज्यादातर स्थिर लोकतंत्रों का रुख यही रहता है कि मतदाता सूची को दुरुस्त रखने की जिम्मेदारी नागरिक पर कम और राज्य तंत्र पर ज्यादा डाली जाए, ताकि किसी दस्तावेज की कमी या पते में मामूली गड़बड़ी किसी नागरिक को उसके मौलिक मताधिकार से वंचित न कर दे। भारत की गहन पुनरीक्षण प्रक्रिया इसके ठीक उलट, दस्तावेज आधारित और सिद्ध करने का पूरा बोझ नागरिक पर डालने वाला ढांचा है, जिसे निर्वाचन आयोग सूची की शुद्धता के लिए जरूरी बताता है, जबकि आलोचक इसे लाखों वास्तविक मतदाताओं के लिए एक नई बाधा करार देते हैं। अब तक 30 राज्यों में यह प्रक्रिया पूरी हो चुकी है और 13 करोड़ से ज्यादा मतदाताओं के नाम हटाए जा चुके हैं। इसमें दिल्ली सबसे ज्यादा प्रभावित हुई है। सरोकार की पड़ताल।

लोकालोप

मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण का विवाद प्रक्रिया में अब तक 14 फीसद नाम कटे

देश की सबसे बड़ी लोकतांत्रिक कवायद इस समय सबसे बड़े कानूनी और राजनीतिक विवाद में बदल चुकी है। निर्वाचन आयोग की विशेष गहन संशोधन पुनरीक्षण (एसआइआर) प्रक्रिया के तहत अब तक 30 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में मतदाता सूचियों का नया प्रारूप जारी हो चुका है और इनमें से 13 करोड़ से अधिक नाम मतदाता सूची से बाहर हो चुके हैं, यानी कुल मतदाताओं का करीब 14.1 फीसद हिस्सा। दिल्ली में यह आंकड़ा सबसे ज्यादा चौंकाने वाला है, जहां 32.8 फीसद मतदाताओं के नाम मसविदा सूची से काटे गए हैं और मतदाताओं की संख्या 1.45 करोड़ से घटकर 99.53 लाख रह गई है। महाराष्ट्र में यह गिरावट 21.1 फीसद, तेलंगाना में 21.7 फीसद और अंडमान-निकोबार में 20.6 फीसद रही। झारखंड में भी 43.61 लाख से ज्यादा नाम हटाकर मसविदा सूची प्रकाशित की जा चुकी है।

आखिर शुरू कहां से हुई यह कवायद?

देश में आखिरी बार इस पैमाने का गहन पुनरीक्षण साल 2003 में हुआ था। दो दशक बाद, जून 2025 में निर्वाचन आयोग ने बिहार में एसआइआर की घोषणा की, वह भी विधानसभा चुनावों से ठीक पहले। आयोग का तर्क था कि इससे मृत मतदाता, स्थायी रूप से पलायन कर चुके लोग, दोहरी प्रविष्टियां और अवैध रूप से दर्ज विदेशी नागरिक सूची से हट जाएंगे। लेकिन इस प्रक्रिया ने बिहार में ही 65 लाख से ज्यादा मतदाताओं को सूची से बाहर कर दिया, जिसके खिलाफ एसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म्स (एडीआर), योगेंद्र यादव, कांग्रेस नेता मनोज झा और महुआ मोइत्रा समेत कई याचिकाकर्ता सुप्रीम कोर्ट पहुंचे। करीब 29 दिन की सुनवाई के बाद जनवरी 2026 में फैसला सुरक्षित रखा गया और 27 मई 2026 को सुप्रीम कोर्ट ने अपना फैसला सुनाया, जिसके साथ ही देशभर में एसआइआर की दूसरी लहर को कानूनी वैधता मिल गई। छत्तीसगढ़, गोवा, गुजरात, केरल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल समेत कई राज्यों में यह प्रक्रिया समांतर रूप से शुरू हो चुकी थी।

बंगाल : सबसे बड़ा राजनीतिक और कानूनी अखाड़ा

एसआइआर पर सबसे तीखी लड़ाई इस समय पश्चिम बंगाल में लड़ी जा रही है, जहां अगले साल पंचायत होने हैं। इससे पहले दिसंबर 2026 में नगरपालिका चुनाव प्रस्तावित हैं। राज्य में कुल 27,16,393 मतदाताओं को अपात्र घोषित कर सूची से हटाया गया। इसी को आधार बनाकर तृणमूल कांग्रेस ने सुप्रीम कोर्ट में एक याचिका दायर की, जिसमें 31 विधानसभा सीटों का हवाला देते हुए दोबारा चुनाव कराने की मांग की गई। पार्टी के वरिष्ठ अधिवक्ता कल्याण बनर्जी ने कोर्ट में दलील दी कि इन सीटों पर भाजपा उम्मीदवारों की जीत का अंतर एसआइआर में काटे गए मतदाताओं की संख्या से कहीं कम था। जैसे सीट संख्या 145 पर जीत-हार का अंतर महज 401 वोट था, जबकि वहां 8,785 नाम काटे गए थे। प्रधान न्यायाधीश सूर्यकांत, न्यायमूर्ति जयमाल्य बागची और न्यायमूर्ति वी मोहना की पीठ ने इस दलील पर कड़े सवाल उठाए। पीठ ने साफ किया कि केवल आंकड़ों के अंतर के आधार पर दोबारा चुनाव का आदेश देना सीधा और आसान कानूनी रास्ता नहीं है।

न्यायमूर्ति बागची ने एक अहम कानूनी सिद्धांत रेखांकित किया, अगर किसी मतदाता का नाम कटा है और उसने अपील नहीं की, तो यह मान लिया जाएगा कि उसने फैसला स्वीकार कर लिया है। ऐसी स्थिति में नाम कटने को आधार बनाकर चुनाव परिणाम को चुनौती देना केवल अकादमिक बहस बनकर रह जाएगा। कोर्ट ने एक काल्पनिक कसौटी भी सुझाई : अगर 100 नाम कटे और जीत का अंतर 50 था, तो चुनौती तभी मजबूत मानी जाएगी जब उन 100 में से 60-70 लोगों ने वाकई अपील दाखिल की हो। अदालत ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि वह अपनी समीक्षा सिर्फ इन 31 सीटों तक सीमित नहीं रखेगी, बल्कि राज्यभर के अपीलीय न्यायाधिकरणों के पास लंबित मामलों की जांच करेगी।

यहां कोर्ट की दो अलग-अलग सुनवाइयों का मिश्रण नहीं बनाना चाहिए। अप्रैल 2026 के विधानसभा चुनाव (23 और 29 अप्रैल) से ठीक पहले जब पता चला कि 34.35 लाख से अधिक अपीलें लंबित हैं, तो सवाल था कि क्या इन लंबित अपीलों वाले मतदाताओं को उसी चुनाव में वोट डालने दिया जाए? कोर्ट ने तब अनुच्छेद 142 के तहत विशेष शक्ति का इस्तेमाल करते हुए आदेश दिया कि जिन अपीलों का फैसला 21 या 27 अप्रैल तक हो जाए, सिर्फ उन्हीं मतदाताओं को पूरक सूची में शामिल कर वोट डालने दिया जाए। यानी संदेश साफ था कि सिर्फ अपील लंबित होने भर से किसी को उस चुनाव में वोट का हक नहीं मिलेगा, लेकिन अपील तय होते ही आगे यह हक बहाल हो सकता है। जबकि हालिया सुनवाई का सवाल बिल्कुल अलग था।

पश्चिम बंगाल में 19 अपीलीय न्यायाधिकरण गठित किए गए, लेकिन अगस्त 2026 तक इन न्यायाधिकरणों में दाखिल कुल 38.10 लाख अपीलों में से महज 82,782 का ही निपटारा हो सका था, यानी करीब 97.8 फीसद अपीलें अब भी लंबित हैं।

चुनाव हो चुकने के बाद तृणमूल ने पहले से घोषित नतीजों को ही आंकड़ों के अंतर के आधार पर पलटकर दोबारा चुनाव कराने की मांग की, जिस पर कोर्ट ने संदेह जताया कि यह तय कानूनी रास्ता (चुनाव याचिका दाखिल करना) नहीं है, और पूछा कि इनमें से कितनी सीटों पर औपचारिक चुनाव याचिकाएं भी दाखिल हुई हैं? इस पर वकील को मानना पड़ा कि सिर्फ कुछ सीटों पर ही हुई हैं। यानी पहली सुनवाई में जोर भविष्य में वोट के अधिकार की बहाली पर था, इस बार नहीं तो अगली बार। दूसरी सुनवाई में जोर पहले से हो चुके चुनाव नतीजे को चुनौती देने की सख्त कानूनी शर्तों पर था।

आंकड़ों की भूलभुलैया

सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर निर्वाचन आयोग को न्यायाधिकरणों के सामने लंबित अपीलों का पूरा ब्योरा देना था। दक्षिण मालदा से कांग्रेस सांसद ईशा खान चौधरी को सूचना के अधिकार के तहत मिले 28 पन्नों के जवाब ने आयोग के अपने आंकड़ों में ही कई गंभीर विरोधाभास उजागर किए। आयोग का दावा है कि हटाए गए 27,16,393 मतदाताओं में से केवल 75,443 (2.78 फीसद) को न्यायाधिकरणों ने वापस सूची में शामिल किया। लेकिन पड़ताल में सामने आया कि आयोग एक ही श्रेणी में दो बिल्कुल अलग तरह की अपीलों को मिला रहा है-एक, वे मतदाता जो अपना कटा हुआ नाम वापस चाहते हैं और दूसरे, वे लोग या अधिकारी जो किसी और का नाम सूची से हटवाना चाहते हैं। दोनों को एक ही आंकड़े में जोड़कर पेश करने से यह पता लगाना नामुमकिन हो जाता है कि असल में कितने पीड़ित मतदाताओं को इंसाफ मिला। यह विसंगति सबसे साफ छह निर्वाचन क्षेत्रों में दिखी, जहां बहाल किए गए मतदाताओं की संख्या शुरू में अयोग्य घोषित किए गए मतदाताओं से भी ज्यादा निकली। जैसे पुरुलिया के मानबाजार में 71 नाम अयोग्य घोषित हुए थे, लेकिन 525 को बहाल दिखाया गया, और दक्षिण 24 परगना के सोनारपुर उत्तर में 4,270 के मुकाबले 7,022 नाम बहाल किए गए। यह गणितीय रूप से तभी संभव है जब आंकड़ों में शामिल होने के दूसरे अनुरोध भी घुसा दिए गए हों।

दिल्ली से झारखंड तक फैला विवाद

दिल्ली में जहां सबसे ज्यादा नाम कटे हैं, वहां दावे-आपत्ति की प्रक्रिया 30 सितंबर तक चलनी है। एक सितंबर तक सूची में नाम जोड़ने के लिए 2,18,139 फार्म-6 जमा हो चुके थे, जबकि नाम हटाने के लिए 51,000 से ज्यादा आपत्तियां (फार्म-7) दर्ज की गईं। पश्चिमी दिल्ली से सबसे ज्यादा नाम जोड़ने के अनुरोध आए, जबकि दक्षिण-पूर्वी दिल्ली से सबसे ज्यादा नाम हटाने की आपत्तियां। दिल्ली के 70 विधानसभा क्षेत्रों की मसौदा सूचियों से कुल 47.50 लाख नाम हटाए गए हैं, जिसमें 43 लाख से ज्यादा अनुपस्थित या स्थानांतरित श्रेणी में हैं। अंतिम सूची चार नवंबर को प्रकाशित होगी।

झारखंड के गोड्डा जिले में एक अलग तरह का विवाद सामने आया, जो यह दिखाता है कि प्रक्रिया के दुरुपयोग की आशंका सिर्फ अटकल नहीं है। यहां भाजपा के कुछ बूथ स्तरीय एजंटों (बीएलए-2) पर आरोप लगा कि उन्होंने पहले से भरे हुए, छपे परिपत्र-7 (नाम हटाने के आवेदन) बूथ स्तरीय अधिकारियों के पास जमा कराए, जिनमें दर्ज ज्यादातर मतदाता वर्षों से उसी पते पर रह रहे थे। महेशटिकरी बूथ की अधिकारी अनीसा बानो ने संदेह के आधार पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया और परिपत्र लौटा दिए। प्रारंभिक जांच में 25 में से 24 नाम लंबे समय से क्षेत्र में रह रहे मतदाताओं के निकले। इस मामले में पांच लोगों के खिलाफ एफआइआर का आदेश हुआ है।

न्यायाधिकरणों पर बोझ और अनसुलझे सवाल

पश्चिम बंगाल में 19 अपीलीय न्यायाधिकरण गठित किए गए, लेकिन अगस्त 2026 तक इन न्यायाधिकरणों में दाखिल कुल 38.10 लाख अपीलों में से महज 82,782 का ही निपटारा हो सका था, यानी करीब 97.8 फीसद अपीलें अब भी लंबित हैं। सबसे बड़ा सवाल यही है कि आखिर कितने असली, पात्र मतदाता अब भी सूची से बाहर हैं और कितनों को सिर्फ कागजी उलझन में फंसा दिया गया है। 7,21,036 ऐसे नाम हैं जो अपात्र पाए जाने के बाद अपील ही नहीं कर पाए और स्थायी रूप से सूची से हट गए। सुप्रीम कोर्ट ने आयोग से कहा है कि वह अपील और आपत्ति के आंकड़े अलग-अलग करके पेश करे, लेकिन अब तक यह स्पष्टता सामने नहीं आई है।

आगे की राह

सुप्रीम कोर्ट ने कह दिया है कि एसआइआर की समूची प्रक्रिया और उससे जुड़ी सभी अपीलों का निपटारा साल 2029 के लोकसभा चुनाव से पहले होना चाहिए, लेकिन बंगाल जैसे राज्यों में जिस रफ्तार से न्यायाधिकरण काम कर रहे हैं, जहां अगस्त तक सिर्फ 2.2 फीसद अपीलों का निपटारा हो सका, उसे देखते हुए यह लक्ष्य दूर की कौड़ी लगता है। यह विवाद अंततः एक बुनियादी सवाल पर टिका है-क्या शुद्ध मतदाता सूची के नाम पर अपनाई जा रही प्रक्रिया वाकई फर्जी और मृत मतदाताओं को हटाने तक सीमित है, या इसका खमियाजा उन लाखों वास्तविक, पात्र नागरिकों को भुगतना पड़ रहा है, जिनके पास सही समय पर सही दस्तावेज जुटाने के साधन या जानकारी नहीं थी? सुप्रीम कोर्ट की निगरानी, आंकड़ों की पारदर्शिता की मांग और आने वाले चुनावों का दबाव, तीनों मिलकर तय करेंगे कि भारत का लोकतंत्र इस बड़ी कवायद से मजबूत होकर निकलता है, या इसके दायरे में आए करोड़ों मतदाता हाशिये पर धकेल दिए जाते हैं।

–प्रस्तुति : संजय शर्मा

राज्य या नागरिक, किसकी है जिम्मेदारी?

जनसत्ता सरोकार

भारत की एसआइआर प्रक्रिया में बूथ स्तरीय अधिकारी घर-घर जाकर गणना फार्म बांटते, इकट्ठा और सत्यापित करते हैं। नागरिकों को खुद दस्तावेज जुटाकर अपनी पात्रता साबित करनी पड़ती है। यह तरीका दुनिया के ज्यादातर विकसित लोकतंत्रों से काफी अलग है। दुनियाभर में मतदाता पंजीकरण मोटे तौर पर दो माडल में बंटा है, सक्रिय या स्वैच्छिक पंजीकरण, जिसमें नागरिक को खुद आवेदन करना पड़ता है और निष्क्रिय या स्वतः पंजीकरण, जिसमें राज्य पहले से मौजूद नागरिक रजिस्ट्री से पात्र लोगों को खुद-ब-खुद मतदाता सूची में शामिल कर लेता है।

जर्मनी में मतदाता सूची स्थानीय नागरिक रजिस्ट्री (सिविल रजिस्ट्री) से सीधे तैयार होती है। जैसे ही कोई नागरिक 18 वर्ष का होता है, चुनाव अधिकारी उसका नाम अपने आप सूची में जोड़ देते हैं और चुनाव से पहले उसे एक सूचना कार्ड भेज दिया जाता है। इसी वजह से जर्मनी की पंजीकरण दर करीब 91 फीसद तक पहुंच चुकी है। स्वीडन और डेनमार्क में भी यही तरीका अपनाया जाता है। फ्रांस में 1998 से हर 18 वर्षीय नागरिक को नागरिकता दिवस कार्यक्रम में शामिल होना अनिवार्य होता है, जिसके दौरान जुटाई गई जानकारी सीधे मतदाता सूची से जोड़ दी जाती है। इस व्यवस्था के बाद से लगभग सभी नए मतदाता स्वतः पंजीकृत हो जाते हैं। चिली में साल 2012 से हर नागरिक और पात्र विदेशी निवासी को उसके पहचान-पत्र नंबर के आधार पर 17 साल की उम्र में ही स्वतः सूची में जोड़ दिया जाता है।

कनाडा और आस्ट्रेलिया थोड़ा अलग रास्ता अपनाते हैं। दोनों देशों में कोई एक केंद्रीय नागरिक रजिस्ट्री नहीं है, इसलिए चुनाव प्राधिकरण कर विभाग, वाहन लाइसेंस और अन्य सरकारी डेटाबेस से जानकारी जोड़कर मतदाता सूची को लगातार अद्यतन करते हैं, हालांकि नागरिकों को खुद अपनी जानकारी दुरुस्त रखने के लिए प्रोत्साहित भी किया जाता है। इस मिले-जुले तरीके से आस्ट्रेलिया में पात्र आबादी के 97.6 फीसद हिस्से का पंजीकरण सुनिश्चित हो पाया है, जो 2010 में सीधे पंजीकरण की व्यवस्था लागू होने से पहले महज 90.9 फीसद था।

इसके उलट ब्रिटेन, अमेरिका और फ्रांस में मूल रूप से सक्रिय या 'आप्ट-इन' पंजीकरण प्रणाली रही है, जहां नागरिक को खुद पहल करके आवेदन करना पड़ता है। इसका खमियाजा भी साफ दिखता है। ब्रिटेन में अनुमानित 82 लाख पात्र मतदाता अब भी मतदाता सूची से बाहर हैं, और साल 2015 के आम चुनाव में करीब 12,800 लोगों को इसलिए मतदान केंद्र से लौटा दिया गया, क्योंकि उनका नाम सूची में नहीं था। अमेरिका की स्थिति और चिंताजनक मानी जाती है। ब्रेनन सेंटर फार जस्टिस के एक अध्ययन के मुताबिक कनाडा, फ्रांस, जर्मनी और ब्रिटेन जैसे बड़े लोकतंत्र अपने 90 फीसद से ज्यादा पात्र नागरिकों को पंजीकृत कर पाते हैं, जबकि अमेरिका में हर चुनाव में लाखों पात्र मतदाता पंजीकरण की जटिल प्रक्रिया, समय-सीमा या निवास संबंधी नियमों के कारण वोट देने से वंचित रह जाते हैं। इसी अनुभव को देखते हुए ब्रिटेन में भी अब स्वतः पंजीकरण प्रणाली को आजमाने पर विचार चल रहा है।

लोकतांत्रिक प्रक्रिया से और दूर न हो जाएं लोग

जनसत्ता सरोकार

कोई प्रक्रिया कानूनी है इसका मतलब यह नहीं कि वह इंसाफ भी देती है। पूर्व निर्वाचन आयुक्त अशोक लवासा ने मतदाता सूचियों के जारी विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआइआर) को लाखों नागरिकों पर थोपी जा रही एक अनुचित प्रक्रिया बताया है। लवासा ने कहा कि हालांकि न्यायपालिका ने इस कवायद को वैध ठहराया है और सरकार ने इसे कानूनी करार दिया है, लेकिन सवाल यह है कि क्या यह न्यायसंगत है? बेशक यह कानूनी है लेकिन क्या यह भारत के संदर्भ में उचित है? यही सवाल और लोगों का भी है, क्योंकि न्याय का असल मतलब यही है। आरोप है कि वैधानिक संस्थान, संवैधानिक निकाय और सरकारें अब इस सोच के साथ काम करती दिखाई दे रही हैं कि वे जो कुछ भी करती हैं, वह सिर्फ इसलिए सही है क्योंकि कानून उसकी अनुमति देता है। राज्य की प्रक्रिया ऐसी न दिखे कि वह सिर्फ मजबूत वर्ग का साथ दे रही है। कानून के पालन की जिम्मेदारी जिन संस्थानों पर है, उन्हें उसकी भावना का भी सम्मान करना चाहिए। कई जानकारों व संस्थाओं ने मतदाता सूची से 13 करोड़ नाम हटाने के औचित्य पर सवाल उठाए। क्या यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त कोशिशें हो रही हैं कि इस प्रक्रिया से मतदाता अलग-थलग न पड़ें?

मतदाता सूची के पुनरीक्षण को लेकर बढ़ती चिंता के बीच आशंका जताई जा रही है कि 33 फीसद लोग मतदान नहीं करते और इतने बड़े पैमाने पर किए जा रहे बदलाव लोगों को लोकतांत्रिक प्रक्रिया से और दूर कर सकते हैं। जब निर्वाचन आयोग बिहार में पुनरीक्षण की तैयारी कर रहा था, तब उसके अधिकारियों ने दावा किया था कि जमीनी स्तर पर काम करने वाले कर्मचारियों को बांग्लादेश, नेपाल और म्यांमा के कई नागरिक मिले थे। हालांकि, निर्वाचन आयोग ने ऐसे लोगों की संख्या या कोई प्रमाण साझा नहीं किया जो मतदाता सूची में शामिल होने के योग्य नहीं थे। लेकिन बिहार चुनाव में उन घुसपैठियों का मुद्दा सबसे बड़ा बन गया जिनकी संख्या सरकार के पास थी ही नहीं। आरोप है कि इस मुद्दे ने बिहार में चुनाव को प्रभावित किया।

महज नाम हटाना न बन जाए उत्कृष्टता का पैमाना

जनसत्ता सरोकार

कई विद्वानों ने विशेष गहन संशोधन (एसआइआर) प्रक्रिया पर गंभीर सवाल उठाए हैं। पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एसवाई कुरैशी ने हाल ही में एक आलेख में तंज किया कि पुनरीक्षण से कुछ ही महीनों में वह हासिल हो सकता है जो दशकों की जनसंख्या नीति नहीं कर पाई।

आंकड़ों के मुताबिक पुनरीक्षण से पहले दिल्ली में लगभग 1.45 करोड़ मतदाता थे। अब इसकी मसविदा सूची घटकर लगभग 97.5 लाख रह गई है, लगभग 48 लाख की कमी यानी एक तिहाई। महाराष्ट्र में मतदाताओं की संख्या लगभग 9.78 करोड़ से घटकर 7.71 करोड़ हो गई है, जिससे दो करोड़ से अधिक नाम मसविदा सूची से बाहर हो गए हैं। कर्नाटक में भी मसविदा चरण में ही एक करोड़ से अधिक नाम बाहर कर दिए गए हैं। पुनरीक्षण के तीनों चरणों में पर 13 करोड़ से अधिक नाम बाहर हो चुके हैं।

जानकार कहते हैं कि मतदाता सूचियां पीढ़ी दर पीढ़ी नए सिरे से तैयार नहीं की जातीं। इन्हें लगातार अद्यतन किया जाना चाहिए। इनमें वार्षिक संशोधन, बूथ स्तर के अधिकारी (बीएलओ), राजनीतिक दलों के एजंट और नाम जोड़ने, हटाने और सुधार करने के लिए विस्तृत प्रक्रियाएं शामिल हैं। यदि यह तंत्र ठीक से काम कर रहा था, तो हमें अचानक यह कैसे पता चलता है कि दिल्ली के एक तिहाई मतदाताओं को सूची से बाहर करने की आवश्यकता है, या महाराष्ट्र में दो करोड़ से अधिक नाम एक झटके में गायब करने होंगे?

मतदाता सूची के साफ-सुथरी होने की वकालत सभी करते हैं। मृत मतदाताओं और एक ही पते पर दोबारा दर्ज किए गए नाम हटने ही चाहिए। जो व्यक्ति स्थायी रूप से कहीं और रहने लगा है, उसे पुराने पते पर अनिश्चितकाल तक पंजीकृत नहीं रहना चाहिए। लेकिन कहीं भी अति न हो। मतदाता सूची में बढ़ा-चढ़ाकर नाम डालना अवांछनीय है। दूसरी ओर कृत्रिम रूप से कम किए गए नाम कहीं अधिक खतरनाक हो सकते हैं। इसमें एक व्यापक सिद्धांत निहित है। किसी व्यक्ति का अस्तित्व मात्र इसलिए समाप्त नहीं हो जाता क्योंकि वह अपने घर पर नहीं मिला। न ही नागरिकता इसलिए समाप्त हो जाती है, क्योंकि कोई पुराना दस्तावेज तुरंत नहीं दिया जा सकता। एसआइआर की सफलता को इस आधार पर नहीं मापा जा सकता कि यह कितने नाम हटाता है। बड़ी संख्या में नाम हटाना दक्षता का प्रमाण नहीं है, ठीक उसी तरह जैसे कम संख्या में नाम हटाना विफलता का प्रमाण नहीं है।

पुनरीक्षण को ऐसी किसी भी प्रतियोगिता में नहीं बदलना चाहिए। त्रुटिरहित मतदाता सूची आवश्यक है। लेकिन मतदाता सूचियों से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण लोग हैं। तंत्र में जन के अस्तित्व के अपने मायने हैं। भारत का सामाजिक चरित्र विरोधाभासी है। जहां गैरबराबरी की खाई ज्यादा हो, वहां राज्य को संवेदनशील होना चाहिए।

आंकड़ों की चमक और जमीनी हकीकत

प्रसंगवश

पीएस वोहरा

> अर्थव्यवस्था की सबसे बड़ी परीक्षा यही है कि उसके आंकड़े आम आदमी के जीवन में कितने प्रभावी दिखाई देते हैं। उच्च जीडीपी यह नहीं बताती कि देश की संपत्ति का वितरण सभी लोगों के बीच समान रूप से हुआ है या वह कुछ ही लोगों के पास केंद्रित है। 7.8 फीसद की विकास दर सरकार के लिए एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हो सकती है, लेकिन यह तभी अर्थपूर्ण है, जब इसका असर आम नागरिक की आय, रोजगार, बचत और क्रय शक्ति में दिखाई दे।

देश की अर्थव्यवस्था ने वित्त वर्ष 2026-27 की पहली तिमाही में 7.8 फीसद की वास्तविक विकास दर दर्ज की है। पहली नजर में यह आंकड़ा निश्चित रूप से प्रगतिशील दिखाई देता है। सरकार के लिए यह आर्थिक मजबूती का प्रमाण है और यह बताने का अवसर भी कि कठिन वैश्विक परिस्थितियों के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था अपनी गति बनाए हुए है। मगर किसी भी विकास का वास्तविक मूल्यांकन केवल विकास दर के आधार पर नहीं किया जा सकता। सवाल यह है कि इस विकास की गुणवत्ता क्या है, इसका लाभ किसे मिल रहा है और आम आदमी के जीवन में इसका कितना असर दिखाई दे रहा है। जब तक समाज में अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति तक शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और अन्य बुनियादी सुविधाएं नहीं पहुंचतीं, तब तक विकास को वास्तविक नहीं माना जा सकता। आर्थिक समृद्धि तब तक अधूरी है, जब तक वह लोगों की क्षमताओं में नहीं बदलती। विकास को सिर्फ सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के आंकड़ों तक सीमित नहीं किया जा सकता, क्योंकि आंकड़े केवल आर्थिक उत्पादन को दर्शाते हैं, जबकि वास्तविक विकास का संबंध मानव कल्याण और जीवन की गुणवत्ता से है।

संकट का असर

अहम सवाल यह है कि पिछले वर्ष के आर्थिक आकार में कमी क्यों आई और इसका 7.8 फीसद की वर्तमान विकास दर पर कितना असर पड़ा? वर्ष 2011-12 के पुराने आधार वर्ष में वित्त वर्ष 2025-26 की पहली तिमाही का सकल घरेलू उत्पाद 86.05 लाख करोड़ रुपए था, जो वर्ष 2022-23 के नए आधार वर्ष में घटकर लगभग 80 लाख करोड़ रुपए रह गया। पुरानी और नई शृंखला की सीधी तुलना उचित नहीं है, लेकिन इतने बड़े बदलाव की वजह और वर्तमान विकास दर पर उसके प्रभाव को सरकार की ओर से स्पष्ट करने की जरूरत है। पहली तिमाही अप्रैल से जून तक तीन माह की थी। पश्चिम एशिया का संकट फरवरी के अंत से शुरू हो चुका था, लेकिन घरेलू स्तर पर पेट्रोल और डीजल की कीमतों में वृद्धि मई के मध्य और अंतिम सप्ताह में चार चरणों में हुई। यानी तिमाही का लगभग पहला डेढ़ महीना घरेलू ईंधन मूल्य वृद्धि के पूरे प्रभाव से अपेक्षाकृत सुरक्षित रहा और कीमत वृद्धि का दबाव बाद के हिस्से में आया। क्या यह सरकार की एक रणनीति नहीं थी कि कीमतों में वृद्धि का असर तिमाही के शुरुआती हिस्से पर कम दिखाई दे और उसका व्यापक प्रभाव बाद की अवधि में सामने आए?

देश में 31 अगस्त को जिस दिन 7.8 फीसद की विकास दर सामने आई, उसी दिन सूचकांक 307 अंक यानी 0.40 फीसद और निफ्टी 0.39 फीसद नीचे बंद हुए। इसे केवल सकल घरेलू उत्पाद के आंकड़े की प्रतिक्रिया कहना उचित नहीं होगा, क्योंकि वैश्विक बाजार, तेल और अमेरिकी ब्याज दरों को लेकर भी दबाव था। फिर भी मजबूत विकास दर के बावजूद बाजार में व्यापक उत्साह क्यों नहीं दिखाई दिया, यह प्रश्न बना हुआ है। इसी के साथ रुपए में गिरावट का क्रम भी जारी है और वह लगभग 95 रुपए प्रति डालर के आसपास है। यदि अर्थव्यवस्था तेजी से मजबूत हो रही है, तो हमारी मुद्रा अभी भी तेल की कीमतों, विदेशी पूंजी और अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों के दबाव में क्यों रहती है? स्पष्ट है कि आर्थिक मजबूती केवल उत्पादन बढ़ने का नाम नहीं, बल्कि अपनी मुद्रा और अर्थव्यवस्था को बाहरी झटकों से बचाने की क्षमता भी है।

विकास की असली परीक्षा

आम आदमी के लिए 7.8 फीसद की विकास दर का सबसे सीधा परीक्षण उसकी रसोई और रोजमर्रा के खर्च में होता है। सरकारी कागजों में देश में औसत महंगाई दर 4.45 फीसद हो सकती है, लेकिन एक परिवार का बजट किसी औसत आंकड़े से नहीं चलता। जुलाई में खाद्य महंगाई 5.52 फीसद रही। अदरक, लहसुन और प्याज जैसी रोजमर्रा की वस्तुओं में तेज वृद्धि दर्ज की गई। सितंबर की शुरुआत में मुंबई क्षेत्र में दूध के दाम नौ रुपए प्रति लीटर बढ़े और सीएनजी तथा परिवहन किराए भी बढ़े। जयपुर में दूध के साथ पनीर जैसे दुग्ध उत्पाद भी महंगे हुए। चीनी की कीमत में हाल में कुछ नरमी आई है, लेकिन उपभोक्ता तक राहत पहुंचने में समय लग रहा है। सीएनजी महंगी होने का असर आटो, टैक्सी और माल ढुलाई पर, दूध महंगा होने का असर दही, पनीर और मिठाई पर और ईंधन महंगा होने का असर लगभग हर वस्तु की ढुलाई पर पड़ता है। इसलिए एक परिवार के लिए महंगाई का अर्थ सूचकांक का फीसद नहीं, बल्कि महीने के अंत में बची रकम होती है।

विकास दर के इस आंकड़े का दूसरा बड़ा प्रश्न रोजगार से जुड़ा है। बीती जुलाई में बेरोजगारी दर 5.1 फीसद रही, जबकि श्रमबल भागीदारी दर 55.4 फीसद थी। केवल रोजगार की संख्या पर्याप्त नहीं है। सवाल यह है कि क्या विकास युवाओं के लिए पर्याप्त स्थायी और सम्मानजनक रोजगार पैदा कर रहा है। यदि अर्थव्यवस्था में वृद्धि हो रही है, लेकिन संगठित निजी क्षेत्र में रोजगार की गति कमजोर है और छोटे कारोबार लागत तथा मांग के दबाव में हैं, तो विकास की गुणवत्ता पर सवाल उठना स्वाभाविक है। भारत की बड़ी आबादी आज भी छोटे व्यापार, स्वरोजगार और अनौपचारिक गतिविधियों से जुड़ी है। इसलिए विकास का वास्तविक मूल्यांकन इस बात से भी होना चाहिए कि इन वर्गों की आय और कारोबार में क्या बदलाव आया।

वितरण में असमानता

देश की प्रति व्यक्ति आय अभी भी लगभग 2,700 डालर के आसपास है। दूसरी ओर, आय के वितरण में असमानता का प्रश्न भी गंभीर है। अगर राष्ट्रीय आय का बड़ा हिस्सा ऊपर के सीमित वर्ग के पास जा रहा है, तो ऊंची विकास दर अपने आप व्यापक आर्थिक समृद्धि का प्रमाण नहीं बन जाती। विकास तभी सार्थक है, जब उसकी पहुंच समाज के बड़े हिस्से तक हो और लोगों की क्रय शक्ति बढ़े। जाहिर है, सरकार सकल घरेलू उत्पाद के इस आंकड़े को उपलब्धि के रूप में सामने रखेगी, विपक्ष इसकी कमियों और विश्वसनीयता पर सवाल उठाएगा, अर्थशास्त्री गणना पद्धति पर बहस करेंगे तथा सामाजिक माध्यमों पर इसके पक्ष और विपक्ष में लंबी बहस चलेगी। यह सब लोकतंत्र का हिस्सा है, लेकिन आम आदमी इन बहसों में बहुत देर तक नहीं उलझता। उसके लिए 7.8 फीसद केवल एक आंकड़ा है। असल में वह देखता है कि उसकी आमदनी बढ़ी या नहीं, रोजगार मिला या नहीं, छोटा कारोबार चला या नहीं, घर का खर्च कितना बढ़ा और महीने के अंत में उसकी बचत कितनी रही। अगर उसकी जिंदगी में बदलाव नहीं आया, तो वह इस आंकड़े को अपनी रोजमर्रा की जिंदगी से जोड़कर नहीं देखेगा।

आखिरकार अर्थव्यवस्था की सबसे बड़ी परीक्षा यही है कि उसके आंकड़े आम आदमी के जीवन में कितने प्रभावी दिखाई देते हैं। उच्च जीडीपी यह नहीं बताती कि देश की संपत्ति का वितरण सभी लोगों के बीच समान रूप से हुआ है या वह कुछ ही लोगों के पास केंद्रित है। यह किसी नागरिक के स्वास्थ्य, जीवन प्रत्याशा, शिक्षा के स्तर और व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसे गैर-आर्थिक पहलुओं को भी नहीं दर्शाती है। 7.8 फीसद की विकास दर सरकार के लिए एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हो सकती है, लेकिन यह सही मायने में तभी अर्थपूर्ण है, जब इसका असर देश के आम नागरिक की आय, रोजगार, बचत और क्रय शक्ति में दिखाई दे।

राजनीति का नया रंगमंच

वक्त की नब्ज

तवलीन सिंह

> ऐसा लगने लगा है कि अभी कुछ खास नहीं बदला है। न मोदी बदले हैं, न उनकी मीडिया नीति और न ही उनकी क्षमता युवाओं की बातें सुनने की। बदलाव का सिर्फ नाटक हो रहा है जो साफ दिखता है। मोदी अगर वास्तव में देश के युवाओं के साथ जुड़ना चाहते हैं, तो नाटकीय परिवर्तन से काम नहीं चलने वाला है इसलिए कि ये पढ़े-लिखे बच्चे हैं जो बाहुबलियों से डरने के बदले उनका मजाक उड़ाते हैं।

दिल्ली में इन दिनों खूब चर्चा हो रही है राजनीतिक पंडितों के बीच भारतीय जनता पार्टी की नई रणनीति को लेकर। कहा जा रहा है कि जंतर मंतर पर काकरोच जनता पार्टी के प्रदर्शन के बाद पार्टी के आला नेताओं को एहसास होने लगा है कि अहंकार को त्याग कर उनको विनम्रता लानी होगी अपने तौर-तरीकों में। रणनीति के बदले जाने का पहला उदाहरण तब देखने को मिला, जब प्रधानमंत्री ने अपनी बातें कहनी शुरू की इंस्टाग्राम पर अपनी सेल्फी रीलें डाल कर। पिछले सप्ताह वाली रील में मोदी दिखे यह कहते हुए कि आर्थिक वृद्धि अब 7.8 फीसद पर है और इस बात से पूरा देश खुशी से झूम रहा है।

उन्होंने इस बात का श्रेय खुद नहीं लिया, जैसे अक्सर लेते हैं, तो लोगों को इसमें विनम्रता के आसार दिखे। प्रधानमंत्री की समस्या यह है कि उन्होंने पूरे एक दशक से अपने आपको एक ऐसे राजनेता के रूप में पेश किया है जिसको अंग्रेजी में 'स्ट्रांगमैन' कहते हैं और हिंदी में 'बाहुबली'। इस छवि को कायम रखने के लिए भारतीय जनता पार्टी ने सोशल मीडिया पर अपनी ट्रोल सेना का इस्तेमाल किया है अभी तक। अब लगता है कि इन कागजी योद्धाओं को पीछे हटा कर प्रधानमंत्री और उनके मंत्री खुद सामने रहेंगे। इस नई रणनीति के तहत इंस्टाग्राम पर मोदी दिखे हैं कई बार रीलों के जरिए आम लोगों से बातें करते हुए। इंस्टाग्राम को चुना गया है, क्योंकि माना जाता है कि जेन-जी के लिए यही सबसे बड़ा मीडिया है।

इंस्टाग्राम पर दिख तो रहे हैं प्रधानमंत्री और अपनी रीलों में थोड़े विनम्र तरीके से पेश आने की कोशिश भी कर रहे हैं, लेकिन सवाल यह है कि क्या इतना काफी है देश की इस नई पीढ़ी के क्रांतिकारी युवाओं के दिलों को छूने के लिए? इस सवाल का जवाब है कि अभी तक ऐसा होता नहीं दिख रहा है। मोदी की हर रील को तोड़-मरोड़ कर उनका मजाक बनाया जा रहा है। जैसे जंतर-मंतर पर किया गया था और जिनमें मोदी की अंग्रेजी और उनकी विदेशी यात्राओं का खूब मजाक उड़ाया गया था। कहने का मतलब है मेरा कि देश के युवाओं पर अभी तक इंकलाब का असर इस कदर है कि वे प्रधानमंत्री की बातें सुनने को तैयार नहीं हैं। ऊपर से ये ऐसे हैं कि किसी से नहीं डरते हैं। जो डरते थे, उनका भी डर दूर हो गया जंतर मंतर के बाद।

हर क्रांति में कोई मुद्दा या कोई व्यक्ति केंद्रित होता है और इस क्रांति में लगता है मुद्दे तो हैं ही, लेकिन साथ में निशाने पर रहे हैं मोदी खुद। जब उनकी मीडिया टीम ने इसको देखा, तो पहली सलाह शायद उनकी थी प्रधानमंत्री को कि अपनी बाहुबली वाली छवि न बदलें, इसलिए इंस्टाग्राम पर अपनी पहली रील में उन्होंने कहा था कि वे उन बच्चियों को माफ करते हैं, जिन्होंने उनको और उनकी दिवंगत माताजी को गालियां दी थीं। इस रील के फौरन बाद आवाजें उठने लगीं कि माफी तो मोदी को मांगनी चाहिए उन विद्यार्थियों से जिन पर पैलेट गन चलाई गई थी।

इसके बाद मोदी ने अपना अंदाज बदला और भारतीय जनता पार्टी ने अपनी टीम बदली। नई टीम में स्मृति ईरानी और राम माधव हैं जो हैं तो पचास से ऊपर, लेकिन कम से कम पार्टी के आला नेताओं से उनकी उम्र काफी कम है। सवाल यह है कि नई टीम क्या अपनी बातों में बदलाव ला पाएगी या नहीं! फिलहाल ऐसा नहीं दिख रहा है। नई टीम वही कर रही है जो पुरानी टीम ने किया था। यानी मोदी की खूब चापलूसी करने के बाद ही किसी मुद्दे के बारे में कुछ कहना।

इसलिए ऐसा लगने लगा है कि अभी कुछ खास नहीं बदला है। न मोदी बदले हैं, न उनकी मीडिया नीति और न ही उनकी क्षमता युवाओं की बातें सुनने की। बदलाव का सिर्फ नाटक हो रहा है जो साफ दिखता है। मोदी अगर वास्तव में देश के युवाओं के साथ जुड़ना चाहते हैं, तो नाटकीय परिवर्तन से काम नहीं चलने वाला है इसलिए कि ये पढ़े-लिखे बच्चे हैं जो बाहुबलियों से डरने के बदले उनका मजाक उड़ाते हैं। कुछ राजनेता इस बात को समझ गए हैं और मानते हैं कि हम जो देख रहे हैं वह पूरी तरह एक क्रांति है, जो देश की राजनीति को बदल कर रखेगी। यहां याद रखना चाहिए कि अगले लोकसभा चुनाव में युवाओं का वोट सबसे ज्यादा असरदार होने वाला है।

इस नई पीढ़ी तक पहुंचने के लिए टीम बदलने से काम नहीं चलेगा। इन तक पहुंचने के लिए विनम्रता के साथ ईमानदारी भी बहुत जरूरी है, इसलिए जब प्रधानमंत्री 7.8 फीसद आर्थिक वृद्धि पर कहते हैं कि देश के लोग खुशी से झूम रहे हैं, तो याद आती है उस 'इंडिया शाइनिंग' वाले चुनाव की, जिसने 2004 में अटल बिहारी वाजपेयी को सत्ता से हटा कर कांग्रेस को मौका दिया था। उस समय दिल्ली के सारे राजनीतिक पंडित मान ही नहीं सकते थे कि अटल बिहारी वाजपेई को सोनिया गांधी हरा सकेंगी। इनमें मैं भी थी और मुंह की खानी पड़ी थी हम सबको। इसके बाद मैंने किसी भी चुनाव में भविष्यवाणी करना छोड़ दिया, लेकिन अब इतना कहना चाहती हूं कि देश की राजनीति इतनी बदल चुकी है जंतर मंतर के बाद कि पुराने तरीके और पुराने विचारों से काम नहीं चलने वाला है।

हिंदी फिल्मों की भाषा में इस बात को कहा जाए, तो कहना इस तरह होगा- नए लोग हैं, नहीं पीढ़ी और नया दौर। इस नए दौर में उभर कर आ रहे हैं नए किस्म के राजनेता, जिनकी छाया अभी तक हमने नहीं देखी है राष्ट्रीय राजनीतिक रंगमंच पर। इनको समझना जरूरी है।

शिक्षा की सार्थकता

संदर्भ

राकेश सिन्हा

> प्राचीन भारत जीवन दर्शन का महासागर है। इसमें विचारों की विपुलता और भिन्नता दोनों हैं। इसका इतिहास तो रुचिकर है, मगर शिक्षा के आधुनिक स्वरूप ने हमारी रुचि को समाप्त कर दिया है। वैसे शिक्षक दो प्रकार के होते हैं- पहला वर्ग व्यावसायिक शिक्षकों का है, जो व्यावसायिक सफलता की राह दिखाते हैं। दूसरे वर्ग वाले अपनी साधना, ज्ञान और चेतना से स्वयं एक सनातन संस्था बन जाते हैं। ऐसे सनातन शिक्षक जीवन काल के बाद भी राह दिखाते रहते हैं।

भारत की बौद्धिकता में नैमिषारण्य का क्या महत्व है? इसका उत्तर कम से कम उनके पास तो नहीं होगा, जो पाठ्यक्रमों के रास्ते शिक्षित या विद्वान बने हैं। साधु-संतों और कुछ सामाजिक-सांस्कृतिक गतिविधियों में संलग्न लोग जरूर इसका महत्त्व समझा देंगे। यहां बारह वर्षों तक बौद्धिक मंथन हुआ था, जिसमें अठासी हजार विद्वान एकत्रित हुए थे। सभ्यता के इतिहास में यह एक विशिष्ट, मगर अपवादस्वरूप घटना है। तब वहां के कुलपति ऋषि शौनक थे। यहां भारतीय दर्शन और जीवन मूल्यों के लगभग सभी महत्त्वपूर्ण पक्षों पर सत्संग, शास्त्रार्थ और विवेचना हुई। इसके बारे में अनभिज्ञता का कारण क्या है? बौद्धिक इतिहास को आधुनिकता का प्रतिकूल समझने की हीन ग्रंथि हमारे मन-मस्तिष्क में डाल दी गई है।

प्राचीन भारत जीवन दर्शन का महासागर है। इसमें विचारों की विपुलता और भिन्नता दोनों हैं। वशिष्ठ, भारद्वाज, वेदव्यास, शौनक, शुक्राचार्य, बृहस्पति, धौम्य, कपिल, वामदेव और शंकराचार्य जैसे कुछ नाम हैं, जिनके ज्ञान, चेतना और साधना में विविधता थी और उसकी थाह पाना भी किसी के लिए दुष्कर है। कपिल का सांख्य दर्शन, वामदेव का नाट्यशास्त्र या शंकराचार्य का अद्वैतवाद, इन सभी का उपयोग पश्चिम ने अपनी बौद्धिकता को संबल देने के लिए किया है। इन दर्शनों का प्रत्येक नाम एक विशिष्ट ज्ञान की धारा की उपज है। इसका इतिहास तो रुचिकर है, मगर शिक्षा के आधुनिक स्वरूप ने हमारी रुचि को समाप्त कर दिया है। ये सभी शिक्षक थे। वैसे शिक्षक दो प्रकार के होते हैं- पहला वर्ग व्यावसायिक शिक्षकों का है। वे व्यावसायिक सफलता की राह दिखाते हैं। दूसरा वर्ग ऐसा है, जो अपनी साधना, ज्ञान और चेतना से स्वयं एक सनातन संस्था बन जाते हैं। ऐसे सनातन शिक्षक जीवन काल के बाद भी राह दिखाते रहते हैं। इसी वर्ग की खोज, उन्हें प्रोत्साहन देना और उनके महत्त्व को समझना शिक्षा नीति के निर्माताओं के लिए आवश्यक है।

सर्वपल्ली राधाकृष्णन के जन्मदिन पर पांच सितंबर को प्रत्येक वर्ष शिक्षक दिवस मनाया जाता है। मगर यह दिन उनके राष्ट्रपति होने के कारण महत्त्व का नहीं बना। उनके शिक्षक होने की गुणवत्ता ही इसका कारण है। वे मैसूर विश्वविद्यालय के महाराजा कालेज में दर्शन शास्त्र के शिक्षक थे। उनका ज्ञान और साधना विद्यार्थियों को स्वस्थ मन, व्यापक दृष्टि और अर्ध-संत स्वभाव बनाने की जीवंत राह है। उनकी नियुक्ति जब कलकत्ता विश्वविद्यालय में हुई और उन्होंने विदाई लेने से इनकार कर दिया, तब उन्हें घोड़ा गाड़ी से रेलवे स्टेशन ले जाना तय हुआ। मगर विद्यार्थियों ने घोड़ा हटा दिया और वे स्वयं बग्गी खींचते हुए उन्हें स्टेशन ले गए। स्टेशन फूलों से सजा था, हजारों लोग नम आंखों से उन्हें विदाई दे रहे थे। यही गुरुकुल भाव है, जो राधाकृष्णन ने पैदा किया। इसी ने एक सामान्य शिक्षक की उपाधि को गणतंत्र के सर्वोच्च पद की तुलना में छोटा नहीं पड़ने दिया। इसी भावना ने चाणक्य को सार्वजनिक जीवन में रहने वालों के लिए एक नैतिक मानदंड बना दिया। 'अमात्य' (मंत्री) के रूप में वे 'राजा' (चंद्रगुप्त) के सामने लघुता के उदाहरण नहीं बने।

शिक्षा सरकारी हो या निजी, यह बहस का विषय रही है। मगर शिक्षा की सार्थकता नीयत पर निर्भर है। विश्वभारती (शांतिनिकेतन) तो सरकारी नहीं था, लेकिन उसका योगदान अविस्मरणीय है। मगर पहले की तुलना में आज यह पासंग भी नहीं है। बड़ौदा में गंगानाथ विद्यालय तो सरकारी था। इसके प्राचार्य सार्जेंट राव देशपांडे थे। उन्होंने शिक्षण संस्था को परिवार के रूप में ढालने का काम किया। प्रत्येक शिक्षक का स्वभाव, संगत और समझ के अनुसार नया नामकरण सहजता से किया गया। कालेलकर 'काका साहेब', तो फडके 'मामा' हरिहर शर्मा 'अन्ना' के नाम से विख्यात हुए। उस संस्था से हटने के बाद भी यह भावनात्मक संबंध जारी रहा और वे मामा, काका, अन्ना बने रहे। शिक्षा सार्थकता पैदा करती है, तभी समाज दो कदम आगे बढ़ता है। व्यावसायिक सफलता समाज की मानसिक उन्नति को सुनिश्चित नहीं करती है। आज उच्च शिक्षा प्राप्त लोग विश्वविद्यालय परिसर में अपनी जातियों, समुदाय एवं क्षेत्र में अपनी अस्मिता तलाशते हैं। ऐसे लोगों के लिए यह उदाहरण एक आईना होगा।

आचार्य जेबी कृपलानी सिंधी थे और बिहार के लंगट सिंह कालेज में सफल प्राध्यापक रहे। अंग्रेजों ने उन पर जुल्म किए। वे शांतिनिकेतन गए, फिर गुजरात विद्यापीठ के एक महाविद्यालय के प्राचार्य बने। काका कालेलकर जन्म से मराठी थे, पर गुजराती साहित्य सभा के अध्यक्ष भी रहे। दरअसल, भवनों, सुविधाओं और विलासी वातावरण की शिक्षा से समाजपरक, समानतामूलक और संवेदनशीलता नहीं आती है। सभ्यताएं भवनों या विलासी सुविधाओं में प्राप्त शिक्षा से नहीं बनी हैं और न ही बनेंगी। उसी के प्रायः सभी शिकार हैं। जो समाज अपने मूल्यों को लेकर चिंतित नहीं रहता, उसका खोखलापन बढ़ता जाता है।

यह सत्य है कि हमारा भूतकाल चाहे वह कितना भी स्वर्णिम रहा हो, उसमें वापस नहीं लौट सकते हैं और न ही विश्व के विज्ञान, तकनीक और धन केंद्रित वस्तुनिष्ठ परिस्थितियों को एकाएक बदल सकते हैं। मगर तीन पहलुओं से वर्तमान शिक्षा की सार्थकता के सूचकांक को समझा जा सकता है। पहला यह कि मानवीय संबंधों और सामुदायिक जीवन को यह कितना प्रगाढ़ कर पा रही है? दूसरा, नव उदारवाद द्वारा विषमता को स्वाभाविक मानने की थोपी जा रही प्रवृत्ति के प्रतिकूल यह समानतामूलक स्वभाव को कितना विकसित कर पा रही है? तीसरा, यह सामाजिक संघर्षों के समाधान की कितनी शक्ति उपार्जित कर पा रही है? यह सब न्यूयार्क, पेरिस, लंदन या मेलबर्न जाकर शिक्षा को समझने से संभव नहीं होगा। यह तो नवद्वीप, नालंदा, नैमिषारण्य और नेतरहाट को वर्तमान संदर्भ में पुनर्जीवित करके ही संभव है। इसका आधार और परिणाम दोनों ही आलोचनात्मक चिंतन है। वही हमारी सभ्यता की मौलिकता अर्जित करने का एकमात्र रास्ता हो सकता है।

आभासी सियासत

बाखबर

सुधीश पचौरी

> भाजपा के बरक्स विपक्षी दलों के बीच जारी नए 'रील व मीम' के संग्राम पर एक चर्चा आई। फिर सबने अपने पक्ष के रील, मीम, वीडियो आदि दिखाए और मालूम हुआ कि आजकल कोई कम नहीं... सब एक दूसरे की हंसी उड़ाने में माहिर हैं। फिर भी सभी के चेहरों पर गुस्सा दिखता है।

सर जी कहते रहे कि हल्द्वानी के रामलीला मैदान में शुद्धिकरण यज्ञ करने वालों पर 'एफआइआर' हो, 'एफआइआर' हो, एक बड़े दलित नेता का अपमान किया गया है..। ऐसी बातें सुनते बीस दिन गुजर गए लेकिन 'एफआइआर' न हुई। उल्टे सर जी पर ही 'एफआइआर' हो गई। आरोप लगे कि ये सत्ता दल की साजिश है। सत्ता बोली कि हमारा उनसे कोई लेना-देना नहीं..।

फिर एक दिन वर्गभेद और जाति भेद की सैद्धांतिकी एक-दूसरे में गड्डमड्ड होती हुई 'दो हिंदुस्तान' खोजती नजर आई। चाय की हर दुकान पर दो तरह के कप होते हैं। एक कांच के गिलास, दूसरे पेपर कप या प्लास्टिक कप। एक चैनल ने तुरंत वह फोटो दिखाया जिसमें 'टू कप' सैद्धांतिकी खोजते सरजी 'सिरेमिक कप' में चाय पीते दिख रहे थे और दूसरे 'पेपर कप' में पी रहे थे।

'दो तरह के कपों' की मौलिक खोज शाम तक पुरानी हो गई। कई चर्चक कहते रहे कि हम सब पेपर कप में चाय पीते हैं। 'पेपर कप' सस्ता होता है। 'इस्तेमाल करो और फेंको' वाला होता है। कांच का महंगा होता है। बार-बार धोने के लिए पानी नहीं होता।

फिर एक ने कह दिया कि भेदभाव के सारे सवाल हिंदू धर्म से ही क्यों होते हैं, दूसरों से क्यों नहीं होते। क्या जाति सिर्फ हिंदुओं में है या कहीं और भी है..! ऐसे मार्मिक सवालों के बाद बहसें अक्सर 'गोलपोस्ट' बदलने लगती हैं।

फिर कुछ बहसें भारत की नई बढ़ी हुई जीडीपी के नाम रहीं। जैसे ही सरकार ने खबर दी कि पिछली तिहाई की जीडीपी 7.8 फीसद रही, वैसे ही विपक्षी कूद पड़े। एक कहिन कि इनको तो अर्थशास्त्र की कोई समझ ही नहीं है? एक विपक्षी विशेषज्ञ कहिन कि असल जीडीपी कुल 2.7 फीसद हो सकती है। 7.8 फीसद तो संभव ही नहीं। जब उनको सत्तापक्ष के एक अर्थशास्त्री ने आंकड़ों के साथ समझाया कि सिर्फ हो ही नहीं सकती, बल्कि 'है भी', तो कहने लगे कि हो सकता है जीडीपी चार या पांच फीसद हो। विशेषज्ञ पूरे समय हंसते ही दिखे।

फिर एक दिन एक चैनल में विपक्षी नेता जी 'मनुस्मृति' जलाते दिखे। इसके बाद 'मनुस्मृति' दो दिन तक बहसों में जिंदा रही। इस बीच राममंदिर के प्रबंधन व चंदा चढ़ावे आदि की देखरेख के लिए एक पूर्व एअर मार्शल जितेंद्र मिश्र को 'सीईओ' नियुक्त किया गया, तो एक विपक्षी नेता ने तंज किया कि 'आपरेशन सिंदूर' की असलियत छिपाने के लिए नियुक्ति की गई है। जब सत्ता ने बयान को 'देशविरोधी' कहा तो उनके दल ने उनसे किनाराकशी कर ली।

फिर एक दिन एक अभिनेत्री ने 'जौहर' पर सवाल उठा दिया... कि मैं बलात्कार से बचने के लिए मरने वाली नहीं... यानी बलात्कार से बचने के लिए जौहर नहीं करने वाली..! इसके बाद काफी विवाद हुआ। एक एंकर ने कहा कि क्या करें, बेरोजगार हैं।

अथ 'जन्माष्टमी' और योगी जी मथुरा में दो दिवसीय प्रवास पर। मथुरा को हजारों करोड़ की विकास योजनाओं की सौगात का एलान। फिर बांके बिहारी मंदिर में पूजा अनुष्ठान। फिर योगी जी द्वारा 2027 के चुनाव में अपनी बहुमत की सरकार बनाने की घोषणा।

फिर इधर अखिलेश जी और काकरोच जनता पार्टी के एक नेता के मिलने की खबर और उधर काकरोच जनता पार्टी का दिल्ली में निशू को न्याय दिलाने के लिए थाने के पास धरने का और सभी काकरोचों को पहुंचने का आह्वान। उधर एक चैनल की खबर रही कि काकरोच जनता पार्टी में दो फाड़।

काकरोच पार्टी के एक सदस्य मनीष ब्रह्मभट्ट ने अपने को अभिजीत दिपके की काकरोच जनता पार्टी से अलग कर 'काकरोच जनता पार्टी-(डेमोक्रेटिक) बनाने का एलान किया और आरोप लगाए कि दिपके ने मनमाने तरीके से आठ लोगों की टीम बना ली है, जिसमें उन जैसे पार्टी की स्थापना करने वाले सदस्यों से पूछा तक नहीं गया।

इसी बीच कुछ चैनल 'दिमागी नक्सल' की व्याख्या करने में व्यस्त रहे। कुछ बताते रहे कि 'दिमागी नक्सल' ये, 'दिमागी नक्सल' वो... कि दिमागी नक्सल लाल काकरोच जैसे हैं... कि जेन-जी जैसे!

इसके बाद भाजपा के बरक्स विपक्षी दलों के बीच जारी नए 'रील व मीम' के संग्राम पर एक चर्चा आई। फिर सबने अपने पक्ष के रील, मीम, वीडियो आदि दिखाए और मालूम हुआ कि आजकल कोई कम नहीं... सब एक-दूसरे की हंसी उड़ाने में माहिर हैं। फिर भी सभी के चेहरों पर गुस्सा दिखता है।

इससे स्पष्ट होता है कि जो राजनीतिक वैचारिक हिसाब-किताब सड़क या चुनाव से तय नहीं हो पाते, उनको आजकल 'इंस्टाग्राम' और उस पर आते 'पांच से पंद्रह सेकंड के 'मजाहिया' रीलें, मीम, वीडियो, पोस्टर आदि तय करते हैं।

इंडियन एक्सप्रेस समूह
जनसत्ता सरोकार
साहित्य
तीन
जनसत्ता | 6 सितंबर, 2026

खुशियों का असली मोल

कहानी

तनुजा चौबे

ढोलक की थाप, आम की मिठास भरी खुशबू और रंगीन झालरों से सजा आंगन आने वाली खुशियों का संदेश दे रहा था। कहीं हल्दी पीसी जा रही थी, कहीं रसोई से पकवानों की महक आ रही थी और कहीं बच्चों की हंसी पूरे घर में गूंज रही थी। सविता मुख्य द्वार पर तोरण ठीक कर रही थी कि तभी एक गाड़ी आकर रुकी। जेठ-जेठानी और उनके बच्चे उतरे तो सविता मुस्कराते हुए उनके पैरों पर झुक गई। भैया ने आशीर्वाद देते हुए कहा, 'अरे, सविता की मुस्कान देखो, कहीं नजर न लग जाए!' सब हंस पड़े।

सविता और शिवानी एक ही दिन इस घर में ब्याहकर आई थीं। बड़ा भाई मंगेश और शिवानी कालेज के साथी थे। दोनों ने अपने समान विचारों के कारण जीवन भर एक-दूसरे के साथ चलने का निर्णय लिया था। छोटे भाई दिनेश की शादी सविता से हुई थी। सविता गांव की शांत और व्यावहारिक लड़की थी। घर की जिम्मेदारियां उसने सहजता से संभाल ली थीं। शिवानी का व्यक्तित्व अलग रंगों से भरा था। वह बुरी नहीं थी, बस तेज रफ्तार वाली जीवनशैली के कारण दृष्टि कुछ बदल गई थी। कभी-कभी उसके आधुनिक तंज सविता को चुभ जाते, पर सविता उन्हें मन में जगह नहीं देती। फिर भी दोनों एक-दूसरे की खूबियों को मन ही मन स्वीकार करती थीं। शिवानी को आश्चर्य होता कि सविता साधारण सी चीजों में भी संतुष्ट कैसे रह लेती है। वहीं सविता को शिवानी की आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास अच्छा लगता था। फर्क बस इतना था कि शिवानी जहां आगे बढ़ने को जीवन का अर्थ मानती थी, वहीं सविता रिश्तों को साथ लेकर चलने में अपनी खुशी खोजती थी।

मंगेश-शिवानी अपनी ऊंची महत्त्वाकांक्षाओं को साकार करने के लिए विदेश चले गए। वहां की खुली सोच और स्वतंत्रता में पले-बढ़े। सुविधाओं की वहां कोई कमी नहीं थी, पर जैसे-जैसे बच्चे बड़े हुए और मंगेश की व्यस्तता बढ़ती गई, शिवानी के भीतर एक अजीब-सा खालीपन उतरने लगा।

त्योहार मनाने का तरीका बस यहां इतना ही था कि कई भारतीय परिवार एकत्रित होकर, ठीक वैसे ही भोजन कर लेते जैसे विदेशों में अक्सर त्योहारों पर किया जाता है। सोशल मीडिया पर भारत में चल रही पूजा या उत्सव में होने वाली रौनक, हंसी-खुशी का वातावरण देखकर उसका मन उदास हो जाता था। पाश्चात्य संस्कृति में रहते हुए मंगेश भी बहुत बदल गया था।

एक बार पूजा की तैयारी के बीच शिवानी ने अपनी विदेशी जीवनशैली से तुलना करते हुए मुस्कुराकर कहा, 'सविता, इन सब रस्मों में इतना समय क्यों खराब करती हो? आजकल सब कुछ साधारण रखते हैं।' सविता सहज स्वर में बोली थी, 'समय तो लगता है, शिवानी, लेकिन यही समय बच्चों को भी तो बताता है कि वे कहां से आए हैं। हम जो कुछ अपने बड़ों से सीखकर लाए हैं, उसका थोड़ा-सा हिस्सा आगे दे दें, तो परंपरा अपने आप चलती रहती है। बच्चों को जो सिखाया जाता है, वही वे आगे लेकर जाते हैं।' शिवानी मुस्कुरा दी।

> **शादी में सविता और दिनेश एक-दूसरे का साथ देते हुए हर काम में जुटे थे। उनके बेटे ने स्वयं एक इंजीनियर लड़की चुनी थी। हल्दी की रस्म में सविता का उत्साह चरम पर था।**

उस रात उसे अपने बच्चों का बचपन याद आया। पढ़ाई, प्रतियोगिताओं, करियर और आगे बढ़ने की दौड़ में उसने हमेशा उन्हें आत्मनिर्भर बनना और अपने निर्णय स्वयं लेना सिखाया था। क्या उसने कभी उन्हें ठहरकर पीछे मुड़कर देखना भी सिखाया था? इस प्रश्न का उत्तर वह स्वयं भी नहीं जानती थी।

शादी में सविता और दिनेश एक-दूसरे का साथ देते हुए हर काम में जुटे थे। उनके बेटे ने स्वयं एक इंजीनियर लड़की चुनी थी। हल्दी की रस्म में सविता का उत्साह चरम पर था। सभी एक-दूसरे को हंसते-हंसते हल्दी लगा रहे थे। तभी किसी ने चुटकी ली, 'अरे, सविता! थोड़ी हल्दी शिवानी के बेटे को भी लगा दो, जल्दी शादी हो जाएगी!' सविता बच्चों के स्वभाव से परिचित थी, इसलिए वह बात को नजरअंदाज कर आगे बढ़ने लगी। तभी शिवानी ने मुस्कुराकर थाली से हल्दी उठाई और बेटे की नाक पर हल्का-सा टीका लगा दिया। बेटा थोड़ा पीछे हट गया, 'माम, प्लीज, ज्यादा मत लगाना। मुझे स्किन एलर्जी हो जाती है और कपड़ों पर भी दाग लग जाएगा।' उसके स्वर में आग्रह था। वह थोड़ा असहज हो गया और हल्के से मुस्कुराकर अपने दोस्तों के पास चला गया। शिवानी उसे जाते हुए देखती रही। सविता के बेटे से उम्र में बड़ा होने पर भी विवाह के संस्कार और उसके भावनात्मक अर्थों से वह उतना जुड़ नहीं पाया था। उसके लिए विवाह शायद जीवनभर के रिश्ते से अधिक दो व्यक्तियों के बीच एक समझौते जैसा था।

उसे अनायास ही सविता का जीवन याद आ गया। गांव में रहते हुए, सीमित सुविधाओं और अधिक पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच भी सविता ने अपने बच्चों को ऐसे संस्कार दिए थे कि वे आधुनिक जीवन के साथ-साथ रिश्तों की गरिमा और परिवार की अहमियत भी समझते थे। वहीं वह विदेश में सुविधासंपन्न और अपेक्षाकृत स्वतंत्र जीवन जीते हुए भी अपने बच्चों को उन संस्कारों और अपनी जड़ों से उतना जोड़ नहीं पाई थी। शायद खुशियां केवल सुविधाओं और स्वतंत्रता से नहीं, बल्कि अपनेपन, रिश्तों और संस्कारों से भी समृद्ध होती हैं। उसे लगा कि सविता के बेटे की शादी में केवल रस्में नहीं निभाई जा रही थीं। हर रस्म के साथ परिवार के लोग जुड़ रहे थे, बड़ों का आशीर्वाद था और छोटे-बड़े मिलकर जिम्मेदारियां संभाल रहे थे। शायद विवाह का यही भाव नई पीढ़ी तक पहुंचना भी जरूरी था।

थोड़ी देर बाद सविता का बेटा अपने दोस्तों से अलग होकर दादी के पास बैठ गया। 'दादी, दवा समय पर ली थी न?' बूढ़ी आंखों में चमक आ गई। शिवानी ने वह दृश्य चुपचाप देखा। उसे लगा कि यही छोटी-छोटी बातें घर को घर बनाती हैं। थोड़ी देर बाद सविता का बेटा थाली उठाकर बुजुर्गों को जलपान बांट रहा था। दूर से किसी ने कहा, 'देखो सविता का लड़का कितना सलीकेदार है! अपनी पत्नी को बहुत खुश रखेगा।' शिवानी ने सिर झुका लिया। यह ईर्ष्या नहीं थी। यह स्वीकारोक्ति थी। अगली सुबह उसकी नींद ढोलक की हल्की थाप से खुली। शादी वाले घर में सुबह-सुबह मंगल गीत गाए जाते हैं। वह उठी, स्नान आदि से निवृत्त हुई और तैयार होकर बाहर आई। आंगन में पूजा की तैयारियां चल रही थीं। सविता फूलों और पूजा की सामग्री को सहेज रही थी। शिवानी ने बिना किसी के कहे उसके पास जाकर हाथ बंटाना शुरू कर दिया। उसने फूल धोए, दीपक सजाए और पूजा की थाली को व्यवस्थित करने लगी। किसी ने हंसकर कहा, 'अरे, आज तो शिवानी भी देसी हो गई!'

शिवानी ने सविता से कहा, 'शायद तुम्हारा जीवन को देखने का नजरिया बिल्कुल सही है। इंसान जहां भी जाए, उसे अपनी भाषा, रिश्तों की गर्माहट और अपनी संस्कृति के कुछ रंग अपने साथ जरूर ले जाने चाहिए। आगे बढ़ना जरूरी है, लेकिन अपनी जड़ों से जुड़े रहना भी उतना ही जरूरी है।'

शायद यही था, खुशियों का असली मोल।

समय सूचक

लोक की 'दुविधा' सुलझाते बिज्जी

जनसत्ता सरोकार

कोई मानुस जंगल में पड़े वनमानुस की तरह के बच्चे को आधुनिक आदम बना दे तो? विजयदान देथा के 'उलझन' की बंजारन ऐसा ही करती है। विजयदान देथा जिन्हें लोग प्यार से बिज्जी कहते हैं, ऐसे साहित्यकार हुए जो लोक-संस्कृति को किसी इतिहासकार की तरह देख रहे थे।

देथा का जन्म एक सितंबर 1926 को राजस्थान के जोधपुर के पास बोरुदा गांव में हुआ था। उन्होंने लोक की स्मृतियों का वर्तमान के साथ जीवंत रिश्ता बनाने का मार्ग चुना। राजस्थान के लोक के बीच में से सदियों की स्मृतियां, सत्ता के किस्से, जाति की दीवारें और सारी वर्जनाओं को लांघ जाने की इंसानी बेचैनी को खोज निकाला। पुरानी गठरी सी, जंग खाई संदूकची जैसी इन कहानियों को समकालीन चेतना की प्रयोगशाला से निकाल कर साहित्य प्रेमियों को चमत्कृत कर दिया। वे लोक की मिट्टी में आधुनिक मनुष्य की तलाश कर रहे थे। स्मृतियों में भुलाए गए लोगों को ऐसे खड़ा कर देते थे कि वह कोई ऐसा भुतहा किरदार दिखता, जिसका कोई काम बचा रह गया हो, जिसे पूरा करने के लिए उसे आना पड़ा। चौदह खंडों में उनकी 'बातां री फुलवाड़ी' शृंखला छपी। बिज्जी का संसार राजस्थान के भूगोल को पार कर जाता है। उनकी कहानी 'दुविधा' में बंदिशों से जकड़े प्रेम, पितृसत्ता से जकड़ी स्त्री, सामंती व्यवस्था से लाचार गरीब की दुविधाएं एक साथ कठपुतली की तरह नृत्य करती हैं। वर्तमान से बात करने और भविष्य की राह समझने के लिए देथा भूत को खड़ा कर देते हैं। देथा की खासियत है कि वे लोक को रुमानियत में नहीं ले जाते हैं। लोक-जीवन के अंतर्विरोधों की पहचान कर साहित्यक सुर-लय-ताल से वह एक आधुनिक संगीत रचते हैं। उनकी रचनाओं की विद्रोहिणी स्त्रियां चकित करती हैं। इन स्त्रियों के लिए प्रेम व्यवस्था के विरुद्ध खड़े होने की ताकत लाता है। दस नवंबर 2013 को उनका निधन हो गया।

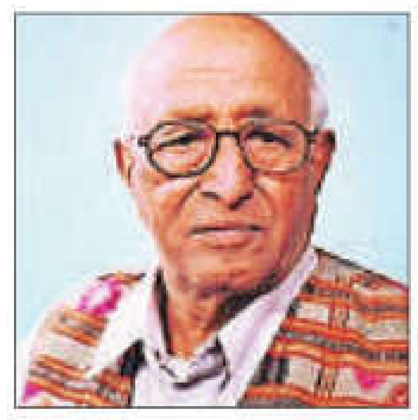

विजयदान देथा

संदीप बनेगा दीपू

बाल कथा

भगवती प्रसाद द्विवेदी

हाई स्कूल की परीक्षा पास थी। दीपू परीक्षा की तैयारी में रात का भोजन तक नहीं करता, सिर्फ एक गिलास गरम दूध पीता था, क्योंकि खाने के बाद बैठकर पढ़ना मुश्किल होता और नींद भी आने लगती। दीपू के पिताजी एक निर्धन किसान थे। जब पिताजी, दीपू के लिए किताबें नहीं खरीद सके थे तो अध्यापकों ने ही उसकी प्रतिभा को देखते हुए स्कूल के पुस्तकालय से पुस्तकों की व्यवस्था कर दी थी। विद्यालय को उससे ढेर सारी आशाएं थीं।

दीपू का पड़ोसी संदीप भी उसी कक्षा का विद्यार्थी था। उसके पिता बड़े व्यापारी थे। मां-पिता के आवश्यकता से अधिक लाड़-प्यार ने उसे भटका दिया था। घर से स्कूल के लिए वह निकलता तो जरूर, पर कभी सिनेमा देखने चला जाता, तो कभी दोस्तों के साथ सैर-सपाटे के लिए। जब संदीप, दीपू को पढ़ते हुए देखता तो मुंह बिचकाकर चिढ़ाता हुआ कहता, 'ऐ किताबी कीड़े! तिलचट्टे-सा किताबें चाटते रहो, रट्टू तोते की तरह रटते रहो और लद्दू गधे की भांति रटे हुए अभ्यास दिमाग में लादकर ढोते रहो। कहीं ऐसा न हो कि रटते-रटते तुम पागल हो जाओ और तुम्हें लेकर हमें रांची या आगरे की सैर करनी पड़े!' दीपू बुरा मानने के बजाय बस हंस कर टाल देता। संदीप व्यंग्य-बाण चलाते हुए आगे बढ़ जाता था। आखिर परीक्षा का दिन भी आ ही धमका। सभी लड़के कापियां लिखते चले जा रहे थे। दीपू ने तो दो और कापियां ले ली थीं। संदीप की कलम दांतों के बीच दबी हुई थी। तभी अध्यापक ने मुस्कुराते हुए व्यंग्य किया था, 'अपनी पतंगबाजी और सैर-सपाटे वाले संस्मरण ही क्यों नहीं लिख देते? और नहीं, तो फिल्मों से ही कुछ...।'

संदीप का चेहरा गुस्से से तमतमा गया था। मगर वह मन मसोसकर रह गया था। सभी विषयों की परीक्षा खत्म होने के बाद संदीप ने अपने पिता से ढेर सारे रुपए लिए और कापियों का पता लगाकर परीक्षकों के पास नंबर बढ़वाने के लिए निकल पड़ा। खूब पापड़ बेलने पड़े उसे। मगर मरता क्या न करता!

एक माह बाद जब वह वापस लौटा तो दीपू ने जिज्ञासावश पूछा था, 'क्यों संदीप, काम हो गया?' 'क्यों नहीं होगा? जेब में माल है, तो कमाल-ही-कमाल है!' संदीप ने मुंह चिढ़ाकर जवाब दिया था, 'चाहे लाख खून-पसीना बहाया है तुमने, मगर अच्छे अंक मुझे ही मिलेंगे, समझे?' और वह कुलांचता हुआ अपने घर की ओर नौ-दो-ग्यारह हो गया था।

परीक्षा-परिणाम घोषित होने के दिन दीपू और संदीप एक साथ ही घर से निकले थे। अभी वे चौराहे तक पहुंचे ही थे कि कई लड़के दीपू को बधाइयां देने लगे। 'अरे भई! तुम लोगों ने परिणाम भी देखा है या यों ही बधाई दिए जा रहे हो?' संदीप ने कुटिल मुस्कान बिखेरते हुए कहा। 'बेटा दीपू!' अचानक प्रिंसिपल साहब आ धमके और उन्होंने दीपू को गले से लगा लिया, 'शाबाश बेटे! तुमने हमारे विद्यालय का नाम रोशन कर दिया। पूरे प्रांत में प्रथम आए हो तुम!' 'प्रणाम सर! सब आपका स्नेह और आशीर्वाद है, सर!' दीपू ने उनके पैरों की ओर झुकते हुए कहा। संदीप मुंह लटकाए चुपचाप खड़ा रहा। उसे देख कर भी सबने अनदेखा कर दिया। सभी दीपू के इर्द-गिर्द ही जमा होते जा रहे थे। संदीप ईर्ष्या की आग में जल उठा। तभी कई फोटोग्राफर दौड़े हुए आए। फिर क्या था! दीपू की तस्वीरें फटाफट विभिन्न कोणों से खींची जाने लगीं। पत्रकार इंटरव्यू लेने लगे। थोड़ी देर में ही एक कार आई और प्रिंसिपल साहब, दीपू को साथ लेकर उसमें जा बैठे। कार धूल उड़ाती हुई विद्यालय की ओर चल दी। संदीप बस टुकुर-टुकुर ताकता रहा। उसे अपने पिता की दौलत, इज्जत, रुतबा और लाड़-प्यार सभी बौने लगने लगे। तभी गणित के शिक्षक ने कहा, 'संदीप, तुम तो इस साल लटक गए!' संदीप को लगा, जैसे उसके गाल पर किसी ने एक जोरदार तमाचा जड़ दिया हो। तिलमिलाकर रह गया वह। 'सर! सभी परीक्षकों ने मुझे धोखा दिया है। रुपए भी ले लिए और नंबर भी नहीं बढ़ाया।' संदीप रुआंसा होकर बोला। 'नहीं संदीप! तुम्हें किसी ने धोखा नहीं दिया है। बबूल बोकर आम के फल की आशा रखना महज मूर्खता ही तो है। तुमने खुद अपने आपको धोखा दिया है।' 'सर! आपने ठीक कहा। अब तक अपने पैरों पर मैं स्वयं कुल्हाड़ी मारता आ रहा हूं।' संदीप ने पूछा, 'सर, क्या मैं दीपू नहीं बन सकता?'

> **दीपू का पड़ोसी संदीप भी उसी कक्षा का विद्यार्थी था। उसके पिता बड़े व्यापारी थे। मां-पिता के आवश्यकता से अधिक लाड़-प्यार ने उसे भटका दिया था। घर से स्कूल के लिए वह निकलता तो जरूर, पर कभी सिनेमा देखने चला जाता, तो कभी दोस्तों के साथ सैर-सपाटे के लिए। दीपू को पढ़ते हुए देखता तो मुंह बिचकाकर चिढ़ाता।**

'दीपू? मगर दीपू तो एक निहायत गरीब किसान का बेटा है। तुम तो उसकी खिल्ली उड़ाया करते थे न! मुझे मालूम है कि तुमने उसे कई दफा पीटा भी था। फिर भी तुम...?' 'अपनी उन गलतियों और शैतानियों के लिए मैं बहुत शर्मिंदा हूं सर। आज मैंने देख लिया कि असली बड़प्पन और प्रतिष्ठा धन-दौलत के झूठे अहंकार में नहीं, वरन अपनी प्रतिभा को निखारने में है। मैं भी दीपू जैसा प्रतिभाशाली बनना चाहता हूं।' संदीप ने अपने मन की असलियत जाहिर की।

'बस, आज से ही अगले साल की तैयारी में जुट जाओ। हम सभी तुम्हारी मदद करेंगे। दीपू का भी तुम्हें हर संभव सहयोग मिलेगा। यह नाकामयाबी तुमको बहुत बड़ी कामयाबी दिलाएगी। सफलता पाने के लिए सिर्फ आत्मविश्वास, कड़ी मेहनत और लगन होनी चाहिए। एक बात और, अध्यापकों को सम्मान देना सीखो। उन्हें बदनाम करके तुम कुछ भी हासिल नहीं कर सकते।' अध्यापक ने समझाया। 'यह सबक मैं हरदम याद रखूंगा सर!' संदीप टीचर के पैरों की ओर झुका, मगर उन्होंने उसे गले लगा लिया।

स्त्री, छुट्टी और निलंबन

जनसत्ता सरोकार

पुलिस...इस शब्द से ही शक्ति का बोध होता है। पुलिस मतलब रौब। दफ्तर, सड़क, घर हर जगह। अगर पुलिस के साथ एक और शब्द महिला जोड़ दें तो क्या होगा? महिला जोड़ने के बाद भी क्या इस शब्द की शक्ति बरकरार रहेगी। इसी का जवाब देती है बबीता सिंह उर्फ बेबी। ओटीटी मंच 'प्राइम' पर दो घंटे 11 मिनट की फिल्म 'बबीता सिंह रिपोर्टिंग' तथ्यात्मक रूप से एक अपराध रहस्य कथा है।

एक अपराध की गुत्थी सुलझाने में बेबी बहुत सहज और सरल तरीके से पितृसत्ता की गुत्थी सुलझाती है। पिता की मौत के बाद अनुकंपा के आधार पर बबीता सिंह एसआइ बनी है। पुलिस थाने में एक महिला पुलिस और पुरुष पुलिस के रुतबे का अंतर दिखता है। बेबी को थाने के बाद घर लौट कर पति के लिए खाना भी बनाना होता है, साथ ही वीडियो काल पर सास और ननद के ताने भी सुनने पड़ते हैं कि वह ससुराल के लिए वक्त नहीं निकाल पाती है। निर्देशक ने बेबी के इस संघर्ष को उतने ही सहज तरीके से दर्शाया है, जितनी सहजता से आम महिलाएं कार्यस्थल से लेकर घर के कर्तव्यों में सामंजस्य बिठाती हैं।

मार्गदर्शन

बेबी को पुलिस की नौकरी अपने पिता की जगह पर मिली है। उसमें पुलिस के काम को लेकर जज्बा है। वह 'फील्ड ड्यूटी चाहती है। बेबी अपने पति को गर्व से बताती है कि उसकी तैनाती 'फील्ड' में हो गई है तो उसे बधाई के बजाय ताना मिलता है-तब तो और भी छुट्टी नहीं मिलेगी। तुम्हारी स्कूल की नौकरी ही सही थी।

पुलिस-सेवा जैसे मुश्किल क्षेत्र में पति से लेकर सास और ननद की ख्वाहिश बेबी से यही है कि वह घर को ज्यादा से ज्यादा समय दे। बेबी अपने घरवालों को खुश करना चाहती है और इस तनाव में वह निलंबित होने का रास्ता भी चुन लेती है। बेबी का वरिष्ठ उसके सामने प्रस्ताव रखता है कि अगर उसकी एक गलती का दोष वह अपने ऊपर ले ले तो उसे कुछ समय के लिए निलंबित कर दिया जाएगा। गलती छोटी ही है तो विभागीय कार्रवाई पूरी होने के बाद उसकी फिर से बहाली हो जाएगी। जिस समाज में अपनी नौकरी से निलंबित होना मर्दों के लिए अन्य नुकसान से ज्यादा साख की बात होती है वहीं बेबी ससुराल में अच्छी बहू की साख पाने के लिए वह गलती अपने ऊपर लेती है जो उसने की ही नहीं। वह निलंबन से मिली 'छुट्टी' का इस्तेमाल अपने ससुराल वालों को खुश करने के लिए करना चाहती है।

बेबी के बचपन के दोस्त की हत्या हो जाती है और उससे उम्मीद की जाती है कि वह इन पचड़ों में पड़ने के बचाय अपनी ससुराल पर ध्यान दे। बेबी अपने अस्तित्व को लेकर सहज है तो वह अपने दिल की सुनती है। वह दोस्त की हत्या की गुत्थी सुलझाती है। यहां पर दो पुलिस हैं। एक पुलिस बेबी की दोस्त का पति है जो घर आते ही पत्नी पर रौब झाड़ता है। दूसरी पुलिस बेबी है, जो न तो सड़क और न अपने घर पर रौब झाड़ सकती है। बेबी अपनी काबिलियत साबित कर नौकरी वापस पाती है। छुट्टी के लिए निलंबित होने वाली बेबी महिलाओं की विलंबित स्थिति की प्रतीक है।

झूठ बोलने पर लंबी हो जानेवाली नाक

अमर किरदार

जनसत्ता सरोकार

अगर झूठ हमारे चेहरे पर दिखाई देने लगे तो क्या हम उतने ही बेफिक्र होकर झूठ बोल पाएंगे? साहित्य की दुनिया का एक बाल किरदार ऐसा है जो विश्व साहित्य का प्रसिद्ध प्रतीक बन चुका है। पिनोकियो जैसे ही झूठ बोलता है उसकी नाक लंबी हो जाती है। पिनोकियो को समझने से पहले उसके पिता जेपेट्टो को समझना होगा। जेपेट्टो ने उसे लकड़ी से बनाया है, लेकिन वह पिनोकियो को कठपुतली नहीं बल्कि अपनी संतान मानता है।

कार्लो कोलोडी का 'द एडवेंचर्स आफ पिनोकियो' मूल उपन्यास के रूप में साल 1881 से धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ और साल 1883 में पुस्तक के रूप में आया। कोलोडी ने पिनोकियो को एक शरारती बच्चे के किरदार के रूप में गढ़ा है। बच्चे मूलतः अवज्ञाकारी ही होते हैं। उन्हें जो चीज छूने से मना किया जाए उसे छुएंगे, जिधर जाने से मना किया जाएगा उधर भागेंगे। बच्चों का अनुभव जितना कम होता है, उनमें खौफ भी उतना कम होता है। किसी भी मनुष्य का बचपन उसका सबसे बेचैन, उत्सुक और अपरिपक्व हिस्सा होता है। वह अपनी इच्छा के सामने किसी नियम या बंधन को नहीं स्वीकार करता है। जपेट्टो जैसे-जैसे पिनोकियो के शरीर का अंग बनाना शुरू करता है, उसमें वैसे-वैसे विद्रोह होना शुरू हो जाता है। मुंह बनते ही बोलता है, पैर बनते ही भागता है। वह अपने पिता की बात नहीं मानता है। स्कूल जाने के बजाय किसी रोमांचक काम में जुट जाता है। पिनोकियो में वह सब कुछ है जो एक आदर्श बच्चे में नहीं होना चाहिए। वह झूठ बोलता है, लालची है, आसानी से दूसरों की बातों में आ जाता है। अपनी गलतियों को जानबूझ कर दोहराता है।

> **पिनोकियो मेहनत, पढ़ाई और जिम्मेदारियों से दूर भागते हुए सिर्फ मस्ती करते हुए जीना चाहता है। उसे कोई किसी चीज का लालच देता है तो वह उसके पीछे चल देता है। उसके ऊपर एकमात्र अंकुश उसकी नाक ही है।**

कोलोडी ने पिनोकियो को एक जटिल दुनिया में रखा है। कठपुतलियों के रंगमंच के बीच ठग के रूप में लोमड़ी और बिल्ली है। बोलने वाला झिंगुर, नीली परी, जेल और अदालत के बीच 'डाग फिश' है।

पिनोकियो मेहनत, पढ़ाई और जिम्मेदारियों से दूर भागते हुए सिर्फ मस्ती करते हुए जीना चाहता है। वह चाहता है कि दुनिया उसकी इच्छा के अनुसार चले। वह स्कूल नहीं जाना चाहता है। उसे कोई किसी चीज का लालच देता है तो वह उसके पीछे चल देता है। इन सभी मनमानियों के बीच उसके ऊपर एकमात्र अंकुश उसकी नाक ही है। झूठ बोलते ही उसकी नाक लंबी हो जाती है। अपनी इसी नाक की वजह से वह झूठ बोलना छोड़ता है। जब उसे पता चलता है कि पिता जेपेट्टो ने उसकी किताबें खरीदने के लिए अपना कोट बेच दिया था तो वह भावुक हो जाता है। इसके बाद वह अपने साथ पिता की इच्छाओं का भी ध्यान रखने लगता है। पिनोकियो खुद को एक जिद्दी और जुनूनी कठपुतली मानता है। वह संदेश देता है कि गलती करना चरित्र की कमजोरी है, लेकिन अपनी गलती को पहचान लेना चरित्र की ताकत है। पिनोकियो आज उन सभी बच्चों की ताकत है जो खुद के अनुभव से सीखते हैं। गलतियां जीवन की प्रयोगशाला का अहम हिस्सा हैं।

इंडियन एक्सप्रेस समूह
जनसत्ता सरोकार
विविध
चार
जनसत्ता | 6 सितंबर, 2026

चुटकी भर अजवाइन व्याधियों से छुटकारा

भारतीय परिवारों की रसोई में एक मसाला ऐसा भी है जो मूल रूप से प्राकृतिक औषधि है। इसे अजवाइन के नाम से हम सभी जानते हैं। यह खाने को स्वादिष्ट तो बनाता ही है, सेहत के लिए भी अच्छा माना जाता है। खास बात यह कि स्वास्थ्य संबंधी कई परेशानियों से निजात दिला देता है। यही वजह है कि अजवाइन को देसी नुस्खे के तौर पर हमेशा आजमाया जाता रहा है। इसमें फास्फोरस, कैल्शियम और आयरन जैसे तत्त्व पाए जाने से इसका विशेष महत्त्व है। वहीं इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने की शक्ति भी है। यह इतना प्रभावी है कि यह किसी भी प्रकार के अन्न को पचा देता है। इसे खाने के अनेक फायदे हैं। यही वजह है कि सब्जियां बनाते समय या नमकीन और परांठे या फिर कचौरी बनाते समय अजवाइन इसलिए इनमें डाला जाता है ताकि ये सुपाच्य बनें।

बदहजमी करे दूर

अजवाइन वात रोग को दूर करने में कारगर है। यह पाचन संबंधी सभी जटिलताओं को बड़ी सहजता से दूर कर देता है। इसीलिए इसे बेहतरीन पाचक माना गया है। चुटकी भर अजवाइन फांकने से पेट संबंधी कई परेशानियां दूर हो जाती हैं। इसमें मौजूद 'थाइमोल' पाचक रसों को बढ़ाता है, जिससे खाना जल्दी पचता है। यह गैस, बदहजमी और पेट दर्द से तुरंत राहत देता है। अगर किसी को कब्ज हो, तो उसे रात में सोने से पहले अजवाइन का सेवन करना चाहिए। पेट में दर्द हो, तो इसे दूर करने का एक आसान-सा नुस्खा है। चुटकी भर अजवाइन के साथ थोड़ा-सा नमक मिला कर सेवन करें। कुछ देर में आराम मिलने लगेगा। अजवाइन अपने इसी गुण के कारण अपच संबंधी समस्याओं से छुटकारा दिलाता है।

बचाए संक्रमण से

अजवाइन केवल पेट संबंधी बीमारियां ही दूर नहीं करता। अगर किसी का वजन अधिक है और वह मोटापे का शिकार है, तो उसे एक बार अजवाइन पानी जरूर आजमाना चाहिए। इसका एक आसान नुस्खा है। दो गिलास पानी गर्म करें और उसमें एक चम्मच अजवाइन डाल कर उबाल लें। फिर इसे छान कर गुनगुना होने के लिए रख दें। फिर इसे पियें। यह वजन भी घटाता है और पेट भी दुरुस्त रखता है। अजवाइन गर्म कर इसे पोटली में बांध लें फिर इससे पेट की सिंकाई करें। इससे दर्द में राहत मिलती है। अजवाइन की एक खास बात यह भी है कि यह रोग प्रतिरोधक का भी काम करता है। इसलिए इसे किसी न किसी रूप में अवश्य उपयोग करना चाहिए। यह संक्रमण से भी बचाती है। बारिश के मौसम में संक्रमण बढ़ जाता है। इसे ध्यान में रखते हुए अजवाइन की चाय पी जा सकती है। यह नुस्खा भी बेहद आसान है। एक बड़े कप में पानी लें और उसमें एक छोटी चम्मच अजवाइन और चुटकी भर हल्दी डाल कर उबालें। स्वाद के लिए जरा सी मिसरी मिला लें। फिर इसे छान कर चाय की तरह लें।

सर्दी-खांसी में राहत

अजवाइन छाती में जमा कफ को बाहर कर देता है। दरअसल, अजवाइन में मौजूद 'थाइमोल' बलगम को

नुस्खे

पतला करता है, जिससे कफ आसानी से बाहर निकल जाता है। इससे सर्दी-खांसी से राहत मिलती है। इसका एक सहज नुस्खा है। अजवाइन को भून लें और इसे सूंघें। इससे कफ गल जाता है। एक और नुस्खा है। अजवाइन को तवे पर गर्म करें। फिर इसे सूती कपड़े में बांधकर छाती और गले की सिंकाई करें। इससे भी आराम मिलता है। एक चम्मच अजवाइन को थोड़े से गुड़ के साथ मिला कर हल्का गर्म कर खाने से गले की जकड़न कम होती है।

किताबें मिलीं

सामूहिक नेतृत्व का शासन-दर्शन

शी जिनपिंग की ग्रंथावली 'चीन की शासन-प्रणाली' (पहला भाग) सितंबर, 2014 में प्रकाशित हुई थी। इसके प्रकाशन के बाद उसे चीनी, अंग्रेजी, फ्रांसीसी, रूसी, अरबी, स्पेनिश, पुर्तगाली, जर्मन और जापानी जैसी अनेक विदेशी भाषाओं में अनूदित तथा देश-विदेश में जारी किया गया है। उसकी व्यापक सराहना भी हुई है। दरअसल, चीन के मौजूदा शासन-प्रणाली और उसके विकास-क्रम को समझने को लेकर समूचे विश्व में एक खास जिज्ञासा पाई जाती है, इसलिए इस किताब की अहमियत बढ़ जाती है। गौरतलब है कि शी जिनपिंग के नेतृत्व में चीन में सुधार और खुलेपन तथा आधुनिकीकरण के एक नए अभियान की शुरुआत की गई है और देश चीनी विशेषता वाले समाजवाद के नए भविष्य के लिए भरसक प्रयास कर रहा है। इस लिहाज से देखें तो इस पुस्तक ने नए युग में चीनी विशेषता वाली समाजवादी विचारधारा के बारे में शी जिनपिंग के सिद्धांतों का अध्ययन करने तथा आम लोगों को उनका सार समझने में काफी अहम भूमिका निभाई है। साथ ही इस पुस्तक को समकालीन चीन और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को जानने-समझने के लिए महत्त्वपूर्ण राजनीतिक साहित्य के तौर दर्ज किया गया है। पुस्तक को इस रूप में सामने रखा गया है, ताकि नए युग में चीनी विशेषता वाले समाजवाद के बारे में शी जिनपिंग की विचारधारा के सारभूत तत्त्वों एवं समृद्ध विषयों के अध्ययन में महारत हासिल करने में लोगों को मदद मिल सके।

आज चीन पूरे विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। सारी दुनिया यह जानना चाहती है कि चीन में किस तरह के परिवर्तन हो रहे हैं और दुनिया के बाकी देशों पर उनका क्या प्रभाव पड़ेगा। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय कमेटी के महासचिव के रूप में और चीन लोक गणराज्य के राष्ट्रपति के रूप में शी जिनपिंग ने चीन शासन प्रणाली जैसे विभिन्न विषयों पर अनेक व्याख्यान दिए हैं, जिनमें आज के बदलते समय में पार्टी और देश के सामने मौजूद सिलसिलेवार सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक प्रश्नों पर अपने विचार, दृष्टिकोण एवं निर्णय प्रस्तुत किए हैं। उनके इन व्याख्यानों में नए केंद्रीय सामूहिक नेतृत्व का शासन-दर्शन मौजूद है। शी जिनपिंग को नए युग में चीनी विशेषता वाले समाजवाद की विचारधारा का मुख्य प्रवर्तक माना जाता है। चीन के बारे में निरंतर बढ़ती अंतरराष्ट्रीय दिलचस्पी को देखते हुए तथा दुनिया के अन्य देशों को चीन के शासन-दर्शन और उसकी घरेलू एवं विदेश नीतियों को समझने में सहायता देने के लिए राज्य-परिषद के सूचना कार्यालय, चीनी कम्युनिस्ट के साहित्य अनुसंधान कार्यालय तथा चीनी अंतरराष्ट्रीय प्रकाशन समूह के परस्पर सहयोग के फलस्वरूप 'चीन की शासन प्रणाली' पुस्तक तैयार की गई। इस किताब में 15 नवंबर 2012 से 13 जून 2014 के बीच शी जिनपिंग की मुख्य रचनाओं को संकलित किया गया है। इसमें उनके व्याख्यानों, वार्ताओं, साक्षात्कारों, निर्देशों और पत्राचारों को शामिल किया गया है। इस पुस्तक में उनकी 79 रचनाओं को अठारह अध्यायों में विभाजित किया गया है। जरूरत के मुताबिक संदर्भ सामग्री को भी जोड़ दिया गया है। इसका उद्देश्य पाठकों को चीन की सामाजिक व्यवस्था, इतिहास और संस्कृति से परिचित कराना है।

शी चिनपिंङ : चीन की शासन प्रणाली भाग-1, वाणी प्रकाशन, 4695, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली, 699 रु

सरलता से जटिलता के स्तर

हिंदुस्तानी जबान में 'भक्त' कहानी इसी संग्रह 'जूनिपर' में है। हंसा दीप की इस कहानी ने इक्कीसवीं सदी के भक्त के दृष्टिकोण को बदल दिया है, जहां वह वैज्ञानिक जादू से अभिभूत है, जो मंदिर के प्रवेश द्वार से लेकर संगमरमर के सिंहासनों पर विराजमान देव-देवियों की जादुई मूर्तियों तक, सबकुछ नियंत्रित करता है, दमकाता है। चमकदार वस्त्र, रंग-बिरंगे बिजली के बल्बों के प्रभामंडल अपना जादू बिखेरते हैं। इसके अलावा वालीबाल के खेल से जुड़ी कहानी 'बेंच' खेल के बारे में बहुत कुछ बता जाती है और पात्र की जिंदगी से जुड़ी घटनाएं भी फिल्म के दृश्यों की भांति पाठक की कल्पना में चित्रित होती आगे बढ़ती रहती है। 'बेंच' पर बैठे-बैठे पात्र की अपनी पहली मुलाकात से लेकर उसकी मौत तक और पौत्री तूलि के वालीबाल टीम में खिलाड़ी के चयन तक, जिंदगी के कई अध्यायों पर लेखिका ने बड़ी

संजीदगी से प्रकाश डाला है। पुस्तक में कहानी 'आग' अपने बाह्य परिदृश्य में जितनी सरल प्रतीत होती है, अपनी आंतरिक अर्थ-संरचना में उतनी ही जटिल, बहुस्तरीय और मनोवैज्ञानिक रूप से तीव्र है। यहां 'आग' एक भौतिक घटना से कहीं अधिक एक अस्तित्वगत संकट का प्रतीक बन कर उभरती है। यह मनुष्य के भीतर जलती उस अग्नि का रूपक है, जो परिस्थितियों, संबंधों और समय के दबाव में धीरे-धीरे धधकती हुई आखिर उसकी समूची सत्ता को घेर लेती है। इसी प्रकार कहानी 'शोक उत्सव' इतनी रोचक और जिज्ञासा से भरी हुई है कि पाठक इसे पूरी पढ़े बिना नहीं छोड़ सकते। इसमें लेखिका का दार्शनिक चिंतन भी कई प्रसंगों में परिलक्षित हुआ है। दरअसल यहीं आकर किसी रचना का आधार खड़ा होता है। इसलिए इसमें पाठकों की रुचि के कई स्तर हो सकते हैं।

जूनिपरः डा हंसा दीप, शिवना प्रकाशन, पीसी लैब सम्राट कांप्लेक्स बेसमेंट, बस स्टैंड, सीहोर (मध्य प्रदेश), 450 रु

अपनी जरूरतों का भी रखें खयाल

परिवार, रिश्तेदार, मित्र और समाज मनुष्य के जीवन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं। पारिवारिक जिम्मेदारियों के अलावा दूसरों की मदद करना और उनकी जरूरतों का ध्यान रखना हमारी सामाजिक परंपराओं में शामिल है। मगर दूसरों के लिए जीते-जीते कई बार हम अपनी जरूरतों, इच्छाओं और भावनाओं को नजरअंदाज करने लगते हैं। धीरे-धीरे यह आदत हमारे जीवन में असंतुलन पैदा कर देती है। इसलिए दूसरों की परवाह करने के साथ-साथ अपनी जरूरतों पर भी ध्यान देना जरूरी है। इसे स्वार्थी होना नहीं, बल्कि आत्म-देखभाल कहा जाता है। अपनी भावनाओं को समझने और तनाव को कम करने के लिए खुद को समय देना जरूरी है।

जिम्मेदारियों की सीमा

समाज में त्याग और समर्पण को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। मगर आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में हर कोई इतना व्यस्त रहने लगा है कि वह खुद के लिए समय ही नहीं निकाल पाता है। माता-पिता बच्चों के लिए अपनी इच्छाओं को छोड़ देते हैं, कर्मचारी संस्थान की जिम्मेदारियों में अपनी निजी जिंदगी को पीछे कर देते हैं और कई लोग परिवार की खुशी के लिए अपनी पसंद तक भूल जाते हैं। यह भावना निश्चित रूप से सराहनीय है, लेकिन इसकी भी एक सीमा होनी चाहिए। यदि कोई व्यक्ति हर समय दूसरों की अपेक्षाओं को पूरा करने में लगा रहे और स्वयं की आवश्यकताओं को लगातार टालता रहे, तो उसके भीतर असंतोष, तनाव और थकान पैदा होना स्वाभाविक है। इसलिए खुद पर ध्यान देना भी जरूरी है।

जीवन शैली

अहमियत का दायरा

इस बात को समझना आवश्यक है कि अपनी जरूरतों पर ध्यान देने का अर्थ स्वार्थी होना नहीं है। स्वार्थ वह है, जिसमें व्यक्ति केवल अपने हित के बारे में सोचता है और दूसरों की परवाह नहीं करता। इसके विपरीत, आत्म-देखभाल का अर्थ है अपनी शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक जरूरतों को समझना। पर्याप्त नींद लेना, समय पर भोजन करना, स्वास्थ्य का ध्यान रखना, अपनी रुचियों के लिए समय निकालना और आराम करना भी जीवन की आवश्यकताएं हैं। यह नहीं भूलना चाहिए कि जब शरीर और मन स्वस्थ रहेगा, तभी तक हम लंबे समय तक अपनी जिम्मेदारियों को सही तरीके से निभा पाएंगे और दूसरों की मदद के लिए भी उपलब्ध रहेंगे। अपनी जरूरतों को समझने के लिए सबसे पहले यह तय करना जरूरी है कि हमारे लिए वास्तव में महत्त्वपूर्ण क्या है।

अपनी जरूरतों को समझने के लिए सबसे पहले यह तय करना जरूरी है कि हमारे लिए वास्तव में महत्त्वपूर्ण क्या है। हर इच्छा जरूरत नहीं होती और हर सामाजिक अपेक्षा को पूरा करना भी आवश्यक नहीं होता।

प्राथमिकताओं की पहचान

तकनीक के इस दौर में सोशल मीडिया ने भी दूसरों के जीवन से अपनी तुलना करने की प्रवृत्ति बढ़ा दी है। इस दौड़ में अपनी वास्तविक जरूरतों और प्राथमिकताओं को पहचानना कठिन हो जाता है। हर इच्छा जरूरत नहीं होती और हर सामाजिक अपेक्षा को पूरा करना भी आवश्यक नहीं होता। यदि किसी काम को करने से हमारी सेहत, समय या मानसिक शांति लगातार प्रभावित हो रही है, तो उस पर पुनर्विचार करने में कोई बुराई नहीं है। जीवन का उद्देश्य केवल जिम्मेदारियां निभाना नहीं, बल्कि जीवन को सार्थक और संतुलित बनाना भी है। दूसरों के लिए संवेदनशील होना जितना आवश्यक है, उतना ही खुद की जरूरतों पर ध्यान देना भी है। इसलिए अपनी प्राथमिकताओं में खुद को शामिल करना बहुत जरूरी है।

स्वाइन फ्लू का जोखिम सावधानी का तकाजा

भारत में स्वाइन फ्लू के मामले बढ़ना चिंता का विषय है। हालांकि यह नियंत्रण में है और इससे घबराने की जरूरत नहीं। वैसे भी इस समय इस रोग के विषाणु का नया स्वरूप सामने नहीं आया है। फिर भी नागरिकों को इस संक्रमण से बचने और इसके लिए उपाय करने के सुझाव दिए गए हैं। लोगों को एच1एन1 यानी स्वाइन फ्लू से सजग रहना इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि पिछले कुछ दिनों में फ्लू जैसे लक्षणों वाले मरीजों की संख्या बढ़ी है। ऐसे में उन लोगों को सतर्क रहने की जरूरत बताई जा रही है जो पहले से किसी रोग से ग्रस्त हैं। इसके अलावा बुजुर्गों और बच्चों पर विशेष ध्यान देने और देखभाल की आवश्यकता है।

सेहत

विषाणु की निगरानी

एच1एन1 दरअसल, एनफ्लुएंजा विषाणु का ही एक स्वरूप है। इसे ही स्वाइन फ्लू कहा जा रहा है। मगर कई चिकित्सक इसे एच1एन1 के मामले में सही नहीं बताते, क्योंकि एनफ्लुएंजा का विषाणु समय-समय पर अपना स्वरूप बदलता रहता है। इस विषाणु की पिछले एक साल से निगरानी की जा रही है। हालांकि स्वाइन फ्लू और मौसमी संक्रमण से संबंधित अन्य बुखार थोड़ी देखभाल और सामान्य उपचार के बाद ठीक हो जाते हैं। मगर जब लक्षणों में गंभीरता हो, तो मरीज को तुरंत चिकित्सक के पास ले जाना चाहिए। पांच साल से छोटे बच्चों और पैंसठ साल से अधिक उम्र के लोग ज्यादा जोखिम में होते हैं। वहीं कमजोर प्रतिरोधक क्षमता वाले, गर्भवती महिलाओं, मोटापे के शिकार लोगों, फेफड़े तथा गुर्दे के रोगियों के विशेष बचाव की जरूरत होती है।

लक्षणों का दायरा

स्वाइन फ्लू के मरीजों में लक्षणों को गंभीरता से लेना चाहिए। यह संक्रामक रोग है और इसकी चपेट में आने पर मरीज को सांस लेने में परेशानी होती है। सीने में दर्द होता है। बुखार बना रहता है। मरीज को कमजोरी महसूस होती है। फेफड़े में संक्रमण बढ़ जाता है। वहीं अगर बुखार तेज हो जाए, तो सचेत हो जाना चाहिए। लगातार सूखी खांसी, सिरदर्द और बदन दर्द भी लक्षण हैं। शरीर में पानी की कमी और आक्सीजन स्तर घटने से स्थिति बिगड़ जाती है। ऐसे लक्षण दिखाई दें, तो मरीज को तुरंत चिकित्सक के पास ले जाना चाहिए। हालांकि बारिश के दिनों में सर्दी-खांसी और बुखार आम है।

बचाव के रास्ते

दिल्ली सहित देश के अन्य हिस्सों में बढ़ते मामलों के बीच जरूरी है कि सभी नागरिक एहतियात बरतें। स्वाइन फ्लू का टीका उपलब्ध है, लेकिन चिकित्सक की सलाह के बाद ही इसे लगवाना चाहिए। इस रोग से बचाव के दूसरे आसान रास्ते भी हैं। स्वाइन फ्लू से पीड़ित व्यक्ति के छींकने और खांसने तथा बात करने के दौरान एकदम सामने रहने से बचना चाहिए। एक उचित दूरी बना कर रखें। जरूरत पड़ने पर रोगी और इसके आसपास रहने वाले लोगों को मास्क पहनना चाहिए। मरीज को भी दूसरों के संपर्क में आने से बचना चाहिए। खांसते और छींकते समय नाक और मुंह पर तौलिया एवं रूमाल अवश्य रखें। इससे विषाणुओं के हवा में फैलने की संभावना कम रहेगी। इन दिनों बाहर से आने पर खाना खाने से पहले हाथों को अच्छी तरह धो लें।

देखभाल जरूरी

स्वाइन फ्लू से पीड़ित मरीजों का विशेष ध्यान रखना चाहिए। उसके कमरे में साफ-सफाई के साथ हवा का उचित प्रवाह होना चाहिए। ध्यान रहे कि उसे उचित आराम के साथ पर्याप्त तरल पदार्थ दिया जाए। उपचार के दौरान मरीज को संतुलित आहार दें। भोजन में पत्तेदार हरी सब्जियां और फल शामिल करना चाहिए। अपने मन से कोई भी एंटीबायोटिक अथवा अन्य दवा न दें। उपचार के दौरान मरीज घर पर ही रहे। उसे भीड़भाड़ वाली जगहों पर नहीं जाने देना चाहिए। उपचार और आराम से वह धीरे-धीरे ठीक हो जाता है।

(यह लेख सिर्फ सामान्य जानकारी और जागरूकता के लिए है। उपचार या स्वास्थ्य संबंधी सलाह के लिए विशेषज्ञ की मदद लें।)

पौष्टिकता के साथ जायका बेहतरीन

रसोई

गोभी मटर मसाला

यह व्यंजन उत्तर भारत में काफी लोकप्रिय है। होटल, रेस्तरां और ढाबों पर यह अमूमन खाने को मिल जाता है। घरों में भी इसे खूब पसंद किया जाता है। इसे बनाने में ज्यादा समय नहीं लगता। विभिन्न मसालों के मिश्रण से इसका स्वाद लाजवाब होता है।

सामग्री

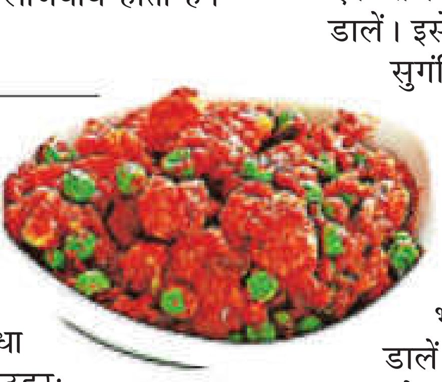

गोभीः 250 ग्राम, मटरः 100 ग्राम, जीराः एक चम्मच, लहसुनः पांच-छह कलियां, अदरकः एक इंच, हरी मिर्चः दो, हल्दीः आधा चम्मच, लाल मिर्च पाउडरः एक चम्मच, हींगः एक चुटकी, धनिया पाउडरः आधा चम्मच, गरम मसाला पाउडरः एक चम्मच, टमाटरः दो, नमक स्वादानुसार।

विधि

फूलगोभी को मध्यम आकार के टुकड़ों में काटें। इन्हें अच्छी तरह धो लें और फिर पानी में नमक डालकर हल्का सा उबालें। हरे मटर को भी धोकर अलग से रख लें। इसी बीच, अदरक-लहसुन का पेस्ट तैयार कर लें। साथ ही टमाटर और काजू को मिक्सी में थोड़े से पानी के साथ पीसकर पेस्ट बना लें। फिर एक कड़ाही में तेल गरम करके उसमें फूलगोभी के टुकडों और मटर को डालकर हल्का सा भूनें। अब उसी कड़ाही में फिर से तेल गरम करें और एक तेज पत्ता तथा आधा चम्मच शाही जीरा डालें। इसे धीमी आंच पर सुगंधित होने तक भूनें। इसके बाद कटे हुए प्याज डालें और सुनहरा होने तक भूनें। अब इसमें अदरक-लहसुन का पेस्ट डालें और कुछ सेकंड के लिए भूनें। फिर टमाटर-काजू का पेस्ट डालें और करीब एक मिनट तक पकाएं। इसके बाद धनिया पाउडर, जीरा पाउडर, लाल मिर्च पाउडर, गरम मसाला पाउडर और हल्दी डालें। इसे हल्का-सा भूनें और फिर दही तथा थोड़ा-सा पानी डालकर अच्छी तरह मिलाएं। अब भुनी हुई फूलगोभी, मटर और नमक डालें। इसे धीमी आंच पर 10-15 मिनट तक पकाएं। अंत में इसमें कसूरी मेथी, मलाई और बारीक कटा हुआ हरा धनिया डालें। इसे चपाती, ब्रेड या नान के साथ परोसा जा सकता

मेथी पूड़ी

वैसे तो सामान्य पूड़ी भी खाने में अच्छी लगती है, लेकिन इसे हरी मेथी और मसालों के मिश्रण से तैयार किया जाए, तो इसका स्वाद और भी मजेदार हो जाता है। इसे बनाने का तरीका थोड़ा अलग है और यह पौष्टिक भी होती है। इसका जायका अमूमन सभी को पसंद आता है।

सामग्री

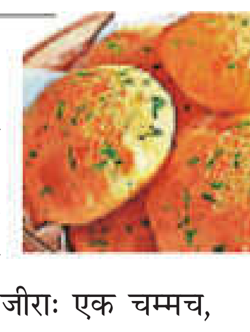

गेहूं का आटाः 200 ग्राम, बेसनः चार-पांच चम्मच, हरी मेथीः 50 ग्राम, लहसुनः पांच-छह कलियां, अदरकः एक इंच, हरी मिर्चः तीन, जीराः एक चम्मच, गरम मसाला पाउडरः आधा चम्मच, सौंफः एक चम्मच, काली मिर्च पाउडरः आधा चम्मच, नमक स्वादानुसार।

विधि

सबसे पहले हरी मेथी को पानी में अच्छी तरह धो लें और उसकी पत्तियों को डंठल से अलग कर दें। अब इसमें बारीक कटा हुआ हरा धनिया मिलाएं। इसके बाद लहसुन, अदरक, हरी मिर्च, जीरा, सौंफ को मिक्सर ग्राइंडर में डालें और थोड़ा पानी डालकर पेस्ट बना लें। इस पेस्ट को मेथी के मिश्रण में डालकर अच्छी तरह मिला लें। अब इसमें गेहूं का आटा तथा बेसन डालें। साथ ही गरम मसाला पाउडर, हल्का-सा नमक और काली मिर्च पाउडर भी मिलाएं। इसमें थोड़ा सा सरसों तेल डालकर सभी सामग्री को मिलाकर गूंथ लें। ध्यान रहे कि इसे गूंथते समय पानी उतना ही डालें कि यह न तो सूखा रहे और न ज्यादा गीला हो। अब इसे गीले कपड़े से ढककर आठ-दस मिनट के लिए रख दें। इसके बाद गूंथे हुए आटे की छोटी-छोटी लोइयां बना लें और इनके ऊपर तेल का लेप लगाएं। फिर एक कड़ाही में तेल गरम करें और आटे की लोइयों को बेलन की मदद से गोलाकार चपटा करके बारी-बारी से सुनहरा होने तक तेल में तलें। अब मसाला मेथी पूड़ियां बनकर तैयार हैं। इन्हें मनपसंद सब्जी और चटनी के साथ गरमागरम परोसा जा सकता है।